मिलने का पता :—

मुकन्दचन्द जशकरण

चिराडालिया।

मु० सरदारशहर (राजपुताना)

विषय-सूची

संख्या	विषय	पृष्ठांक

ढाल देशी गजल कव्वाली।

जिनेश्वर धर्म्म के वक्ता, सुणो यह प्रार्थना मेरी ॥ ए आंकड़ी ॥ आप हो मुक्ति के दाता, सदा सन्मार्ग के ज्ञाता। सर्व जीवों के हो त्राता, कटाते कर्म की बेड़ी ॥ जि० ॥ १ ॥ शरण जो आप के आता, वोही आनन्द को पाता। मेट संसार का खाता, चढ़ाते मोक्ष की पेड़ी ॥ २ ॥ जो धरता आप को दिल में, समरता नाम पल पल में। रुले ना वोह यह भव जल में, मिटे उसकी सकल फेरी ॥ ३ ॥ करें करजोड़ के अरजी, करो स्वीकार गणिवरजी। करावो पूर्ण कर मरजी, प्रभु एक मास चंदेरी ॥४॥ सूर्य्य शुभकरन तुम चाकर, शरण में हर्ष चित आकर। विनय संयुक्त गुण गाकर, बजावें हाजरी तेरी ॥ जिनेश्वर धर्म्म के वक्ता सुणो यह प्रार्थना मेरी ॥ ५ ॥

श्री आदिनाथ स्तुति।

समरो नित आदिनाथ अवतार। आनन्द करण हरण अघ रिपु कुं, तरण भवोदधि पार ॥ स० ॥ ए आंकड़ी ॥

आदि करण जिन मुनिवर तुम हो, जुगलिया धर्म निवार ॥ स० ॥ जन्मत वार सार त्रय जग की, लहत आगम अधिकार ॥ स० ॥ १ ॥ तुम गुन गान जान जिम बालक, चन्द विम्ब कर धार ॥ सु० ॥ धरत ध्यान अघ हरत पुराने, ज्युं उदय रवि अन्धकार ॥ स० ॥ २ ॥ समवशरण रचना मन मोहत सोहत जगत् मझार ॥ स० ॥ रूप अनुपम नयणे निरखै, धन धन ते अव-तार ॥ स० ॥ ३ ॥ नाम रूपी माला उर पहिरण, जेह पुन्य श्रेयकार ॥ स० ॥ तुम नामे मन वांछित पामै, युग वसु थी छुटकार ॥ स० ॥ ४ ॥ तुम सम नहीं कोई बीजो तारक, मारक विषय विकार ॥ स० ॥ खद्योत जोत रविवत् जाणे, क्षुद्र मति अविचार ॥ स० ॥ ५ ॥ अतिशय धारक तूं जश नामी, अशरण शरण दातार ॥ स० ॥ तुम गुण सिन्धू मुझ मति विन्दू कहत लहत किम पार ॥ स० ॥ ६ ॥ निधि मही कर वसु भाद्रव मासि कलिकत्ता क्षेन्द्र व्यापार ॥ स० ॥ नगराज धुर जिन गुन स्तुति, करी धर हर्ष अपार ॥ स० ॥ ७ ॥

॥ अथ अंजना सती को रास ॥

दोहा ।

अंजना मोटी सती, पाल्यो शील रसाल ।
अशुभ कर्म उदय हुवा, आयो अणहुंतो आल ॥
शील पाल्यो तिण किण विधे, किण विध आयो आल ।
हिवें धुरसूं उत्पति कहूं, सुणज्यो सुरत संभाल ॥१॥

॥ ढाल १ ली ॥

॥ कड़खानी—एदेशी ॥

महिंदपुरी जग जाणियो, राजा हो महिंद वसै तिण ठामक । तसु पटराणी छै रूवड़ी, मानवेगा राणी तेहनो नामक ॥ सौ पुत्र राणी तिण जनमिया, ते रूप में रूवड़ा छै अभिरामक । त्यांरे केड़े जाई एक बालिका, अञ्जना कुंवरी छै तेहनो नामक ॥ सती रे शिरोमणी अञ्जना ॥ १ ॥ मात पिता ने बह्वाली घणी, बंधव सगलां ने गमती अत्यन्तक । रूप में छै रलियामणी, नैण दीठां वणो हरष धरंतक ॥ सज्जन सगा ने सुहा-मणी, सखी सहेलियां में रही नित खेलक । विद्या

भणी सुख अति घणी, दिन दिन वधे जिम चंपक वेलक ॥ स० ॥ २ ॥ अञ्जना कुमरी मोटी हुई, चिंतवी ने राय चित्त मझारक। पछे वेग प्रधान तेड़ावियो, कहे अञ्जना वर तणो करो रे विचारक ॥ जब एक कहे रावण ने दीजिये एक कहे दीजे, मेघ कुमारक। ते पुत्र छे राजा रावण तणो, तिणरो जोवन रूप घणो श्रीकारक ॥ स० ॥ ३ ॥ जब एक कहे तुम सांभलो वरष अठारमें मेघकुमारक। चारित्र लेसी वैराग सूं, वरष छावीस में जासी मोक्ष मझारक ॥ तो कन्या ने सुख किहां थकी, सवलाई कर देखो मन में विचारक। मेघ कुमार ने द्यो मती, और विचारो कोई राज कुमारक ॥ स० ॥ ४ ॥ रतनपुरी तणो राजवी; राय प्रल्हाद विद्याधर तामक। तेहनो पुत्र अति दीपतो, पवनकुमार छे तेहनो नामक ॥ अञ्जना ने वर योग छे, ए राजा कियो वचन प्रमाणक। पीछे दूत मेल्यो तिण नगरी में, सगपण कीधो छे मोटे मडाणक ॥ स० ॥ ५ ॥ रूप ने गुण अञ्जना तणो, परगट हुवो छे लोक में तामक। ते पवन कुमार पिण सांभल्यो, जब प्रहस्त मन्त्री ने कहे छे आमक ॥ कहे आपा जावां रूप फेर ने, जोवा ने अञ्जना तणो रूप शिणगारक ॥ पीछे मतो करी दोनूं निसर्या, ते आय उभा महेल तले तिण वारक ॥ स०

॥ ६ ॥ हिवे पवनजी निरखि छै अञ्जना, प्रहस्त नीचौ चालो रह्यो दिष्टक। रूप में जाणे देवांगणां, वाणी बोले जाणे कोयल बाणक। चंपक वरण चतुर घणी, आंख्या जाणै मृगनैन समानक ॥ स० ॥ ७ ॥ अञ्जना बैठो सिंघासणे, दोनूं पासे अनेक सखियां तणा वृन्दक। वस्त्र आभूषण अंगे धस्था। शोभ रही जाणे पूनम चन्दक ॥ हिवे वसंत माला इम उच्चरे, बाई ने जोग जोड़ी मिली श्रोकारक। जेहवो पवनजी जाणिये; तेहवी पामी छै अञ्जना नारक ॥ स० ॥ ८ ॥ हिवे बीजी सखी इम उच्चरे, पहला तो वर मन चिन्तव्यो जेहक। तेहवा पवनजी वर नहीं, बरस अठारह में चारित्र लेंहक पांचू इन्द्री ने जीपतो, बरस छाबीस में पामसी मोक्षक ॥ तिण कारण वर वर्जियो, कन्या ने वर तणो जाणियो दोषक ॥ स० ॥ ९ ॥ हिवे अञ्जना सुण इम उच्चरे, बाई धन २ ते नर नों अवतारक। कर्म करणी करी काटने, वेगा हो जासी मुगति मझारक ॥ गुण गाई जे तिण पुरुष ना; पवनजी सुणी ने धस्यो अति द्वेषक। आतो रे नार कुलखणी, मनमांही उपनो क्रोध विशेषक ॥ स० ॥ १० ॥ हिवे पवनजी मन मांहि चिन्तवे आ रूप में रूवड़ी अत्यन्त बखाणक। मन मांहि मैली रे पापणी, चित्त चोखो नहीं एक ठिकाणक ॥ पुरुष

पराया सूं मन करे, तो हिवे करणो कौन उपायक।
जो छोड़ुं तो एहने वर घणा, परणी ने परहरूं ज्यूं
दुःख थायक ॥ स० ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥

इम चिन्तवे तिहां पवनजी, पाछा चाल्या ताम।
आया नगरी आपरी, भोगवे सुख अभिराम ॥ १२ ॥

॥ ढाल ॥

हिवे मात पिता अञ्जना तणा, लगन लिखाविया मोटे मंडाणक। विवाह करवा अञ्जना तणो, रतनपुरी वेग मेलिया जाणक॥ महोच्छव मांडिया अति घणो, वाज रह्या तिहां ढोल निशाणक। मंगल गावे छे गोरड़ी, उच्छव कर रह्या कोड़ कल्याणक ॥ स० ॥ १३ ॥ हिवे राय प्रह्लाद तेड़ाविया, जान में जावो वड़ा वड़ा राजानक॥ हय गय रथ सझिया घणा, नेहतणां स्वजन ने दिया घणो सनमानक॥ धन साथे दिया खरचवा, मोटे मण्डान लेई चाल्या जानक। सामन्त दिया साथे घणां, जोधा सुभट सैन्या सावधानक ॥ स० ॥ १४ ॥ हिवे वीन्द वणाव कियो घणो, गेहणां आभूषण पहरिया ताहिक। सखियां गावे रे सोहला, देवे आशीष केतुमती मातक॥ लंण उतारे रे वेनड़ी, रूप

देख मन हरषित थायक। जाचक बोले विरुदावली बहुविध, पवनजी परणवा जायक॥ स०॥ १५॥ सैन्या सिणगारी चतुरङ्गिणी, गाजेजी अम्बर बाजेजी तूरक। स्वजन सगा मिलिया घणां, जान चाले जाणे गङ्गा नों पूरक॥ वर विद्याधर दीपतो, शोभ रह्यो तिणरो वदन सनूरक। चिहुं दिश साथे सेवक घणां, हाथ जोड़ी रह्या ऊभा हजूरक॥ स०॥ १६॥ महिंदपुरी नेड़ा आविया, आई बधाई राजी हुवो रायक। दीधी बधा-मणी तेहने, हरषित हुई अञ्जना तणी मायक॥ आरती नों महोच्छव करे, महिन्द राजा मन हरष न मायक। स्वजन सगा मिलिया घणां। सैन्या लेई राजा साह-मोजी जायक॥ १७॥ महिन्द राजा साहमो आवियो, ढोल दमामा ने घूरे निशाणक। राजा हो राणी सहु मिल्या, व्यापियो तिमर ने आंथम्यो भाणक॥ सुसरो सामेले आवियो, पवनजी देखने आनन्द थायक। धवल मङ्गल गावे गोरड़ी, लोक अञ्जना नों वर जोयवा जायक॥ स०॥ १८॥ महिन्द राजा मोटा राजा भणी, अति घणो दियो आदर सनमानक। उच्छरंग मन मांहे अति घणो, भाव भगति सूं मिलियो राजानक॥ जान उतारी रे आण ने, आपिया भोजन विविध पकवानक। ऊपर सिखरण सांचवे, खादिम स्वादिम दिया घणां

मिष्टानक ॥ स० ॥ १९ ॥ हिवे पवनजी तोरण आविया, तो ही अञ्जना ऊपर घणो रे अभावक। नाम सुण्या ही राजी नहीं, सूल नहीं मन तेहनी चावक ॥ धवल मङ्गल गावे गोरड़ी, पूरण सासु करे बहु भांतक। पिण मन में न भावे पवन नें, थे तो परणे रे अञ्जना वालवा दाहक ॥ स० ॥ २० ॥ रूपा तणो रे मण्डप रच्यो, सोवन तणी मांडी तिहां वेहक। सोवन पाट मोत्यां जड़ो, अञ्जना ने पवनजी वैठा छे तेहक ॥ हथ लेवे हाथ मेल्यो तिहां, नयण निहाले छे अञ्जना नारक। पिण पवन ने सूल गमे नहीं, द्वेष जागे पहिली वात विचारक ॥ स० ॥ २१ ॥ हिवे पवनजी परण ने उतस्या कीधो पहरावणी अञ्जना नो तातक। गयवर आपिया अति घणां, ताजा तुरङ्ग दीधा विख्यातक। कनक रत्न बहु आपिया, आपी छे रूपा तणी बहु कोड़क। वसंत माला दासी आदि दे, पांच से दासियां सरीखी जोड़क ॥ स० ॥ २२ ॥ हिवे परणी ने रतनपुरी संचस्या, साहमो आयो तिहां प्रह्लाद रायक। अञ्जना मन हरषित थई, सासु सुसरा ना पूजिया पायक ॥ पांच सौ गांव राजा दिया, आप्या छे आभरण रतन बहु मोलक। आया छे वीन्द ने वीन्दणी, आया छे तिहां वाजते ढोलक ॥ स० ॥ २३ ॥

॥ दोहा ॥

हिवे कितोक काल गया पिछे, आयो भेटणो राय।
तिहां पवन रो द्वेष परगट हुवे, ते सुणज्यो चित्त लाय।

॥ ढाल ॥

पीहर थी आवी रे सुंखड़ी, वस्त्र आभरण आपिया तासक। वसन्तमाला ने देई करी, अञ्जना मेलिया पवन रे पासक॥ सुंखडी पवन खाधी नहीं, वस्त्र गहणा न पहरिया अङ्गक। अञ्जना सूं द्वेष आणने, वस्त्र गहणा दिया मातङ्गक॥ स०॥ २४॥ वसन्त माला विलखी थई, आय कही अंजना कने वातक। स्वामी रो आपां ऊपरे, हेत न दीसे कोई तिलमातक॥ अंजना आंख्यां आंसू भरे, मैं सूं चूकी छै भगति अनेकक। ये नर दीसे छै निरमला, आपणे दीसे छै कर्म विशेषक॥ स०॥ २५॥ हिवे अंजना बैठी रे मालिये, पवनजी तुरी खिलावण जायक। आवतां जावतां निरखती, तिम तिम मन में हरषित थायक। पवनजी कोपे रे परजले, निजर दीठां सूल न सुहायक। नारी निहाले छै मो भणी, गोखे आडि़ दीनी भींत चिणायक॥ स०॥ २६॥ पांच सौ गांव पोते किया, माता पिता कहे सांभलो पूतक। अजना सती रे सुलखणी,

वहू ने सूंपिये निज घर सूतक ॥ मोटा रे कुल तणी उपनी, राजा हो महिन्द्र तणी वहै लाजक । अंजना सूं आदर कीजिये, इम कहै केतुमती ने राय प्रह्लादक ॥ स० ॥ २७ ॥ वापरो ओणो पाछो मेलियो, ओणे आयो वले वड़ो वीरक । अंजना कहै नवी आवियै, मेल्या आभरण अद्भुत चीरक ॥ स्वामी रे मन मान्या नहीं, पीहर आय ने सूं करूं वातक । इम कही बंधव मोकल्यो, दुःख धरे घणो मायने तातक ॥ स० ॥ २८ ॥ इम वारे वरस वीच में गया, ए कथा ऊपरे ऐतोई संवन्धक । हिवे रावण ने वरुण कटकी थई, मांहोमांहि उपनो अति द्वेषक ॥ हय गय रथ सजिया घणां, पाला बखतर शोभे शरीरक । शूरां ने सुभट शिणगारियां, चालियो कटक वाजी रण भेरक ॥ स० ॥ २९ ॥ एक तेड़ो रतनपुरी आवियो, प्रह्लाद राय करे जावा ने साजक । पवनजी हाथ जोड़ी कहे, एतो छै पिताजी हम तणो काजक ॥ तुम घर बैठा लीला करो, पुत्र जाया नों एह प्रमाणक । इम कहिने आयुधशाला सचरा, हाथ में धनुष ने लीनो छै वाणक ॥ स० ॥ ३० ॥ पवनजी चाले रे कटक में, मन मांहे चिन्तवे अंजना नारक । दूर थकी पांय लागसां, भाव कुभाव देखा एक वारक ॥ वसन्तमाला माहरी बैनड़ी, दहीं

नों कचोलो तूं भरीने आणक । सुकन रुड़ा मनावस्यां मारग मांहि ऊभी रही आणक ॥ स० ॥ ३१ ॥ सुकन मिसि पिउ देखस्यां, नमण करी ने हूं लागसूं पायक । लोक सहु इम जाणसी, दही नों कचोलो देखसी तायक ॥ कटक जातां पिउ वांदस्यां, जाण से अंजना आदरी पवन कुमारक । जिहां लगे स्वामी आवे नहीं, तिहां लगे मन में करूं रे सन्तोषक ॥ स० ॥ ३२ ॥ हिवे गयंद बैसी दल संचरया, मात पिता ने नमावियो शीशक । सज्जन सहु रे सन्तोषिया, अंजना ऊपर अति घणी रीसक ॥ दूर थकी दृष्टि पड़ी, चतुर चितारा नों जोवो चितरामक । पूतली लिखी रंभा सारखी, एह चितारा ने देवो इनामक ॥ स० ॥ ३३ ॥ मन्त्री कहे नहीं पूतली, भींत ओटे ऊभी अंजना नारक । सांभल पवन कोप्यो घणो, कांई मिली मोने मारग मझारक । दूर ठेलो आघी करी, आशा अलुधी मेली आयो जा-तक । बसन्तमाला मोड़े कड़का, मुख न देखाडज्यो तुम तणो नाथक ॥ स० ॥ ३४ ॥ अंजना कहे दासी भणी, पोते छे म्हारे अति घणा पापक । गेहली ए गाल न बोलिये, कटक जाता कांई दीधो सरापक । आशा मोटी मन मांहरे, कांई कुसांवण काढियो एहक । देई उलंभा दासी भणी, बांह झालो ले गई घर मांहेक ॥

३५ ॥ हिवे अंजना कहे सुण सुन्दरी, मोने दुःखं मांहे दुःख उपनो आजक । पाणी मांहे करी पातली, सासरे पीहरे गई मांहरी लाजक ॥ चारित लेवो मोने सिरै, करणी करी सारूं आतम काजक । नाम जपूं जगदीश नों, तेह सूं पामिये अविचल राजक ॥ स० ॥ ३६ ॥ हिवे नगर थकी दल सचल्यो, मारग में डूरं कियो रे मलाणक । चकवो चकवी तिहां टलवले, व्यापियो तिमिर ने आंथम्यो भाणक ॥ पवनजी मन्त्री ने इम कहे, अजना नों सूल न लीजिये नामक । पुरुष पराया सूं मन करे, चकवा चकवी नी परे सूकी छे नारक ॥ स० ॥ ३७ ॥ मन्त्री कहे सुणो कुंवरजी, तुमे ए बड़ो कांई आणो मन में भरमक । मोटकी सती छे अंजना, अहो निशि सेवती जिन तनो धर्मक । पुरुष परायो वञ्छे नहीं, वचन काजे तुमे कांय करो द्वेषक ॥ आ शील सरोवर झूलती, गुण किया शिव गामी जाण विशेषक ॥ स० ॥ ३८ ॥

॥ दोहा ॥

वचन सुणी मन्त्री तणो, कोमल थयुं निज चित्त ।
पवनजी मन्त्री ने कहे, सुणो हमारा मित्त ॥ १ ॥
खोटो ए कारज मैं कर्यो, संतापी निज नार ।
वचन वरां से दुहवी, करवो कवण विचार ॥ २ ॥

मो मन में प्यारी बसी, जाणूं मलिये जाय ।
लोकि लाज रहे नहीं, मन मन में मुर्भाय ॥ २ ॥

॥ ढाल तेहिज ॥

हिवे पवनजी कहे सुणो मन्त्रवी, हूं कटक जाऊं छूं नारी ने संतापक । पाछो जाऊं तो प्रजा हंसे, महेला मांहे लाजे मांहरो बापक ॥ मन्त्री कहे छाना जावस्यां, तेडी सेनापति कहे तूं रुखवालक । अमे थाता करी ने पाछा आवस्यां, तिहां लग कटकनी कीजे रुखवालक ॥ स० ॥३९॥ हिवे प्रछन्नपणे दोनूं आविया, आवीने अंजना नों उघाड्यो किंवाडक । बसन्तमाला तब उठने, उतावली बोले छै गाली दो चारक ॥ कहे शूरो पुरुष गयो कटक में, कोण रे लंपट आयो इण ठामक । प्रभाते हूं राजाने जिनवी, छोड़ाय देसूं हूं तेहनों गामक ॥ स० ॥ ४० ॥ प्रहस्त मन्त्री इम उच्चरे, इहां आयो छै प्रह्लाद नों नन्दक । अंजना तणो छै सिर धणी, बंश विद्याधर दीपक चंदक ॥ बसन्तमाला आवी ओलख्यो, नयण निहाली ने पामी आनन्दक । किंवाड़ खोली ने मांहि लिया, बसन्तमाला बधावियो नरिन्दक ॥ स० ॥ ४१ ॥

॥ दोहा ॥

अंजना सती तिण अवसरे, बैठी सामायिक मांय ।
कर्म धर्म संभालती, रही धर्म लव लाय ॥
वसंतमाला तिण अवसरे, हाथ जोड़ी कहै आम ।
सती रे सामायिक तिहां लगे, राजा करो विश्राम ॥१॥

॥ ढाल तेहिज देशी ॥

हिवे अंजना सामायिक पूरी करी, हाथ जोड़ी लागे पिउ ने पायक । पवनजी कहे तूं मोटी सती, लीन रही श्रीजिन धर्म मांहिक ॥ वचन वरां से मैं दूहवी, मैं तने कीधो अभाव अगाधक । हाथ जोड़ी करूं विनती, खमज्यो सती म्हारो अपराधक ॥ स० ॥ ४२ ॥ अंजना पाय नमी कहै, एहवा बोल बोलो कांई स्वामक । जेहवी पग तणी मोजड़ी, तेहवी पुरुषने स्त्री जाणक ॥ हाथ जोड़ी ने आण उभी रही, मधुर सुहामणा बोलती वेणक । कहे प्राप्ति विण किम पामिये, जाणे पत्थर गाली ने कीधो छै मैणक ॥ स० ॥ ४३ ॥ तीन दिवस रह्या तिहां पवनजी, तिहां भाव भगति तिण कीधी विशेषक । वाय ढोले वींझने करी, षटरस भोजन आपिया अनेकक ॥ हाव भाव करे छै अंजना, प्रीतम सूं घणी सांचवी रीतक । पवनजी आनन्द पाम्या

घणा, अञ्जना सूँ धरी अति घणी प्रीतक ॥ स० ॥४४॥ हिवे पवनजी पाछा निकले, अंजना बोली छे जोड़ी जी हाथक । आशा रहे कदाच मांहरे, लोक माने किम मांहरी बातक ॥ तिण सूं मात पिता ने जणावज्यो वाहना आभरण आप्या अहनाणक । शङ्का पड़े तो देखावज्यो, मात पितादिक सहु लेसी जाणक ॥ स० ॥ ४५ ॥ हिवे वसन्तमाला ने तेड़ी तिहां, पवनजी देई सनमानक । मांहरे अंजना राणी सारां सिरे, प्रत्यक्ष चिन्तामण ने समानक ॥ तूं करजे जतन घणा तेहना, जिम दांत ने जीभ भेला रहे जेहक । जिम तूं अंजना ने भेली रहे, किम दीजे घणीं भोलावणी तेहक ॥ स० ॥ ४६ ॥ बसन्तमाला ने माणक मोती दिया, बीजाई धन दियो रे विशेषक । घणी सतोषी छे वचन सूं, वसन्तमाला हुई हरष विशेषक ॥ प्रहस्त मन्त्री ने इम कहे, जतन कीज्यो कुंवरजी ना तेहक । कुशले खेमे वेगा पधारज्यो, म्हे बाट जोवां जाणे उमयो मेहक ॥ स० ॥४७॥ सीख देवें अंजना चालतां, रण मांहे आवे घणा पुरुष दुष्टक । सो पुत्र आवे छे वरुण ना, तेहने आगल रखे फेरवो पूठक । दुरजन कटक छे वरुण नों, लोहना बाण जाणे मुके अङ्गारक । तिहां खत्री तणी रीत राखज्यो, मरण भलो पिण नहीं भलो हारक ॥

स० ॥ ४८ ॥ हिवे पोल थकी रे पाछी वली, नैणा में छूटी छे जल तणी धारक । मैं कटुक बचन कह्यो कंथ ने, मुंह ढांकी ने रोवे तिण वारक ॥ वसन्तमाला आय धीरज देवे, हिवे आयो छे सामायिक कालक । देव गुरु धर्म हिये धरो, व्रत पच्चक्खाण थे लेवो संभालक ॥ स० ॥ ४९ ॥ हिवे अंजना सती तिण अवसरे, रुड़ी रीत पाले व्रत रसालक । कर्म धर्म संभालती, सुखे गमावे छे इण विध कालक ॥ ध्यान धरे देवगुरु तणो, संसार नो जाणे छे काचोजी मायक । बोल सज्झाय गुणे थोकड़ा, इण परे अञ्जना ना दिन जायक ॥ स० ॥ ५० ॥ हिवे उदर आधान जाणी करि, अञ्जना मन मांहे हरष अपारक । धन खरचे करे धुपटा, लोकीक दान देवे शुभकारक ॥ भावना भावे उलट मने, पात्र सुपात्र देवे मुक्ति ने हेतक । उछरङ्ग मन मांहे अति घणो, दान देती न गिणे खेत कुखेतक ॥ स० ॥ ५१ ॥ हिवे राणी राजा भणी विनवे, सांभलो विनती मांहरी आपक । अञ्जना करे धन उडावणां, इण सूं धुरलगी पवन न कीधो मिलापक ॥ तोही मन मांहे मान राखे घणो, कटक जातां पाड़ी एहनी मामक । आप कहो तो हूं एहने, वरजवा काजे जाऊं तिण ठामक ॥ स० ॥ ५२ ॥ राजा पिण दीधी छे आ-

गन्या, हिवे केतुमती चाली मोटे मणडाणक। साथे सहेलियां लीधी घणी, मन मांहे मान बहु आणक॥ आगे बधावउड़ा मेलिया, अञ्जना सुणने हरषित थायक। भाव भगति करी घणी, सांहमी आय भेट्या सासु ना पायक॥ स०॥ ५३॥ आदर सनमान दे अञ्जना, सासु ने ले गई निज घर मांयक। आसन दीधो छै बैठवा, हाथ जोड़ उभी छै सनमुख आयक॥ कहे मनुष्य नी करी मोने लेखवी, म्हारा मनोरथ पूरियो आयक। माईतां विना इम कुण करे, मांहरी सासरे पीहर बाधी छै लाजक॥ स०॥ ५४॥ हिवे वह्न ना चिन्ह देखी करी, केतुमती राणी धस्यो मन द्वेषक। वह्न थांरा अङ्ग नों एहवो, चिन्ह क्युं दीसे विशेषक। तूं मोटा रे कुल तणी उपनी, वंश विद्याधर दोनूं पक्ष सारक। तूं साची मुझ आगल कहे, उदर आधानकी उदर विकारक॥ स०॥ ५५॥ अञ्जना सती तिण अवसरे, आभरण अहनाण आण मुक्या पायक। कटक थी कुमर पाछा वली, विरहणी जाणी ने आविया लायक। तीन दिवस रह्या घर मांहरे, छांने आयने छांने गया तासक। आभरण अहनाण इहां मेलने, हिवे हुवो छै मुझ सातमो मासक॥ स०॥ ५६॥ वह्न ना वचन काने सुण्या, केतुमती राणी बोले छै तेहक। पूरव लग तोने

परहरी, मुझ पुत्र ने तुझ किसो सनेहक। आज लगी अलखावणी. तूं आभरण चोरी ने निरमल थायक॥ विणठ्यो रे दूध कांजी थकी, हिवे सांसरा सूं परि पीहर जायक॥ स०॥ ५७॥ सासुरा वचन काने सुण्या, अञ्जना रे मन उपनो दाहक। पुत्र तुमारो पाछो वले, तिहां लगे मुझ ने राखो घर मांहिक॥ सासरा में सासुजी तुम तणो, कहो तो ऐंठ खाईं ने काढूं दिन रातक। चरण कमल सूं गिर रहो, हूं कलंक लेईं किम पीहर जायक॥ स०॥ ५८॥ केतुमती राणी क्रोधे चढ़ी, पग करी क्रोध सूं ठेलियो शीशक। अङ्ग मोड़ी ने उभी थई, धड़ हड़ धूजी ने अति घणी रीसक। अलगी रहे मुझ आंख थी, जिहां लगे म्हारा नगर नी सीमक॥ तिहां लगे अञ्जना दूहा रहे; जिहां लगे मुझ ने अन्न पाणी तणो नेमक॥ स०॥ ५६॥ वसन्तमाला ने तेड़ी करी, बधन्न वांधने टेरी छै तेहक। ते चोख्या आभरण म्हारा पुत्र ना। चोर देखाल के केदसूं देहक। तेरे घड़ो रे टेरो रही, वाजे छै तारणां रोवती तेहक॥ वसन्तमाला इम मुख भणे, चोर तो पवनजी सहि तेहक॥ स०॥ ६०॥ हिवे कालो रे रथ अणावियो, कालाई तुरंग जोतरया छै दोयक। काला ही वस्त्र पहराविया, कालो हो झूरसो दीधो छै तेहक॥ कालों

ही मस्तक राखड़ी, अञ्जना ने बसन्तमाला बैसाणी ताहक। अञ्जना चाली पीहर भणी, दुःख घणो धरती मन मांयक ॥ स० ॥ ६१ ॥ हिवे चालियो रथ उतावलो, आयो छै बाप तणी भूम तेहक। दूर थी मेहल देखिया, सारथी रथ पाछो वाल्यो तेहक ॥ जुहार करी अञ्जना भणी, सारथी चित्त मांहि चिन्तवे आमक। दुष्ट अकारज मैं कियो, मैं बन मांहि अञ्जना मेली इण ठामक ॥ स० ॥ ६२ ॥ हिवे सांझ पड़ी दिन आंथम्यो, रयण बिहाणी घोर अन्धकारक। हाथो हाथ सूझे नहीं, इण वेला मुझने कुण आधारक ॥ नाम जपूं जगदीश नों, इणविध काढे दुःख भारी रातक। शुद्ध सामायिक उच्चरे, एटले सूरज उग्यो होयो परभातक ॥ स० ॥६३॥ हिवे अञ्जना कहि सुण सुन्दरी, मांहरा मन में अति घणो दुःखक। मोने कूड़ो रे कलङ्क चढावियो, हिवे तात ने किम देखालसूं मुखक ॥ माता मोय सूं मन किम मेलसी, किम करूं भाई भोजायां सूं वातक। जिहां लगे स्वामी आवे नहीं, तिहां लगे किम काढूं दिन रातक ॥ स० ॥ ६४ ॥ बसन्तमाला बलती इम कहि, जिहां लगे निरमल उजला आपक। तिहां लगे सहु ने सुहामणा, हरखे बोलावसी तुम तणो बापक ॥ माता मनोरथ पूरसी, भाई भोजाई सहु मिलसी आ-

यक । जिहां लगे स्वामी आवे नहीं, तिहां लगे पौहर बैठा रहो आपक ॥ स० ॥ ६५ ॥ हिवे नगर नी सेरिये सचरी, गुंघट काढ़ी ने नीचोजी जोयक । हंस तणी गत चालती, नगर ना लोक जोवे सहु कोयक ॥ स्वजन विछोही ए कामिनी, नाथ विहुणी दिसै छै नारक । पिछाड़ी से प्रजा मिली घणी, इण पर पोंहती छै बाप दुवारक ॥ स० ॥ ६६ ॥ पोले उभी राखी पोलिये, मालूम कीधो राय ने जायक । दोनूं हाथ जोड़ी नीचो नमी, अञ्जना बाहिर उभी छे आयक ॥ राय सांभल हरषित हुवो, नगर शिणगार ने करो विख्यातक । सनमुख मोकलो पालखी, आघो तेडावो राय प्रह्लाद नीं साथक ॥ स० ॥ ६७ ॥ कान में छाने सेवक कहे, अञ्जना सासरे जे हुवो तेहक । तिण बात कही सर्व मांडने, राय संभाल दुःख व्यापियो देहक ॥ मुरछागत थाय धरणी ढल्यो; सचेत थयो कीधो क्रोध विशेषक । म्हारा कुलने कलङ्क लगावियो, आयवा मत द्यो मांहरी पोल मझारक ॥ स० ॥ ६८ ॥ पोलियो पाछो आवी कहे, तुम ऊपर रूठो छे महिन्द्रायक । मांहे आयवा मत द्यो एहने; वचन सुणी ने विलखी थायक ॥ माता रा भवन में संचरी, आघा पाछा पग पड़े तिण वारक । मन मांहे दुःख धरती थकी, विलखी थई आवी माता

ने द्वारक ॥ स० ॥६६॥ मानवेगा तिण अवसरे, आंगने अञ्जना दीठी विरङ्गक। शरीर नो रङ्ग तो फिर गयो, काला वस्त्र पहरण अङ्गक ॥ अहनाण दीसे छे वारका, नयण झरे जाणे मोत्यां ना वृन्दक। मुख कमलाणो दीसे बुरो, जाणे राहु ने अन्तरे दब गयो चन्दक ॥ स० ॥ ७० ॥ इम देखी माता धरणी ढली, सचेत थई रोवे बांगां जी पाड़क। हूं क्यों नहीं रही रे बांझणी, इण कलङ्क आण्यो म्हारा कुल मझारक ॥ हूं सगा संबन्धी में किम फिरूं, लेई कटारी ने वेदसूं मांहरी कुखक। जिण कुखे अञ्जना उपनी, दीधो छे दुःख में दुःख विशेषक ॥ स० ॥ ७१ ॥ राणी ने रोवती देखने, दास्यां मिल आई अञ्जना ने पासक। आदर विहुणो उभी किमे, माय छोड़ो बाई तुम तणी आशक ॥ सासु ने सुसरा लजाविया, लजावियो पीहर मांय मोसालक। तूं वंश विगोवण उपनी, हिवे मापणी तूं सूंढो मति देखलाक ॥ स० ॥ ७२ ॥ बसन्तमाला वलती कहे, एहवी अचूकी थे बोलो छो वायक। पवन कुंवर घरे आवसी, पूछ लीज्यो निरणो मन मांयक ॥ आ सती तो संजम ले सही, गले छे गर्भ तणो ए फासक। ए कलङ्क आया काया नहीं धरे, पवनजी आयवारी राखे छे आशक ॥ स० ॥७३॥ इम कही दोनूं पाछी निकली,

भाई भोजायां तणे घर जायक। वंधव मांहे वैसी रया; अञ्जना आंगणे ऊभी छे आयक॥ आय भोजायां मिली तिहां, मन विना तिणां आमी छे वाहक। आंगुली लेई दांतां धरी, आयवा न दीधी तिण ने घर मांयक॥स० ॥ ७४ ॥ इम अञ्जना घर घर हिण्डी घणी, किणहि न दीधी आयवा घर मांहेक। दीन वचन मुख बोलती, नयण भरे मुख रोवती तेहक॥ भूख तृषा करी आ-कुली, अन्न पाणी आपे कुण तामक। ऊभी छै दीन दयामणी, नांखे निसासा ऊभी तिण ठामक॥ स० ॥ ७५ ॥ हिवे मिलने भोजायां ते इम कहे, बाई थे आपरो आपो संभालक। धूरसूं जी डाह्या क्यूं नी हुवा, एह कह्यो जिसो कर्म चण्डालक॥ अमे तो अब-ला स्यूं करां, आंगणे ऊभा रहो न लिगारक। हम घर आया राय जाणसी, तुम तणा वीर ने काढसी बारक ॥ स० ॥ ७६ ॥ वंधवा किण ही न पूछियो, स्वजन किण ही न पूछी रे सारक। जिण दीठी छे अञ्जना सती, तिहां प्रोहित प्रधान मुदिया द्वारक॥ लोकांरी आसंग किम हुवे, अञ्जना ने तेड़ी राखे घर मांहेक। आदर भाव किहांई नहीं, एहवा कर्म उदय हुआ आयक॥ स० ॥ ७७ ॥ अंजना ने देखे आवती, लोक आडा जड़ देवे किंवाड़क। घर में कोई आवण देवे

नहीं, बचन बोले लोक विविध प्रकारक ॥ अंजना दुख वेदे घणो, जाणे वही छै खड्ग नी धारक । दुःख मांहे दुःख साले घणो, अमरस धरे मन मांहि अपारक ॥ स० ॥ ७८ ॥ हिवे अजना तृषा रे टलवले, जल लेई आयो ब्राह्मण तीरक । राय कुंवरी पाणी पियो, शीतल उत्तम निरमल नीरक ॥ बलती अंजणा कहे तेहने, नगर मांहे तो नहीं पीउं पाणीक । पोल बाहिर जल पीवसूं, इहां तो छै म्हांहरा बाप नी आणक ॥ स० ॥ ७९ ॥ नगर बाहिर जल बावरे, अंजना वसन्तमाला ने कहे छै आमक । गहन बन मोटी उजाड़ में, ऊंचा हो पर्वत विषमी ठामक ॥ जिहां सूर्य किरण न संचरे, रात दिवस नी खबर न कांयक । मानुष को मुख नहीं देखिये, तिण बन मांहे तूं मुझने ले जायक ॥ स० ॥ ८० ॥ हिवे वसन्तमाला तिण अवसरे, अंजना नों बचन कियो परमाणक । दोनूं जणी तिहां थी नि-कली, मांहो मांहि बोलती मोहकारी बाणक ॥ उजड़ बन मांहि सचरी, जोयने परवत सबल महन्तक । खाम्पे लेई अंजना भणी, परवत बैठी जाय एकन्तक ॥ स० ॥ ८१ ॥ अंजना बन मांही संचरी, लोक मांहो मांहे बोले छै एमक । अंजना ने बाहिर काढने, राय कीधो अति भुंडो जी कामक ॥ आण देवाणी रे घर

घरे, आयवा नहीं दीधी किण ही घर मांहक। पेट नीं पुत्री ने परहरी, राय नी अकल गई ढकायक ॥ स० ॥ ८२ ॥ हिवे माता कहे छै दासी भणी, अंजना ने जोवो रही किण ठामक। दासी कहि बन में गई, हां हां देव सूं कीधो ए कामक ॥ म्हारी कूखे ए उपनी, वालपणे हुन्तो अति घणो रागक। हिवे बन मांहि सिंहादिक विनाससी, इम चिन्तवी ने धरे दुःख अपारक ॥ स० ॥ ८३ ॥ नित भोजन जीमती रे वालिका, मन ने गमता च्यार ही आहारक। मन मांहि फिकर करे घणो. शहर में नहीं उजाड़ में जायक ॥ अन्न पाणी किम पामसी, मैं मन में जाण्यो घरे कोई राखसी वीरक। इम चिन्तवी ने घणी चिन्ता करे, रोवती आंख्या आंसू काढती नीरक ॥ स० ॥ ८४ ॥ हिवे राजा राणी कने आयने, बोले छै मुख थी एहवो वायक। थे चिन्ता करो किण कारणे, बेटी आपां जोगी नहीं छै तेहक ॥ मोटो अकारज इण कियो, मेंहणो आण्यो मांहरा कुल मझारक। जो पाछी अणाऊं रे अञ्जना, तो नगर नी नारियां हींडे अनाचारक ॥ स० ॥ ८५ ॥ हिवे वसन्तमाला इम उच्चरे, बाई थांरो बाप छै मूढ़ गींवारक। मूरखणी माता छै तुम तणो, भायां में अकल न दीसे लिगारक ॥ आंगण न राखी रे एक

घड़ी, कलङ्क री सुध न पूछी रे कांयक। बाई थारा पीहर ऊपरे, कोई अचिन्त्यो धसको पड़्‌यो जायक॥ स०॥ ८६॥ अंजना कहे सुण सुन्दरी, मांहरो बाप छे चतुर सुजाणक। माता विचक्षण अति घणी, भाई छे मांहरा घणा बुद्धिवानक॥ पिण पाप छे मांहरे अति घणा, तूं मन मांहे मूल रोस न आणक। आपां पूरव पुण्य कीधा नहीं, ए सहु आपणे करमां रा दोषक॥ स०॥ ८७॥ हिवे गिरवर गुफा सांमी जोवतां, तिहां दीठो छे मुनिवर ध्यानवर धीरक। निर्दोष आचार पालता, तप जप खप करी शोषव्यो शरीरक॥ अवधि ज्ञाने करी आगला, अञ्जना जाय भेट्या तसु पायक। अति दुःख मांहि आनन्द हुवो, भव भव होज्यो स्वामी तुम तणो शरणक॥ स०॥ ८८॥ हिवे हाथ जोड़ी अञ्जना कहे, पूर्वे किसूं कियो कर्म चण्डालक। किण करमां स्वामी मांहरे, दुःण भव में आयो अणहुन्तो आ-लक॥ सासरा सूं काढी मो भणी, पीहर राखी नहीं घर मांहक। आप कृपा करो मो ऊपरे, सगलाई संबन्ध देवो नी सुणायक॥ स०॥ ८९॥ हिवे साधु कहे बाई सांभलो, पाछले भव रो कहूं विरतन्तक। थांरे शोक हुन्ती लिखमीवती, श्रावक धर्म पालती कर खंतक॥ सिंहरथ पुत्र थो तेहनें, ते चोरी पड़ोसण नें

सूँपियो तेहक । तेरे घड़ी थांरो शोक टलवलो, दुःख घणो तरती मन मांयक ॥ स० ॥ ६० ॥ थांरी शोक रे नियम हुन्तो, जो साधु हुवे तिण नगर मझारक । तो बांदिया पहलो तेहने, अन्न पाणी रो हुन्तो परिहारक ॥ विलाप कीधो तिण अति घणो. जब ते पुत्र पाछो दियो सूँपक । अन्तराय पड़ो दरशण तणी, तिणसूं बंध गई थांरे कर्मां री रासक ॥ स० ॥ ६१ ॥ काल कितोएक बीतां पछे, साधव्यां आई तिण नगर मझारक । ते वाणी सांभल तेहनी, वैराग सूं लीधो संजम भारक ॥ तपस्या करी अणसण कियो, आलोयां बिना एटलो फेरक । कीधा हो कर्म न छुटिये, तेरे घड़ी रा हुवा बरस तेरक ॥ स० ॥ ६२ ॥ सिहरथ पुत्र ते तप करी, तुझ कुखे आय लियो अवतारक । साथे पड़ोसण दुःख सहे, ते पिण चोरी ना फल विचारक ॥ पवनजी वरुण सूं युद्ध करी, पाछा आवसी निज नगर मझारक ॥स०॥ ६३ ॥ ए साधु कह्यो सतोषवा, और नहीं कोई कारज लिगारक । बीजा साधु मे निमित्त भाषणो नहीं, एतो आगम विहारी हुन्ता अणगारक । त्यां कह्यो उपकार जाणने, कर दियो तिहां थी उग्र विहारक । भारंड-पंखी तणी परे, आचार पाले छे निरतिचारक ॥ स० ॥ ६४ ॥ हिवे तिण काल ने तिण समें, तलेटी आयने

गुंजियो सिंहक। जब जीव त्रास पाम्या घणा, धेड़ हुड़ धूजीने पामिया विहक ॥ तिण ही सिंह तणो शब्द सांभल्यो, अञ्जना भय पामी तिण वारक। तब वसन्तमाला डूम उच्चरे, बाई देवगुरु धर्म समरो नवकारक ॥ स० ॥ ९५ ॥ हिवे वसन्तमाला विरखे चढ़ी, अञ्जना सागारी कीधो संथारक। नाम जपे जगन्नाथ नों, जाणे रे ध्यान चढ्यो अणगारक ॥ चिहुं गत जीव खमावती, च्यारे शरणा चिन्तवे चित्त मझारक। कहे केशरी रुठो काया हरे, पिण सांहरो धर्म न लेवे लिगारक ॥ स० ॥ ९६ ॥ हिवे वसन्तमाला डूम उच्चरे, कोहे अञ्जना महा सती छे निरधारक। मोटे रे शब्द हेला करे, कोई देव देवी आवो डूणवारक ॥ कोई सज्जन हुवे अञ्जना तणो, तो पिण वेग सूं आवज्यो धायक। उपसर्ग उपनो अति घणो, वसन्तमाला बोले छे एहवो वायक ॥ स० ॥ ९७ ॥ तिण बन मांहि व्यन्तर यक्ष रहे, ते बारे जोजन तणो रुखवालक। ते यक्ष कहे यक्षणी भणी, आपणे शरणे आवी दोय बालक ॥ तिण सूं रक्षा करां आपां एहनी, डूम चिन्तव सादूंलो रूप कियो तेहक। तिण सादूंला सिंहने पराभवी, काढी दियो दूर बन में छेहक ॥ स० ॥ ९८ ॥ साहाज देई अंजना भणी, देवता बोले छे एहवी वायक। सतियां मांहि तूं निरमली, थांरा

गुण पूरा मोसूं कह्या नहीं जायक ॥ हिवे कलङ्क उतरसी ताहरो, कुशले आवसी पवन कुमारक। वली मामो थारो इहां आवसी, तूं निश्चिन्त रहे इण वन मझारक ॥ स० ॥ ९९ ॥ एहवो वचन सुणी देवता तणो, वन मांहे दोनूं रहे अबीहक। वन फल फूल तिहां वावरे; जिन धर्म तणी नहीं लोपे रे लीहक ॥ सुंस व्रत पाले छे निरमला, अहोनिस करे छे जिन तणो जापक। तपस्या करे अति आकरी, अंजना काटे छे संचिया पापक ॥ स० ॥ १०० ॥ चैत मास धुर अष्टमी, पुष्य नक्षत्र आयो श्रीकारक। रात रा पाछला पोहरमां, अंजना जनमियो हणुमन्त कुमारक ॥ अशुची टाली तिण अवसरे, दासी ने कहे अंजना आमक। महोच्छव करसी कुण एहना, कटक मे गयो छे आपणो स्वामक ॥ स० ॥ १०१ ॥ चांदणी रात पूनम तणी, अजना कर धर बेठी छे नन्दक। चञ्चल चपल सुहामणो, दीठां पामे घणो हरष आणंदक ॥ हरषे बोलावे रे मायड़ी, कुंवर तणी अजे छे लघु वेसक। तारा ने ताके रे बालुड़ो, जाणे की चंद ने लेय झपेटक ॥ स० ॥ १०२ ॥ हिवे मामो अजना तणो, सुरसेन राजा तेहनो नामक। देशान्तर जाय पाछो वल्यो, आकाशे विमान थांभ्यो तिण ठामक ॥ वन मांहि दीठी दोय बालिका, अचरज

पामी नें मोकलो नारक। जब मामो अंजना ने ओलखी नैना में छुटी छे जल तणो धारक ॥ स० ॥ १०३ ॥ गले लागी विहु घणी आरड़ी, एटले मामा आयो तत- कालक। अंजना ओलखने मिल्यो, अंजना रोवे छे आंसूड़ा रालक ॥ डील सूं अलगी हुवे नहीं, बालक जिम धरी रही शीशक। जब खोला में बैसाड़ी धीर पे, वाई हिवे पूरसूं तुम तणो आशक ॥ स० ॥ १०४ ॥ हिवे अंजना कहे मामा भणी, माथे आयो मांहरे अण- हुन्तो आलक। तिण सूं काढी सासरा थी मो भणी, पीहर में किणहि न कीधी संभालक ॥ वली आण देवाड़ी राय घरो घरे, तिण कारण हूं आई बन मभा- रक। मामाजी पाप पीते घणां, करुणा न कीधी मांहरी किणहि लिगारक ॥ स० ॥ १०५ ॥ हिवे वैस विमाण में संचखा, अंजना रे गोद में हणुमन्त कुमारक। दीठो तिण मोत्यां रो झुमखो, कूदी ने चञ्चल दीधी छे फा- लक ॥ तोड़ी मोत्यां लंड़ भूई पड्यो, अजना मुरछा पामी तिण वारक। तव मामो लेइ पुत्र भणी, आण मेल्यो अंजना हिये पासक ॥ स० ॥ १०६ ॥ बांह झाली बैठी करी, मामो बोले तिहां बोल रसालक। कहे देश परदेश में हूं फिखो, पिण एहवो कठे ही न देख्यो बालक ॥ एहवा वचन कहे अंजना भणी, आयो छे

हणुपाटण मझारक ॥ करे महोच्छव अति घणो, नाम दियो हनुमन्त कुमारक ॥ स० ॥ १०७ ॥ अंजना हनु-मन्त इहां रहे, पवनजी पहुंचा छै लंकापुरी जायक। तिहां रावण राजा सूं मुजरो कियो, जब रावण बोले छे एहवी वायक। पवनजो आद राजा भणी, थे मेघ-पुरी जाय करो मेलायक। वरुण राजा ने हटाय ने, वर्ताविज्यो तिहां मांहरी आणक ॥ स० ॥ १०८ ॥ हिवे मेघपुरी दल संचर्यो, साहमा वरसे तिहां बाणना मेहक। पिण पवनजी पग नहीं चातरे, मांहो मांहि मनुष्य मुंवा घणा तेहक ॥ वरस दिवस विग्रहो रह्यो, पछे मांहो मांहे मेल कियो ताहक। आण वरतावी रावण तणी, पवनजी हरख पाम्यो मन मांहक ॥ स० ॥ १०६ ॥ हिवे कटक आयो रे लङ्का भणी, राजा रावण ने कियो जुहारवा। जब रावण वस्त्र वागा आ-पिया, वले आप्या छै शोभता घणा शिणगारक। केई एक दिन राखिया, पछे रावण सीख दीधी तिण वारक। पवनजी आद राजा भणी, ते आया छै निज नगर मझारक ॥ स० ॥ ११० ॥ पवनजी कुशले घर आ-विया, मात पिता तणे लाग्या छै पायक। जेटले माता भोजन करे, तेटले अंजना ने घर जायक ॥ सूनां रे महल मालिया देखिया, कुरले छै तिहां अति घणा

कागक । पूरब बीती ते बात काना सुणी, जब पवन रे लागी छै अति घणी आगक ॥ स० ॥ १११ ॥ हिवे पवनजी तिहां थी निकल्या, माता पिण आई लारे तिण वारक ॥ बांह झाली पवन ने इम कहे, हिवे तो जीमो च्यारू ही अहारक । हूं वहू ने आण मगवायसूं, पवन जी सांहमो न जोवे रे तामक । बांह छोड़ाय माता कने, गया छै राजा महिन्द्र ने गामक ॥ स० ॥ ११२ ॥ हिवे माता रोवे मुख ढांकने, काम विमासो नहीं कीधो रे एहक । इल भणी जन नहीं मोकल्या, अंजना ने नहीं राखी रे गेहक ॥ काची रे बुद्धि नारी तणी, केतु-मती राणी चिन्तवे एमक । धिग् २ मुझ जीवत भणी, मैं पापणी कीधो अति भुण्डो कामक ॥ स० ॥ ११३ ॥ हिवे पवनजी कहे मन्त्री भणी, हूं सासु सुसरा सूं किम करू प्रणामक । मांहरी माता तेहने पराभवी, तिण सूं सासरा में गई मांहरी मामक । हिवे ऊंचो हुई किम बोलसूं, हिलमिल ने बात करूंला कीमक । वलि अंजना राणी भी ऊपरे, किण विध धरेली हरष ने प्रेमक ॥ स० ॥ ११४ ॥ मन्त्री कहे सुणो कुमरजी, आपां तो गया था कटक मझारक । लारे सूं काढी अंजना भणी, आपरो दोष नहीं छै लिगारक ॥ इम कहे पवन कुमर भणी, चाकर मेलियो नगर मझारक ।

कहे पवनजी आप पधारिया, जब अञ्जना ने पीहर हुई चिन्ता अपारक ॥ स० ॥ ११५ ॥ महिन्द्र कहे हूं महा पापियो. मैं दुष्ट अकारज कीधो रे जाणक । हाजरिया लोक मांहरे घणा, पिण डाह्यो नहीं कोई चतुर सुजाणक ॥ सीख नी वात कोने नहीं कही, मनमां मांहरे उपनी बहु रीसक । नरक नियाणो मैं बांधियो. हिवे दुष्ट कर्मा थी केम छूटीसक ॥स०॥११६॥ हिवे पवनजी आय पधारिया, सांभल सासु पड़ी शिर भालक । पेट कूटे दोनूँ हाथ सूं, उदर आधान किहां गई बालक ॥ मन मांहि दुःख वेदे घणो. जाणे कोई जोर सूं लागे छै बाणक । अञ्जना नों दुःख वेदे घणो, तिम २ बोलि छै रोवती वाणक ॥ स० ॥ ११७ ॥ साथे सैन्या लेई चतुरङ्गिणी, सुसरो जंवाई रे साहमो जी जायक । बांह पसारी दोनूँ मिल्या, दोनां रे दुःख घणो मन मांयक ॥ जब पवनजी कहे राजा भणी, तुम पुत्रीने काढी हम तणी मायक । ए दोष नहीं तुझ मांहरो, जब पाछो राजा सूं बोल्यो नहीं जायक ॥स०॥११८॥ हिवे पवनजी निज घर आणने, मरदनिया मरदन करने करायो स्नानक । वलि चोवा चन्दन चरचिया, गहणा वस्त्र पहरिया प्रधानक ॥ पछे भोजन मंडप आयने, परुसिया भोजन विविध पकवानक । पिण पवनजी कवो

भरे नहीं, अञ्जना ऊपर लाग रह्यो अन्तर ध्यानक ॥
स० ॥ ११९ ॥ पिण पवनजी मन मांहि चिन्तवे, जो
पुत्र जायो हुवे तो बधाई जी थायक । वसन्तमाला
पिण दिसे नहीं, एम विचार करे मन मांहक । अञ्जना
री मा तिण अवसरे, चिन्ता मन में करे जो अपारक ॥
कहे हूं तो पापणी मोटकी, मैं अञ्जना ने न राखी घर
मझारक ॥ स० ॥ १२० ॥ हिवे सालानी सुता रे
नाहनड़ी, तिण ने पवनजी लीधी छे खोला मझारक ।
कहो थांरी भुवाजी स्यूं करे, ते रुदन करी ने बोली
तिणवारक ॥ मात पिता ने बंधव सहु, सगलाई कीधो
छे कर्म चण्डालक । आंगण न राखी रे अध घड़ी,
कलङ्क सुणी ने काढी ततकालक ॥ स० ॥ १२१ ॥
एहवा वचन सुणी बालिका तणा पवनजी दूर फेंक दियो
छे थालक । महिन्द्रराय आय पाये पड्यो, तब मन्त्री
कहे तूं मूर्ख गींवारक ॥ कलंक री सुध कीधी नहीं,
विगर विचारियां काढी रे बालक । अकल भ्रष्ट हुई
तांहरी, कटुक वचन कह्या तिण वारक ॥ स० ॥१२२॥
हिवे प्रहस्त मन्त्री कहे पवनने, बोले छे मुख थी एहवी
वायक । उठो स्वामी किम बैसी रह्या, अञ्जना नी
खबर करां वेगा जायक । मूई छे कि अथवा जीवती,
सुख दुःख भोगवे छे किण ठामक । एहवा वचन सुणी

मन्त्री तणां, अञ्जना ने दोनूं जोवा चाल्या छे तामक ॥ स० १२३ ॥ हिवे महेन्द्र राजा पिण साथे हुवो, वले प्रह्लाद राय आयो लेई सायक। वलि माता पिण आई छे रोवती, सांभल पुत्र एक मांहरी वातक ॥ अम्हे खबर करास्यां अञ्जना तणी, थे तो जावो निज नगर मझारक। नारी काजे लाज छोड़ो मति, पवनजी नहीं मानी वात लिगारक ॥ स० ॥ १२४ ॥ तब अनेक विमाण चलाविया, वले शूरमां पुरुष फेर्‍यां असवारक। ठाम ठाम जोवे अञ्जना भणी, मुख सूं बोलि छे पवन कुमारक ॥ जो सती लाभे तो हुं जीवसूं, नहीं तो अकालि वार देसूं कालक। देश परदेश फिरतां थकां, अञ्जना सुणी छे निज मोसालक ॥ स० ॥ १२५ ॥ जब पवनजी चाल्या छे आगलि, पीछे आवे छे सगलो जी सायक। जब वसन्तमाला पवनजी ने ओलख्या, कहे अञ्जना ने आव्यो छे तुम तणो नायक ॥ जब अञ्जना आय पाये पड़ी, खोला में वैसाड्यो हणुमन्त कुमारक ॥ स० ॥ १२६ ॥ वसन्तमाला आय पाये पड़ी, हीयासूं भिड़ि पवन कुमारक। कहो बाई दुःख तुम किम सह्या, किम सही मांहरी माय नी मारक ॥ किम करी वनफल वीणिया, किम करी रही वन मझारक। किम करी काल गमावियो, किम करी पाल्यो हणुमंत कुमा-

रक ॥ स० ॥ १२७ ॥ स्वामीजी आप कटक में पधा-रिया, सासरे पीहर म्हांने दियोजी छेहक । तिण सूं कारी म्हें वन में गई, वन फल भखि ने काढिया दिहक ॥ तिहां मोटा मुनिवर भेटिया, वले देवता कीधी छे हम तणी सारक । रात दिवस धर्म पालतां, मामो लेई आयो इण नगर मझारक ॥ स० ॥ १२८ ॥ हिवे वसन्तमाला अने अञ्जना, पवन ने बोले छे मधुरी वाणक । आप किम कटक में संचख्या, किम सख्या राजा वरुण ना वाणक ॥ जब पवन कुमार इसड़ि कहे, मैं वरुण राजा सूं युद्ध कियो तेथक । जब घाव लागा ते साजा हुवा, जीत फते कर आयो छूं एथक ॥ स० ॥ १२९ ॥ हिवे अञ्जना सती तिण अवसरे, सासु सुसरा ने लागी जी पायक । जब सुसरो आंख्यां आंसू भरे, मैं कलङ्क देई ने कीधो जी अन्यायक ॥ अञ्जना पाय नमी कहे, बापजी कीम करो छो विलापक । दोष नहीं छे तुम तणो, पोते छा मांहरे बांधला पापक ॥ स० ॥ १३० ॥ वले माता पिता सूं जाय मिली, भाई भोजायां सूं अति घणो नेहक । माता पिता ते रोवे घणा, अञ्जना मात पिता ने कहे छे तेहक ॥ थे चिन्ता करो किण कारणे, पोते छा मांहरे बांधला पापक । तिण कारणे मैं दुःख भोगव्या, मूल न करज्यो कोई सन्ता-

पक ॥ स० ॥ १३१ ॥ हिवे हणुपाटन थी चालिया, अञ्जना ने मामे आपी घणी आथक । साथे आयो पहुं-चायवा, चतुरङ्गणी सैन्या लेई साथक ॥ साथे तो परजां अति घणो, रतनपुरी आया मोटे मण्डाणक । उच्छरंग मन मांहे अति घणो, घर घर वरत्या छै कोड़ कल्याणक ॥ स० ॥ १३२ ॥ हिवे सीख देई मामा भणी; अञ्जना सती पवन कुमारक । सुख भोगवे संसार ना, मांहो मांहि लग रही प्रीत अपारक ॥ काल कितोकं गयां पछै. राजा राणी खारो जाण्यो ससारक । राज देई पवनजी भणी, मोटे मण्डान लीधो संयम भारक ॥ स० ॥ १३३ ॥ पवन नरिन्द राज भोगवे, अञ्जना राणी सूं हेत विशेषकं । हनुमन्त कुमार विद्या भणे, वानरी आदि विद्या भण्यो अनेकाक ॥ चतुर विचक्षण अति घणो, देश प्रदेश में हुवो जो विख्यातक । वसन्तमाला रो मान वधारियो, सगलाई पुछे करे तेहने बातक ॥ स० ॥ १३४ ॥ हिवे वरुण राजा तिण अवसरे, आपणां पुत्रां ने जाणी सजोरक । वल पराक्रम देखी आपणो, मन मांहि धरे अति अभिमानक ॥ तिण लङ्का भणी दूत मोकलो, जो तांहरे युद्ध करवा तणो भावक । तो बीजा सुभट दल मोकलो, तुम्हे एकर सूं जोवो मुझ आयक ॥ स० ॥ १३५ ॥ रावण सेन्या मेली घणी, एक

तेड़ो मेलग्रो रतनपुरी मांहक। जब पवनराय जावा ने सज हुवा, जब हनुमन्त कुमार बोले एहवो वायक॥ कहे कटक मांहि हुं जाव सूं, जब पवनजी अजना कहे छे आमक। पुत्र तूं अजे बालक छे, कटक मांहे नहीं तांहरो कामक॥ स०॥ १३६॥ हनुमन्त हठ करी चालियो, महिन्द्रपुरी जाय कियो मेलाणक। तीन पहर दल आफलग्रो, बंधण बांध्यो नाना ने जायक॥ शूरसेन राजा आय लाजियो, बंधण छोडी ने कियो प्रणामक। कहे मांहरी माता ने राखी नहीं, तिण कारणे मैं आय कियो संग्रामक॥ स०॥ १३७॥ हिवे हनुमन्त आयो लङ्का भणी, साहमो आयो छे रावण रायक। हनुमन्त कुमार ने देखने; रावण पामियो अति हरष आनन्दक॥ बीड़ो झालो ने हनुमंत निकलग्रो, बीजा पिण चालग्रा अति घणा रायक। सांहमो आयो कटक वरुण नों, युद्ध हुवो घणो; मांडो मांहक॥ स० १३८॥ रावण की सेना देखी करी, सो पुत्र वरुण ना चालग्रा तिण वारक। युद्ध करवा लागा तिण समे, लोहना बाण जाणे लूकि अङ्गारक॥ वले गोला ने बाण वहे घणां, काम आया बड़ा बड़ा जोधारक। जब रावण की सेन्या न्हासी गई, सेंठो उभो रह्यो हनुमन्त कुमारक॥ स०॥ १३९॥ घणा लोक कहे हनुमन्त ने,

तूं मात पिता ने अलखावणो बालक । तिण सूं तोने मेलियो काटक में, तूं वरुण सूं युद्ध कियां कर जायलो कालक ॥ वल तो हनुमन्त इम कहे, वरुण ने पुत्र मिल आवज्यो सायक । वातां किया सूं खबर नहीं, वल तणी खबर पड़े रण में वावरयां हाथक ॥ स० ॥१४०॥ वानरी विद्या साधी करी, वानर रूप कियो तिण वारक । वारे जोजन में वृक्षादिक हुन्ता, ते लेई न्हाख्या वरुण नी फौज मझारक ॥ घणो कतल कियो वरुण नी फौज नों, वले लाम्बो पूंछ विकुर्व्यो तिण वारक । सो पुत्र राजा वरुण तणा, वांध लिया तिण पूंछ मझारक ॥ स० ॥ १४१ ॥ वरुण राजा कहे हनु-मन्त ने, तूं वानरी विद्या ने मेल दे दूरक । पछे जीत पामजे रण विषे, तो हूं जाणूं तोने मोटको शूरक ॥ जव हनुमन्त विद्या मेली वांदरी, सूलगोरूप करी मेले छे वाणक । जव वरुण राजा इम चिन्तवे, ए बालक दिसे छे महा बलवानक ॥ स० ॥ १४२ ॥ हिवे धधकी ने वरुण राजा उठियो, हनुमन्त कुमार सूं मांडी छे राडक । दोनूं जणा हाथ चालवे, तिहां मुष्टि ना वाज रह्या परिहारक ॥ रावण राजा तिण अवसरे, हनुमन्त ने ऊपर कीधो छे हाथक । जव हनुमन्त वरुण राजा भणी, वांधीने न्हाख दियो रण मांहिक ॥ स० ॥१४२॥

हनुमन्त कहे बन्धण तोड़ूं तांहरा, जो रावण राजा रे लागे तूं पायक। जब वरुण कहे वीतराग विन, अवर रा पाय वन्दूं नहीं जायक ॥ चारित्र लेणो छै मांहरे, तब हनुमन्त बन्धण तोड़िया तामक। वरुण लियो चारित्र वैराग सूं, तिणरा पुत्र ने राज दियो रावण रायक ॥ स० ॥ १४४ ॥ रावण हनुमन्त ने प्रशंसियो, तूं शूर घणो थांरो लघुजी वेशक। ते मोटा राजा ने हटा- वियो, रीझ देई आयो लङ्क नरेशक ॥ परणाई भाणेजी आपणी, सीख दीवी सनमान सत्कारक। वले हनुमन्त मोटा राजा तणी; रूपवती कन्या परणियो एक हजा- रक ॥ स० ॥१४५॥ पवन नरिन्द राज भोगवे, मानेती राणी अजना नारक। वसन्तमाला सूं हेत अति घणो, वले मानेतो छै हनुमन्त कुमारक ॥ ते संसार ना सुख भोगवे, हनुमंत कुमार सहस नारां सहितक। रतन जड़ित महिलां मझे, मांहो मांहि लग रही अति प्रीतक ॥ स० ॥ १४६ ॥ हिवे काल कितोक गया पछे, अंजना चिंतवे चित्त मझारक। परभाते राजाने पूछने, लेणो सिरे मोने संयम भारक ॥ इम चिंतवी आई राजा कने, हाथ जोड़ी बोले शीश नमायक। आज्ञा द्यो स्वामी जो मो भणी, चारित्र लई देउं कर्म खपायक ॥ स० ॥ १४७ ॥ जब राय कहे अंजणा भणी, केईक दिन

रही घर मझारक। हिवे पुत्र बालक अछै, पछे साथे लेस्यां आपि संयम भारक॥ तब अंजना हाथ जोड़ी ने इम कहे, मोने काल रो विश्वास नहीं छै लिगारक। तिण कारण दीक्षा लेसूं सहि जब राजा पिण हुवो छै साथे तैयारक॥ स०॥ १४८॥ हिवे हनुमंत कुमार तेड़ने, पवनजी बोले छै एहवी वायक। अमे चारित्र लेस्यां वैराग सूं, हनुमंत कुमार रोयो घणो तायक। पछे राज बैसाण्यो मोटे मण्डाण सूं, बसंतमाला अंजना पवनजी रायक। आज्ञा लेई हनुमंत कुमार नी, तीनूं ही लीधो संयम सुख दायक॥ स०॥१४९॥ मास मास खामणे करे पारणो, शरीर सूकाई दुरबल करी कायक। तीनांरी नसां जाल दीसे जुई जुई, हालतां चालतां घणो वेदना थायक॥ तीनूं जणा वैराग सूं, च्यारूं आहार पच्चक्खी कीधो संथारक। केवल ज्ञान उपाय ने, कर्म तोड़ि गया मुक्ति मझारक॥ स०॥ १५०॥

॥ इति अञ्जना सती रो रास समाप्तम्॥

श्री मैणारेहा सती की चौपाई।

॥ दोहा ॥

जुवो मास दारु थकी, करे वेश्या सूं जोग।
जीव हिंसा चोरी करि, परनारी नों भोग ॥१॥

॥ ढाल रास की चाल ॥

व्यसन सातमो परनारी नों, प्रत्यक्ष पाप देखायो। रावण पद्मोत्तर मणरथ राजा, तीनूं ई राज गमायो ॥ राजवीयांने राज पियारो ॥ एदेशी ॥ १ ॥ मणरथ राजा कर मनसुबो, जुगबाहु ने मार्यो। आप मुओ ने राज गमायो, हाथ कछुय न आयो ॥ रा० ॥ २ ॥ रावण राजा पहिलां हुवो, पीछे पद्मोत्तर रायो। तीजी कथा मणरथ राजा नी, ते सुणज्यो चित्त लायो ॥ रा० ॥३॥ जंबुद्वीप रा भरत क्षेत्र में, नगर सुदरशण भारी। धन सूं पूरण देखत सुन्दर, रैयत सुखी राजा री ॥ रा० ॥ ४ ॥ मणरथ राजा रे धारणी राणी, ऋद्धि तणो विस्तारो। हाथी घोड़ा ने रथ पायक सैन्या, वरते चौथो आरो ॥ रा० ॥ ५ ॥ स्वचक्र ने परचक्र कीरो, विरोध

नहीं तिणवारो । मणरथ राजा रे जुगबाहु भाई, मांहो मांहि छै प्यारो ॥ रा० ॥ ६ ॥ पांच इन्द्री ना भोग भोगवता, नाटक पड़े दिन रेणो । विविध प्रकार नी क्रीड़ा करतां, विषय विरोध मडाणो ॥ रा० ॥ ७ ॥ मणरथ राजा राज भोगवता, चढ़ियो महल उदारो । तिण अवसरे मैणरह्या दीठी, जुगबाहु नी नारो ॥ रा० ॥ ८ ॥ रूप देखी ने राजा अचरज पाम्यो, अहो अहो रूप तुमारो । इण राणी ने हूं महल में राखूं, सुख विलसूं संसारो ॥ रा० ॥ ९ ॥ मणरथ राजा कर मनसुबो, जुगबाहु ने बुलायो । करो सजाई आयुद्धशाला नी, हूं देश लेवण ने जायो ॥ रा० ॥१०॥ हाथ जोड़ी ने जुगबाहु बोल्यो, ओ तो छै थोड़ो कामो । राज विराजो राजसभा में, हूं जासूं भाई तामो ॥ रा० ॥ ११ ॥ मणरथ राजा राजी हुवो, हुकुम कियो छै भाई । देश किल्लो कायम करी आवो, ले जावो फौज सजाई ॥ रा० ॥ १२ ॥ जुगबाहु तो उठ्यो सताब सूं, हरष हुवो मन मांहि । किल्लो कायम कर पाछो आउं, जब मुजरो करूला भाई ॥ रा० ॥ १३ ॥ ले फौजां जुगबाहु चाल्यो, मजला मजला जायो । जुगबाहु तो मन मे नहीं जाणे, मणरथ कियो उपायो ॥ रा० ॥ १४ ॥ मणरथ राजा मैणरह्या कारणे, भारी वस्तु मंगावे ।

गहणा जड़ाव रा पहरण सारूं, दासी रे हाथ पहुंचावै ॥ रा० ॥ १५ ॥ दासी राजा रे हुकुमे छाने, वस्तु लेइ देवे राणी ने जायो। मणरथ राजा चोज बनायो, तिणरी खबर न कायो ॥ रा० ॥ १६ ॥ मैंणरच्छा मन मांहि जाण्यो, धणी चाल्यो छै गामो। मैंणरच्छा मन ऊणी जाणी, जेठ पिला री ठामो ॥ रा० ॥ १७ ॥ डूम जाणी ने राणी ऊरा लीधा, वस्तु आभूषण सारो। नेह सनेही वस्तु मेली, जाण्यो राजा लागो म्हांरो लारो ॥ रा० ॥ १८ ॥ मैंणरच्छा ने रीसज आई, दीनो दासी ने झभकारो। धणी तो म्हारो परदेश सिधायो, राजा पड़ियो म्हारो लारो ॥ रा० ॥ १९ ॥ दासी तो मन में दीलगीर हुई, राजा पासे आई। मैंणरच्छा तो महाराज कोप करी ने, दीनी वस्तु वगाई ॥ रा० २० ॥ मणरथ राजा रात समय में, महल भाई रे आयो। दरवाजो तो जड़ियो दीठो, हेलो मारे छे रायो ॥ रा० ॥ २१ ॥ मैंणरच्छा तो मन मांहि जाण्यो, मणरथ राजा आयो। बीजो तो कोई उपाय न दीसे, हूं सासु ने दूं रे जगायो ॥ रा० ॥ २२ ॥ मैंणरच्छा तो छाने जाय ने दोनो सासु ने जगायो। असलां मसतां माता जाण्यो, बेटो भोले आयो ॥ रा० ॥२३॥ ओ तो महल बेटा जुगबाहु रो, महल पेलो कांनी थारो। बचन

माता नों सांभल राजा, लाज्यो छै तिणवारों ॥ रा० ॥ २४ ॥ मैंणरह्या मन मांहि जाण्यो, पड़ियो राजा म्हारे लारे। तो कासीद मेलूं धणी ने, वेगा आवज्यो इण वारे ॥ रा० ॥ २५ ॥ बीती बात लिखी कागद में, जीवती जाणो मोने। तो पाछा घरे वेगा आवज्यो, दगो कियो छै थांने ॥ रा० ॥ २६ ॥ कासीद कागद दियो सताब सूं, जुगबाहु ने जाई। कागद बांचने जुगबाहु जाण्यो, दगो कियो छै भाई ॥ रा० ॥ २७ ॥ इम जाणो ने जुगबाहु वलियो, ढील न कीनी कांई। मुहूरत नहीं महलां जावण रो, नीमित्तिये बात बताई ॥ रा० ॥ २८ ॥ जुगबाहु तो डेरा बारे कीना, नगरी में नहीं आयो। मणरथ राजा रो डर जाणो ने, राणी धणी कने जायो ॥ रा० ॥ २९ ॥ मैंणरह्या मित्र आप धणी री, पर पुरुष प्रीत न जाणी। व्रत आप रो राखण सारूं, जतन करे छै राणी ॥ रा० ॥ ३० ॥ मैंणरह्या तो पहुंती सताब सूं, विध सूं बात सुनाई। जुगबाहु तो मन में न जाण्यो, मारे लो मनै भाई ॥ रा० ॥३१॥ जुगबाहु ने आयो जाणी ने, डर उपनो राजा रे। मण-रथ राजा करे विमासण, उमराव छै इण रे सारे ॥ रा० ॥ ३२ ॥ जुगबाहु ने राणी कहे छै, दगो करे लो थांरो भाई। साथ समान छै इणरे सारे, तो हूं महेली

सारू आई ॥ रा० ॥ ३३ ॥ भाई मारण राजा रात रो चाल्यो, चढ़ियो एक सखाई। दोढ़ीदार चाकर पालंतां, गयो घकाय ने मांई ॥ रा० ॥३४॥ मैंणरह्या तो मनरी दाखवी, जितरे मनरथ आयो। राणी कहे सावधान हुवो, मारे लो थाने भायो ॥ रा० ॥ ३५ ॥ मैंणरह्या तो न्यारी हुई, राजा नेड़ो आयो। जुगबाहु तो न्यारो सूतो, मणरथ घावज वायो ॥ रा० ॥ ३६ ॥ भाई मार राजा पाछो वलियो, हुयो घोड़े असवारो। सरप पूंछड़ी खूर हेठे चींथी, खाधो छै तिण वारो ॥ रा० ॥ ३७ ॥ मणरथ राजा हेठे पड्यो, मरण गयो नरक तत्कालो। खबर नहीं कोई राज सभा में, करमां कीनो छै चालो ॥ रा० ॥ ३८ ॥ मैंणरह्या तो कने आई, दुःख धरती मन मांई। मैं तो थांने कह्यो छो महाराजा, मारे लो थांने भाई ॥ रा० ॥ ३९ ॥ मैंणरह्यो तो कहे धणी ने, करो संथारो सोई। च्यारे शरणा थांने होयज्यो, नहीं किणही रो कोई ॥ रा० ॥ ४० ॥ मोरा प्रीतमजी थांने द्युं सीख, वचन हिया में थे धारो। साहिब तो पर-देश सिधावो, हूं भातो बांधूं छूं लारो ॥ रा० ॥ ४१ ॥ मोरा प्रीतमजी थांरे देव अरिहन्त छै, गुरु निग्रन्थ श्री साधो। धर्म केवली भाख्यो दया में, समकित नियम आराधो ॥ रा० ॥ ४२ ॥ मोरा प्रीतमजी थांने जीव

मारण रो, जाव जीव पच्चक्खाणो। सर्व प्रकारे मृषा-
वादे, अदत्तादान में जाणो ॥ रा० ॥ ४३ ॥ मोरा
प्रीतमजी थांने मैथुन सेवण रो, नवविध वाड़ प्रमाणो।
मनुष्य देवता तिर्यञ्च संबन्धी, जावजीव पच्चक्खाणो ॥
रा० ॥ ४४ ॥ मोरा प्रीतमजी थांने क्रोध मान रो,
माया लोभ ए च्यारो। मन से तो ममता मती राख-
ज्यो, जावजीव परिहारो ॥ रा० ॥ ४५ ॥ मोरा प्रीतम-
जी थे राग द्वेष दोई, बंध करमां रा जाणो। कलह
अभ्याखयान पैशून्य चाड़ी, पर परिवाद पच्चक्खाणो ॥
रा० ॥ ४६ ॥ मोरा प्रीतमजो रति अरति इम जाणो,
मायामोस नहीं भलो। पाप अठारे त्रिविध वोसराउं,
मित्या दरशणसलो ॥ रा० ॥ ४७ ॥ मोरा प्रीतमजी
मरण तणो भय न आणो, धर्म साचो करि जाणो।
परभव में ते साथे चालसी, गांठे बांध्यो नाणो ॥ रा०
॥ ४८ ॥ मोरो प्रीतमजी थे मोह थकी मन वालो, मोह
में जीव मती घालो। करो आलोयणा कारज सरे ज्यूं,
मत राखो कोई सालो ॥ रा० ॥ ४९ ॥ मोरा प्रीतम
जी दश दृष्टान्ते, मनुष्य जमारो दोहेलो। इण भव से
जो पुन्य करे तो, परभव सुख सुहेलो ॥ रा० ॥ ५० ॥
मोरा प्रीतमजी ज्ञाने विचारो, सुपनारो माया जाणो।
डाभ अणी जल विन्दु जिम जाणो, मन में समता

आणो ॥ रा० ॥ ५१ ॥ मोरा प्रीतमजी थे दोष करमां रो जाणो, बीजा ने दोष न दीजे। कृया वैर तो कोई न छोड़े, बांध्या ते भुगतीजे ॥ रा० ॥ ५२ ॥ मोरा प्रीतमजी किण रा मात पिता, कुण कुटुम्ब कुण भाई। घर री तो साहिब नहीं रही, स्वारथ सरव सगाई ॥ रा० ॥ ५३ ॥ मोरा प्रीतमजी नहीं काया आपणी, साची धर्म सगाई। शत्रु मित्र ने सरीखा जाणो, अवसर जावे ठाई ॥ रा० ॥ ५४ ॥ मोरा प्रीतमजी थांरे सरदहणा शुद्ध छे, चौविहार अणसण दियो। मरणो सहु ने एक दिहाड़े, सेंठो राखज्यो हीयो ॥ रा० ॥५५॥ जुगबाहु तो संथारो सरद्यो, साहाज दियो छे राणी। काले मासे काल करी ने, जाय उपनो विमाणी ॥ रा० ॥ ५६ ॥ मैंणरह्या छाती काठी करने, कारज धणी नों कियो। पूरा मित्र ते पार उतारे, धन जीवित जिण रो जीयो ॥ रा० ॥ ५७ ॥ मोह बसे होय काम बिगाड़े, मरण वीरीया नरक में घाले। सगा नहीं ते पूरा बैरी, सूंस लेताने पाले ॥ रा० ॥ ५८ ॥ मित्र हुवे ते मरण सुधारे, करे पर उपकारो। दे सरदहणा सूंस करावे, ते विरला संसारो ॥ रा० ॥ ५६ ॥ धन छे संसार में मैंणरह्या राणी, मोह धनी नों निवार्यो। आप तणो भरतार जाणी ने, लिण उपदेश देई ने तार्यो ॥ रा०

॥ ६० ॥ मैंणरह्या मन मांहि जाण्यो, पकड़े लो मोने रायो। वेष बदलने परो निकली, दासी नाम धरायो ॥ रा० ॥ ६१ ॥ डेरा मांह सूं तो बारै निकली, गई उजाड़ रे मांयो। पूरी आपदा कोइ नहीं साथे, राणी रे कुंवर जायो ॥ रा० ॥ ६२ ॥ जिण जाया देशोटन हुन्ता, बांटता राज बधाई। विषय वियोग में कुंवर आयो, जोईज्यो करम कमाई ॥ रा० ॥ ६३ ॥ चांपो पाछे लो राणी डरपे. रखि आवेलो कोई लारो। इम जाणी ने कुंवर ऊंचायो, हुई करमा रे सारो ॥ रा० ॥ ६४ ॥ कोमल काया ने कारण पड़ियो, पांव पड़े नहीं ठायो। कुमर तो राणी निभतो न जाण्यो, बालक मेले वन मांयो ॥ रा० ॥ ६५ ॥ चीर बिछाई ऊपर सुवाड्यो, वाल बिछोहो जाणो। होतव थारो जो होसी रे जाया, मैंणरह्या दुःख आणो ॥ रा० ॥ ६६ ॥ कुंवर मेल राणी आगी चाली, अन्न बिना सूनी काया। कटे सुवावड़ कुण मङ्गल गावे, करमा चैन दिखाया ॥ रा० ॥ ६७ ॥ घणा दास ने दासी हुन्ता, राजकुंवर नी धायो। दोढ़ी पड़दा मांहे रहती, राणी एकली जायो ॥ रा० ॥ ६८ ॥ जातां जातां आगे नदी आई, पाणी में वस्त्र पखाल्या। स्नान करी ने तीरज बैठी, उठी दुःख री झाला ॥ रा० ॥ ६९ ॥ कौण वियोग पड्यो मो मांहे, किसे ठिकाणे

आई। रोही में भमती एकलड़ी, रोवे छै विलविलाई ॥ रा० ॥७०॥ किण घर जनमी किण घर आई, राजा री राणी कहवाई। साहिब म्हारो मुवी मेली, हूं रोही में आई ॥ रा० ॥ ७१ ॥ कुंवर विछोहो मात पिता रो, जुगवल्लभ लघु भाई। जुगवल्लभ ने महलां मेल्यो, बालक छै बन मांहि ॥ रा० ॥७२॥ महल झरोखा शोभा जाली री, राजवीया रूसनाई। ऋद्धि साहिबी उभी मेली, हूं तीर नदी रण मांहि ॥ रा० ॥ ७३ ॥ विषम उजाड़ ने आय बैठी नों, सुख नहीं तिल रती। मैंणरह्या तो दुःख करती बैठी, सङ्कट पड्यो छै सती ॥ रा० ॥ ७४ ॥ झूरे धणी ने करे विलाप, दुःख भर छाती फाटे। मैंण-रह्या नों दुःख प्रभु जाणे, बैठी छै तट माटे ॥रा०॥७५॥ संजोग रूपणी रोही हुन्ती, विजोगे तिण वाली। नाथ विहुणी दुःखनी करती, आणी रण में रोली ॥ रा० ॥ ७६ ॥ देखे सगाई हूण संसार में, विछड़ता नहीं वारो। इम जाणी ने सतगुरु सेवो, लाहो लिज्यो लारो ॥ रा० ॥ ७७ ॥ तिण अवसर में देवता इम जाणो, दुःख करे छै राणी। वैक्रिय रूप कियो हाथी रो, रमत मांड़ी पाणी ॥ रा० ॥ ७८ ॥ दुःख विसारण विलम्बज कियो, सूंड़ सूं उछाले पाणी। दुःख छोड़ी ने हाथी दीठो, रमत देखे राणी ॥ रा० ॥ ७९ ॥ जिम जिम

रमत देखे राणी, अचरज रमत भारी। धर्म अंकुरो पुन्य संजोगे, आवे छे नर नारी ॥ रा० ॥ ८० ॥ देवता छे कोई पर उपकारी, राणी ने सूँड़ सूं झाले। जितरे नेड़ा आय निकलिया, लेके विमाण में मेले ॥ रा० ॥ ८१ ॥ विद्यावर तो राजी हुवो, रूप घणो इण नारी। तुरन्त विमाण में ले पाछो वलियो, सुख विलसा संसारी ॥ रा० ॥ ८२ ॥ मैंणरह्या तो मन में जाण्यो, तुरत वल्यो छे पाछो। कुण जाणे कुण देश ले जावे, ओ तो नहीं दीसे छे आछो ॥ रा० ॥ ८३ ॥ विद्याधर ने मैंण-रह्या पूछे, जाता किण दिस भाई। अबे तो थे पाछा वलिया, कांई दिल में आई ॥ रा० ॥ ८४ ॥ भगवन्त ने तो दरशण जातां, तो सरीखी मिली नारी। इम जाणी ने पाछो वलियो, सुख विलसा संसारी ॥ रा० ॥ ८५ ॥ मैंणरह्या मीठे वचने दाखवे भगवन्त दरशण जातां। मारग में थाने हुंज मिली छूं, नफो घणो दरशण करता ॥ रा० ॥ ८६ ॥ तीर्थङ्कर नों दरशण करतां, प्रसन्न होसी थारी काया। विद्याधर तो पाछो वलियो, मैंणरह्या रे मन भाया ॥ रा० ॥ ८७ ॥ समवसरण सूं नेड़ा आया, विमाण सूं उतरिया। कर वंदणा ने सुने व्याख्यान, कारज सगला सरिया ॥ रा० ॥ ८८ ॥ जुग-बाहु तो देवता हुवो, उठ्यो छे उमंग आणी। सेवक

तो कर जोड़ हरषत हैं, जय जयकार मुख वाणी ॥ रा० ॥८९॥ इण ठामे स्वामी आय उपना, हुवा हमारा नाथो । कुण गुरु नी सेवा कीनी, दान दियो छे हाथो ॥ रा० ॥ ९० ॥ ज्ञान करी ने देवता दीठो. पूरव भव नों विचारो ॥ जुगबाहु तो हमारो नामज हुन्तो, मैंण-रहा म्हारी नारो ॥ रा० ॥ ९१ ॥ मैंणरहा रे कारण मोने, मणरथ भाई मार्यो । दे शरणां ने सूंस करायो, मैंणरहा मोने तार्यो ॥ रा० ॥ ९२ ॥ उपगारी नों गुण जाणी ने, देवता दरशण जायो । देखूं मैंणरहा कुण ठिकाने, बैठी समोसरण मांयो ॥ रा० ॥ ९३ ॥ परगट रूप कीनो छे देवता, प्रभु ने प्रदक्षिणा दीधी । साधु साध्वी ने वन्दना करने, मैंणरहा ने वन्दना कीधी ॥ रा० ॥ ९४ ॥ परषदा देखने हसवा लागी, देव दीसे छै गहलो । स्त्री ने तो वन्दना कीधी, जिण रो प्रभु उत्तर देलो ॥ रा० ॥ ९५ ॥ जुगबाहु इणरो नामज हुन्तो, मैंणरहा इणरी नारो । धर्म तणो इण ने साहज दीनो, हुवो सुर अवतारो ॥ रा० ॥ ९६ ॥ मैंणरहा रे कारण इण ने, मणरथ भाई मार्यो । दे शरणा ने सूंस करायो, इण ने मैंणरहा तार्यो ॥ रा० ॥ ९७ ॥ मैंण-रहा तो मन में जाण्यो, धणी दीसे छै म्हारो । इण अवसर में संयम आवे, पीछे विद्याधर नों नहीं सारो

॥ रा० ॥ ९८ ॥ भरी परषदा में मैंणरखा उठी, बोले छे करजोड़ो। आज्ञा द्यो तो स्वामी संयम लेऊं, टालूं भवतणी खोड़ी ॥ रा० ॥ ९९ ॥ देव कहे थांने आज्ञा म्हारी, ल्यो थे संयम भारी। जुगबाहु तो उरण हुवो, मैंणरखा ने तारी ॥ रा० ॥ १०० ॥ सोने तो विद्याधर लायो, परवश वात प्रकाशी। कठे विद्याधर कह्यो देवता, गयो विद्याधर नाशी ॥ रा० ॥ १०१ ॥ मैंणरखा तो संयम लीधो, ज्ञान भणे गुरुणी पासे। विनय करी ने आज्ञा पाले, सुमति गुप्ति प्रकाशे ॥रा० ॥१०२॥ देवता तो मन में हरषज पाम्यो, पूज्या प्रभुजी ना पायो। साधु साध्वी सर्व वांदी ने, आयो जिण दिश जायो ॥ रा० ॥ १०३ ॥ देवता तो आपणे ठामे पहुन्तो, मैंणरखा संयम पाले। बालक तो मारग मे मेल्यो, आपरा पुन्य रुखवाले ॥ रा० ॥ १०४ ॥ ना तो कोई हिंसक नेड़ो आयो, नहीं कोई पक्षी खायो। देखो पुन्याई के प्रभाव थी, सुकृत कीनी सहायो ॥रा० ॥ १०५ ॥ मिथिला नगरी नों पद्मरथ राजा, चढ़ियो शिकारज सोई। पाप करन्ता पड़े पाधरो, पूरव सुकृत होई ॥ रा० ॥ १०६ ॥ कर असवारी राजा रण मे फिरता, जोवे जीव सव कोई। रण मांहि तो बालक सूतो, दीठो राजा सोई ॥ रा० ॥ १०७ ॥ बालक नेड़ो

राजा आयो, रूप देखने अचरज पायो। बालक कोई पुण्यवंत दीसे, राजा रे मन भायो ॥ रा० ॥ १०८ ॥ म्हारा राज में पुत्र नहीं छै, म्हारे सहजे आयो। तो इण बालक ने उरो लेऊं, सौंपूं राणी ने जायो ॥ रा० ॥ १०९ ॥ कुंवर लेई ने राजा पाछो वलियो, आयो राज दुवारो। पुष्पमाला राणी राय तेड़ावे, पुत्र दियो छै करतारो ॥ रा० ॥ ११० ॥ नव मास तो भारा मरे छै, देवता पितर मनायो। आपणे पूरव पुण्य करी ने, कुंवर सहज में आयो ॥ १११ ॥ आपणा राज में पुत्र नहीं छै, करो इणरो प्रतिपालो। राज लायक ओ कुंवरज दीसे, होसी राज रुखवालो ॥ रा० ॥ ११२ ॥ भार भोलावण देई राणी ने, कुंवर खोले घाल्यो। पुण्यवन्त राज में आया पीछे, भोमियां नमी ने चाल्यो ॥ रा० ॥ ११३ ॥ भोमिया म्हारे आनमी हुन्ता, कुंवर राज में आयो। भोमिया म्हारे सर्व चाकर हुवा, नमीय नाम दरसायो ॥ रा० ॥ ११४ ॥ नमीय कुंवर पद्मरथ राजा, दिन दिन वधतो होई। मात पिता बंधव वि-छोहो; ते सुणज्यो सहु कोई ॥ रा० ॥ ११५ ॥ जुगबाहु ने मणरथ मारयो, विषया रस रे चायो। पाछा वलतां ने सापज खाधो, गयो नारकी मांयो ॥ रा० ॥ ११६ ॥ दोनूं राजा रो मरण हुवो, खबर हुई नगरी मांई।

मैंणरह्या तो निकल नाठो, तिण री खबर न कांई ॥ रा० ॥ ११७ ॥ संसार नों तो कारज कियो, राज जुगवल्लभ ने दियो । किण ने दोष न दीजे रे प्राणी, करम आपरा कियो ॥ रा० ॥ ११८ ॥ जुगवल्लभ तो राज करे छे, वरते छे चोथो आरो । वाप तणी मन में थोड़ी आवे, मिण दुःख वरते माता रो ॥ रा० ॥ ११९ ॥ नमी कुमार तो मोटो हुवो, विरह पड्यो राजा रो । नमी कुमार ने राज वैसाड्यो, सुख विलसे संसारो ॥ रा० ॥ १२० ॥ जुगवाहु तो देवता हुवो, मैंणरह्या संयम पाले। जुगवल्लभ ने नमी भाई, दोनूं राज रुखवाले ॥ रा० ॥ १२१ ॥ आठ करम छे महा जोरावर, जीवा ने फोड़ा पाड़े। च्यारा ने तो न्यारा कीना, करतव खेल दिखाड़े ॥ रा० ॥ १२२ ॥ दोनूं राजा राज भोगवंता, अटवी पड़ी है सीमाड़े । भूमि आपणी राखण सारूं, करे राज वीराड़े ॥ रा० ॥ १२३ ॥ जुगवल्लभ तो मन में जाण्यो, आयलड़ दिसे कठारो । देखोनें म्हारी धरती लेसी, राजविया अहङ्कारो ॥ रा० ॥ १२४ ॥ जुगवल्लभ तो फौजां ले चढ़ियो, कांकड़ सीमे जावे । नमी राजा मन में कोप करी ने, मन मे मगज न मावे ॥ रा० ॥ १२५ ॥ नमीराय तो करी सजाई, बोले छे वांकी वाणी । मरम मोसो बोले माता रो, चढ़ियो छै इम

जाणी ॥ रा० ॥ १२६ ॥ तिण अवसर में मैंणरह्याजी, मन में दूसड़ी आणी । अङ्ग जात छै दोनूं म्हारा, नहीं हठे पुन्य प्राणी ॥ रा० ॥ १२७ ॥ घणा जीव री घातज होसी, मरसी घणा अजाणी । यासूं बणे जो उपगार कीजे, मैंणरह्या मन आणी ॥ रा० ॥ १२८ ॥ कर बंदना गुरणी ने पूछे, आप कहो तो हूं जाऊं । दोनूं राजा रे राड़ मंड़ी छै, हूं जाई ने समझाउं ॥ रा० ॥ १२९ ॥ मांहो मांहि तो कोई न हटसी, अङ्ग जात छै म्हारा । घणा जीवा नी घातज होसी, परिणाम एक दया रा ॥ रा० ॥ १३० ॥ देखो पुन्याई राजविया री, गुरणी तो पिण नहीं बरजे । वस्तु आप री सेठी राखने, पीछे परोपगार करीजे ॥ रा० ॥१३१॥ कर बन्दना ने मैंणरह्या चाली, ले सतियां नों साथो । जुगवल्लभ सूं तो सैंध पिछाण, पहिली उण सूं बातो ॥ रा० ॥ १३२ ॥ कांकड़ सीमा ठौड़ ठिकाने, फौजां पड़ी छै दोई । जुगवल्लभ नों लशकर पूछी, चाली मैंणरह्या सोई ॥ रा० ॥ १३३ ॥ मैंणरह्या सती चरम शरीरी, आप तीरे पर तारी । राज कचेड़ी सूं नेड़ी आई, निजर पड़ी राजा री ॥ रा० ॥ १३४ ॥ जुगवल्लभ तो उठ्यो सताब सूं, विनय कर्यो छै भारी । सात आठ पग सामो जाई ने, महासतियां केम पधारी ॥

रा० ॥ १३५ ॥ मैंणरच्या तो कहे राजा ने, कारण पड़ियो तोस्यूं भारी । फौज वधी तो थे भेली कीनी, मैं तिण सूं कारण विचारी ॥ रा० ॥ १३६ ॥ आय लड़ म्हारी धरती लेसी, नीच चण्डाल घर जायो । साथ सामान दूणा भेलो कीनो, तिण कारण चढ़ी आयो ॥ रा० ॥ १३७ ॥ बेटा छो थे राजविया रा, बोलो बोल विचारो । और थां ऊपर कौण चढ़ आसी, यो भाई छे थारो ॥ रा० ॥ १३८ ॥ वात सुणी ने राजा लाज्यो, नीचो मुख करी जोवे । भारी वचन कह्यो माता ने, राजा ने नहीं सोवे ॥ रा० ॥ १३९ ॥ जुगवल्लभ तो कहे माता ने, थे लीधो संयम भारी । मौत आपदा किण विध हुई, वात कहो विस्तारी ॥ रा० ॥ १४० ॥ मण-रथ राजा थांरा पिता ने मारयो, हूं रात ने निकली आई । जनम नमी रो वन में हुवो, हूं मेल आई वन में भाई ॥ रा० ॥ १४१ ॥ तीर नदी ने बैठी हुन्ती, विमाण विद्याधर नों आयो । देव उचाय ने मोने मांहे मेली, हूं गई समोसरण मांयो ॥ रा० ॥ १४२ ॥ पिता तो थांरो देवता हुवो, दरशण प्रभु के आयो । आज्ञा मांगी ने मैं तो संयम लीधो, भेट्या प्रभु रा पायो ॥ रा० ॥१४३॥ दोनूं राजा रे मैं वैरज सुणियो, लड़सो सांहो मांई । घणा आदमी मरण पामसी, तिण कारण

हूं आई ॥ रा० ॥ १४४ ॥ जुगवल्लभ राजा बात सुणी ने, चिन्ता फिकर मन आई । जुगवल्लभ तो कहे माता ने, जाय मिलूँ हूं भाई ॥ रा० ॥ १४५ ॥ ठीक नहीं छै नमीरामे ने, यो छै म्हारो भाई । नहीं विश्वास राजविया केरो, तिण सूं मिलूं हूं पहेली जाई ॥ रा० ॥ १४६ ॥ जुगवल्लभ ने तो दियो समझाई, नमीराय कने जाय । सतियां निजर पड़ी राजा री, विनय करी सामो आय ॥ रा० ॥ १४७ ॥ हाथ जोड़ो ने राजा बोल्यो, महासतियां किम आई । का सूं कारण पडियो थांरे, इसड़े अवसर मांई ॥ रा० ॥ १४८ ॥ कांई कारण थांरे दोनूं राजा रे, झगड़ो पड़ियो मांहो मांई । फौज वन्धी तो थे भेली कीनी, तिण कारण हूं आई ॥ रा० ॥ १४९ ॥ बाप मारयो ने मा निकल भागी, गई ए किण रे लारे । देखो ने ए म्हारी धरती लेसी, कही सनमुख माता रे ॥ १५० ॥ बेटा थे छो राजविया रा, बोलो बोल विचारो । और थां ऊपर कुण चढ़ आसी, भाई छै ओ थारो ॥ रा० ॥१५१॥ जुगवल्लभ ने मोटो मेल्यो, खबर पड़ी अलुसारे । नानो बालक नसी ने जाणो, बात कही विस्तारे ॥ रा० ॥ १५२ ॥ बात सुणी ने राजा लाज्यो, नीचो मुख करी जोवे । भारी बचन कह्यो माता ने, राजा ने नहीं सोवे ॥ रा० ॥ १५३ ॥

नमी राजा तो मन मांहि जाण्यो, जुगवल्लभ राजा म्हारो भाई। नेह सनेह धरी दोनूं बैठा रो, तिण सूं माजी आई ॥ रा० ॥ १५४ ॥ नमी राजा तो मिलण चाल्यो, जुगवल्लभ सामो जाई। हरष भाव सूं बांह पसारी, मिलिया दोनूं भाई ॥ रा० ॥ १५५ ॥ एकण हाथी रे होदे बैठा, जुगवल्लभ नमी भाई। जुगवल्लभ रा डेरा कानी, हुई अब हरष सवाई ॥ रा० ॥ १५६ ॥ लोक लड़ाई री वातां करता, लड़ता होड़ा होडी। लोकां मन में अचरज पाम्या, कांई कियो इण मोड़ी ॥ रा० ॥ १५७ ॥ वैर मिटाय ने मेल करायो, घणा लोक हुवा राजी। घणा जणा रा माथा पड़ता, राख्या छे इण माजी ॥ रा० ॥ १५८ ॥ लोक राजा रे कुशलज हुवो, घर घर हरष वधाई। भलो होज्यो इण सती केरो, यश लीधो जग मांई ॥ रा० ॥ १५९ ॥ राज कचेड़ी में आई बैठा, जुगवल्लभ नमी भाई। जुगवल्लभ सुख अथिर जाणी ने, वैरागरी मन में आई ॥ रा० ॥१६०॥ जुगवल्लभ कहे मोने दीक्षा लेण द्यो, राज करो महा-रायो। राज ऋद्धि ने सर्व संपदा, मैं थांने भोलायो ॥ रा० ॥ १६१ ॥ जुगवल्लभ तो दीक्षा लीधी, हरष घणो मन मांई। भाई विछोहो दुखरी लहरां, नमी कुमर ने आई ॥ रा० ॥ १६२ ॥ नमी राजा तो राज करे छे,

राणी एक सौ आठो। हुवे नाटक ने घुरे नगारा, दोनूं राज रो पाटो ॥ रा० ॥ १६३ ॥ दाघ ज्वर ने जोग करी ने. लिसी संयम भारो। इन्द्र परीक्षा करवा आसी, उत्तराध्ययन विस्तारो ॥ रा० ॥ १६४ ॥ दोनूं भायां रे मेल करायो, मैंणरछा पाछी आई। गुरणीजी रे पाय लागने, विध सूं बात सुणाई ॥ रा० ॥ १६५ ॥ मोटा राजा रे मेल करायो. राखी घणा री बाजी। मैंणरछा ना गुण जाणी ने, गुरणी हुई छे राजी ॥रा० ॥ १६६ ॥ छत्तीस हजार आरज्यां मांहि, गुरणी चन्दनवाला। तिण रे पाटे पदवी पाई, शिष्यणी रतना री माला ॥ रा० ॥ १६७ ॥ चेड़ानी जे साते पुत्री, भगवंत आप बखाणी। चेलणा मृगावती तीजी प्रभावती, चौथी शिवादे राणी ॥ रा० ॥ १६८ ॥ पांचवीं पदमावती छठी सुलसा, जेष्ठा सातमी जाणो। संकट पड्यां सती शीलज राख्यो, दमयन्ती नल राणी ॥ रा० ॥१६९॥ अञ्जना सती छे महिन्द्र राजा नी बेटी, विखो सह्यो बन मांहि। सङ्कट पड्यां सती शीलज राख्यो. यश कीरत जग मांहि ॥ रा० ॥ १७० ॥ सती द्रौपदी तो आगे हुई, यश लीधो जग मांई। मोटा राजा रो विरोध मिटायो, मैंणरछा री अधिकाई ॥ रा० ॥ १७१ ॥ संयम लेने सुकृत कीज्यो, मनुष्य जमारो मत खोज्यो।

जिन शासन में जिम मैंणरह्या कीनो, तिम सब कोई कीज्यो ॥ रा० ॥ १७२ ॥ मैंणरह्या तो दीक्षा लेई, मन शुद्ध संयम पाले । जिन मारग में नाम दीपायो, भव-दुक्ख सहु टाले ॥ रा० ॥ १७३ ॥ मैंणरह्या तो कुल तारक हुई, लज्या आप री राखो । विखो सह्यो पिण शील न भांज्यो, भगवन्त तेहना साखी ॥ रा० ॥१७४॥ जुगबाहु ने मैंणरह्या सती, जुगवल्लभ नमी भाई । च्यारा रो तो कारज सीधो, मणरथ दुर्गति मांहि ॥रा० ॥ १७५ ॥ व्यसन सातमो परनारी नों, जीव घात घर हाणी । मणरथ राजा नरक पहुन्तो, कुयश बांधने प्राणी ॥ रा० ॥ १७६ ॥ एक कुव्यसन मणरथ सेव्यो, वहु रुलियो संसारो । सातूं कुव्यसन जे सेवें प्राणी, तिण ने दुःख अपारो ॥ रा० ॥ १७७ ॥ विषया रस ते विष सम जाणी ने, सतगुरु सेवा कीजे । मणरथ राजा नी बात सुणी ने, परनारी संग न कीजे ॥ रा० ॥ १७८ ॥ दान शील तप संयम पालो, दोषण सगला टालो । दया धर्म री समता आणी, शुद्ध आचार ते पालो ॥ रा० ॥१७९॥ धर्म दयामें केवली भाख्यो, ते साचो कर जाणो । जे जाणी सेवे भव प्राणी, ते पामे निरवाणो ॥रा०॥१८०॥ जप तप संयम पालो रे भाई, विषय विकार गमाई । जीव जिके तो शिव सुख पावे, श्रीवीर वचन मन लाई ॥रा०॥१८१॥

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

लोंकेजी की हुण्डी ।

॥ दोहा ॥

ॐ नमः परमेष्टि पद, पांचूं महा सुखकार ।
दुरित विघ्न दूरा टले, वर्त्तें जय जयकार ॥ १ ॥
हुण्डी जेह लोंका तणी, अछे पुरातन तेह ।
तिणमें आगम साखि थी, बोल उनहत्तर जेह ॥ २ ॥
सकल सुगुण शिर सेहरा, श्री कालू गणि राय ।
तासु पसाये गुलाब कहै, दोहा रूप बनाय ॥ ३ ॥

॥ सद्गुरु विनती ॥

(खम्माच दादरा)

सद्गुरु सद्बुद्धि बढ़ाना मुझे, मेरे स्वामीन् चरणों लगाना मुझे ॥ टेक ॥ महाव्रत पञ्च पञ्च समिति वर, तीन गुप्ति धर चाहना मुझे ॥ स० ॥ १ ॥ आज्ञा में धर्म अधर्म आण बिन, यही पाठ पढ़ाना मुझे ॥ स० ॥ २ ॥ आत्म ऋद्धि सिद्धि सुख पावे, सोही मारग बताना मुझे ॥ स० ॥ ३ ॥ अनादि से भ्रमण कियो भवारयें, अब शिवराह दिखाना मुझे ॥ स० ॥ ४ ॥

जिन वाणी सुन जान लियो अव, सव पापों से छुड़ाना मुझे ॥ स० ॥ ५ ॥ भाव दया यही स्वपरकी, सुध निज घर की लगाना मुझे ॥ स० ॥ ६ ॥ उलझ रह्यो मोह कर्म जाल से, सुमति दे सुलझाना मुझे ॥ स० ॥ ७ ॥ समकित व्रत पायो हुलासायो, आयो शरण निभाना मुझे ॥ स० ॥ ८ ॥ गुलावचन्द आनन्द भयो अति, सुख में सुख अव पाना मुझे ॥ स० ॥ ९ ॥

॥ सोरठा ॥

शहर जैतारण मांहिरे, लोंका गुजराती वली ।
सरूप रूपचन्द ताहिरे, तेहना उपाश्रय थकी ॥१॥
विक्रम संवत् जान रे, अठारह सत गुणतीस में ।
शुद्ध प्ररूपण मान रे, देखी पूर्व तिहां तिम लिखी ॥२॥
तिण अनुसारे देख रे, सूत्र तणा जेह पाठ युत ।
न्याय सहित सुविशेष रे, कहूं जिज्ञासु कारणे ॥३॥

॥ अथ हुण्डी की बोल ॥

तीनू हीं काल रा भाव केवल ज्ञानी दीठा, कोई जीव ने नव तत्व रा जाण पणा बिना संसार समुद्र सूं तिरतो दीठो नहीं । साख सूत्र सुयगडांग अध्ययन १२ गाथा १६ वीं ।

॥ दोहा ॥

तीन काल रा भावना, जाणक केवली सोय ।
नव तत्व जाण्या बिना, तिण्या न देखा कोय ॥१॥
यथा अवस्थित वस्तु ना, ज्ञाता नेता तंत ।
ते बुद्धा परतार कर, तारै कर्म नो अन्त ॥२॥
धुर सुयगडांगे कह्यो, अध्ययन बारमा मांहि ।
तत्व यथा तथ्य जानिये, सोलमी गाथा ताहि ॥३॥

॥ सूत्र पाठ ॥

तेतीय उपन्न मणा गयाइं, लोगस्स जाणंति तहा गयाइं ।
णेतारो अन्नेसि अणन्न णेया, बुद्धा हु ते अंतकड़ा भवंति ॥

प्र० श्रुतस्कन्ध सूत्र कृताङ्ग अ० १२ गाथा १६

॥ भावार्थ ॥

भूत, भविष्यत् और वर्त्तमान इन तीनों काल के भाव को जानने वाले, यथा अवस्थित वस्तुओं के और नव तत्वों के ज्ञाता नेता हों, स्वयं तरे और दूसरोंको तारे वे बुद्ध स्वतः तत्वों को जानते हुये कर्मों के अन्त करता बनते हैं । अर्थात् तत्वों को जानने से मुक्ति होती है ।

॥ बोल दूसरा ॥

राशि दो कही १ जीव राशि २ अजीव राशि । तीसरी राशि कहे जिण ने सात निन्हवां में छट्ठो निन्हव कह्यो । सा० सू० उववाई प्रश्न १६ वें ।

॥ दोहा ॥

राशि दोय जिनवर कही, जीव अजीव सु जोय ।
तृतीय राशि कोई कहे, तेह तो निन्हव होय ॥४॥
उववाई सूत्रे कह्यो, प्रश्न उन्नीसवें जान ।
मिश्र राशि तीजी कहे, ते सात निन्हव में मान ॥५॥
इक समय कार्य न हुवे, बहु रत्ता यह पेख ।
जीव है एक प्रदेश में, द्वितीय निन्हव इम देख ॥६॥
साधु लिङ्ग साधू नहीं, तृतीय निन्हव इम भास ।
चौथू निन्हव इम कहे, चिहूंगति क्षण २ नाश ॥७॥
इक समय दो किरिया हुवे, पञ्चम निन्हव एह ।
छट्ठा जीव अजीव मिल, तीजी राशि कहेह ॥८॥
कर्म सर्प कंचुकि परे, जीव तणो लागन्त ।
सप्तम निन्हव जाणवो, कहे एकान्त विरतन्त ॥९॥

॥ सूत्र पाठ ॥

सेजे इके गामागर णगर जाव सन्निवेसेसु, णिण्हका भवन्ति तंजहा—बहुरत्ता, जीव पदेसिया, अव्वत्तिया, सामुच्छिया, दोकिरिया ते राशिया, सव्वट्ठिया, इच्चे ते सत्त पव्वय णिण्हका ।

सू० उववाई प्रश्न १९ वाँ ।

॥ भावार्थ ॥

वे जो ग्राम आगर यावत् सन्निवेष मे जो निन्हव होते हैं . सो कहते हैं—१ बहुत समय में कार्य होय एक समय में नहीं होय [जमालीवत्]

२ एक प्रदेश में जीव है, ऐसा मानने वाला [तीसगुप्तवत्] ३ साधुओं को देख के कहै साधूपना है या नहीं [अषाढ़ाचार्य के शिष्यवत्] ४ नरकादि चारों गति का क्षण २ में विनाश होता है [अश्व मित्रवत्] ५ एक समय में दो किरिया लगती है ऐसा मानने वाला [गर्गाचार्य वत्] ६ जीव राशि १ अजीव राशि २ जीवाजीव राशि ३ यों तीन राशि मानने वाला [गोष्ठ महिलावत्] ७ जैसे सर्प के कञ्चुकी है वैसे जीव के कर्म लगते हैं ऐसा मानने वाला [ ] इस प्रकार जिन मत के छिपाने वाले प्रवचनों के निन्हव होते हैं।

॥ बोल तीसरा ॥

जीव अजीव त्रस स्थावर जाणे नहीं तिण रा पच्चक्खाण दुःपच्चक्खाण कह्या, साख सूत्र भगवती शतक ७ वां उद्देश्य २ रा।

॥ दोहा ॥

जीव अजीव जाणे नहीं, त्रस स्थावर नहीं जाण।
त्याग कहै मारण तणा, तेहना छे दुःपच्चक्खाण ॥१०॥
सप्तम शतके भगवती, द्वितीय उद्देशे पेख।
जाण्यां बिन व्रत किम हुवै, संवर आश्रयो लेख ॥११॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जस्सणं सव्व पाणेहिं, जाव सव्व सत्तेहिं, पच्चक्खायं मितिवदमाणस्स न एवं, अभी समणागयं भवइ, इमे जीवा इमे अजीवा इमे तस्स इमे थावरा, तस्सणं सव्व पाणेहिं जाव सव्व सत्तेहि पच्चक्खायं मितिवदमाणस्स णो सुपच्चक्खायं, दुपच्चक्खायं भवइ ॥

सूत्र श्री भगवती शतक ७ वाँ उद्देश्य २ रा।

॥ भावार्थ ॥

जो सर्व प्राणी यावत् सर्व सत्वों के मारने का प्रत्याख्यान कहै, किन्तु ऐसा नहीं जाने कि यह जीव है, यह अजीव है, यह त्रस है, यह स्थावर है, एसा अज्ञानी सर्व प्राण भूत जीव सत्व मारने के त्यार्ग किये कहैं तो उसके दुःपच्चक्खाण है, किन्तु सुप्रत्याख्यान नहीं।

॥ बोल चौथा ॥

जीव अजीव ने जाणै नहीं, जीव अजीव दोना ने जाणै नहीं तिण ने संयम री ओलखणा नहीं। साख सू० दशवैकालिक अध्ययन ४ गा० १२ वीं।

॥ दोहा ॥

दशवैकालिक में कह्यो, तूर्य अध्ययने ताहि।
जीव अजीव जाणै नहीं, बारवीं गाथा मांहि ॥१२॥
जीव अजीव अजाणतो, तसु संयम किम होय।
जाणी त्याग कियां थकां, चारित्र गुण अवलोय ॥१३॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जो जीवे वि न याणाइ, अजीवे वि न याणाइ।
जीवा जीवो अयाणतो, कह सो नाहीय सयम ॥१२॥

दशवैकालिक अ० ४ गाथा १२

॥ भावार्थ ॥

जो जीव को भी नही जाने, अजीव को भी नहीं जाने। जीवों अजीवों को ही नहीं जाने उसके संयम कहाँ है। अर्थात् जीवाजीव जाने विना संयम नहीं है।

॥ बोल पांचवां ॥

सम्यक्त्व बिना चारित्र नहीं समकित बिना व्रत नहीं। सा० सू० उत्तराध्ययन २८ वें गा० २६ वीं।

॥ दोहा ॥

समकित बिन चारित्र नहीं, नहीं समकित बिन व्रत।
उत्तराध्ययन अठबीसमें, गुणतीसमी गाथा सत्त ॥१४॥
दर्शन ज्ञान थकी हुवे, समकित चारित्र धर्म।
तिण सूं पूर्व समकित लह्यां, पासें चारित्र मर्म ॥१५॥

॥ सूत्र पाठ ॥

नत्थि चरित्त सम्मत्त विहुणं, दंसणे उभयव्वं।
सम्मत्त चरित्ताइ जुगवं, पुव्वं च सम्मत्तं ॥२६॥

सूत्र उत्तराध्ययन अ० २८ गा० २६

॥ भावार्थ ॥

सम्यक्त्व अर्थात् शुद्ध श्रद्धा बिना चारित्र नहीं होता है। ज्ञान से यथार्थ जान के शुद्ध श्रद्धने से सम्यक्त्वी होता है और सम्यक्त्वी होने से चारित्र गुण उत्पन्न होता है। इसलिये सम्यक्त्व चारित्र में पहिले सम्यक्त्व मुख्य है।

॥ बोल छट्ठा ॥

ज्ञान बिना दया नहीं दया चारित्र एक ही कह्यो। सा० सू० दशवैकालिक अ० ४ गा० १० वीं।

॥ दोहा ॥

दया नहीं है ज्ञान विन, चारित्र दयाज एक ।
ज्ञान सहित संयम हुवै, समझो आण विवेक ॥१६॥
प्रथम ज्ञान पाछे दया, इम सर्व संयती होय ।
अज्ञानी जाणै किस्यूं, पाप छेदै किम जोय ॥१७॥
चौथे अध्ययने कह्यो, दशवैकालिक वाय ।
दशमी गाथा ने विषे, भाख्यो श्री जिनराय ॥१८॥

॥ सूत्र पाठ ॥

पढमं नाण तओ दया, एवं चिट्ठइ सव्व संजए ।
अन्नाणी किं काही, किंवा नाहीय छेय पावगं ॥१०॥

॥ भावार्थ ॥

प्रथम ज्ञान और पीछे दया, अर्थात् ज्ञान द्वारा जीव अजीवादि को जानने से षट् जीव निकायों को मारने का त्याग करेगा तब दया होगी। इसी तरह सर्व संयती होते है। अज्ञानी को जब यथार्थ ज्ञान ही नहीं तब वह दया किसकी करेगा और कैसे पाप कर्म छेदेगा।

॥ बोल सातवां ॥

असंयती अव्रती अपच्चक्खाणी ने सूझतो असूझतो, प्राशुक, अप्राशुक देवै तिण ने एकान्त पाप कह्यो। सा० सू० भगवती श० ८ उ० ६

इम सप्तम अंगेह रे, आनन्द श्रावक अभिग्रह लियो ॥३३॥
पुनः सम्यक् दृष्टि जेह रे, असंयती नां दान नें ।
मोक्ष अर्थ अछेह रे, जो कहा देवै जान करि ॥३४॥
तो पिण पाप ही लाग रे, तुम लेखे मिथ्यात्व नूं ।
नहीं मुक्ति रो माग रे; सांसारिक जे दान छै ॥३५॥
मोक्ष अर्थ दियां तेह रे, तेहने एकान्त पाप कहो ।
तो अनुकम्पा एह रे, मुक्ति काज नहीं जाणवी ॥३६॥
अनुकम्पा संसार रे, स्नेह राग युत जे हुवै ।
आखया पाप अठार रे, तिण में राग नवमूं कह्यो ।३७।
असंयती नूं जोय रे, अथवा अविरति तणो ।
पुद्गलीक सुख वंछै सोय रे, ते निज आज्ञा बाहिरे ॥३८॥
करणी जे करै कोय रे, पुण्य पुद्गल सुख कारणै ।
तिण में धर्म न होय रे, पुण्य बन्ध पिण हुवै नहीं ॥३९॥
भगवती वृत्ति मझार रे, अर्थ कियो इण पाठ नूं ।
मुक्ति अभिलाषा धार रे, दीधां पाप एकान्त हुवै ॥४०॥
तिण लेखै पिण तंत रे, असंयती वा अविरति नूं ।
दान पाप एकान्त रे, मोक्ष मार्ग नहीं जाणवो ॥४१॥
एकान्त पाप नूं अर्थ रे, अष्टादशमूं जो करे ।
तो ठाम २ सूत्रार्थ रे, एकान्त पाठ कह्या बहु ॥४२॥
सुख शय्या कही च्यार रे, ठाणांगे चौथा स्थान में ।
एकान्त निरजरा धार रे; मुनि सम भावे वेदन सहै ॥४३॥

जो सम भावे न सहेह रे, तो पाप एकान्ते हुवै ।
इहां मुनि रे किस्यूं गिणेह रे, एकान्त पाप मिथ्यात्व नूं ।४४
वलि धुर शतक निहाल रे, अष्टम उद्देशे कह्यूं ।
अव्रती ने एकान्त बाल रे, एकान्त पण्डित साधु ने ॥४५॥
अष्टम शतक रे मांहि रे, छठे उद्देशे भगवती ।
तथा रूप संयती ताहि रे, दियां एकान्त निर्जरा हुवे ॥४६
जो एकान्तक नूं जेह रे, छेहलो भेद एक ही कहै ।
तो ठाम २ सूत्रेह रे, एकान्त अर्थ छेहलूं किस्यूं ॥४७॥
तिण सूं एकान्त पाप रे, असंयती अविरति ने ।
दीधां जिन कह्यो आप रे, पाठ मांहि प्रकट पणे ॥४८॥
एक अन्त दो शब्द रे, तेहना अर्थ छे जूजूआ ।
एक तेह केवल लब्ध रे, अन्त तेह निश्चय जाणवो ॥४९॥
छट्ठा काण्ड मझार रे, नवम श्लोके देख लो ।
अन्त तेह निश्चय धार रे, हैम नाम माला विषे ॥५०॥
तिणसूं भगवती मांहि रे, दियां असंयती अविरति ने ।
एकान्त पाप हिज थाय रे, प्रभु आख्यो तेह सत्य है ॥५१॥

॥ बोल आठवां ॥

शास्वता अशास्वता री खबर नहीं, तिण ने बोध रहित कह्यो । सा० सू० सूयगडांग अ० १ उ० २ गाथा ४ थी ।

॥ दोहा ॥

शास्वत अने अशास्वता, तेहनी खबर न कांय ।
बोध रहित तिण ने कह्यो, प्रथम सुयगडांग मांय ॥५२॥
बाल थकां पंडित पणों, माने तेह अयाण ।
नियत अनियत जाणै नहीं, द्वितीयाध्ययने चौथी जाण ।५३

॥ सूत्र पाठ ॥

एवं मेंयाणि जयंता, बाल पंडिय माणिणो । नियया निययं संतं, अयाणंता अबुंद्धिया ॥४॥

प्र० सू० कृताङ्ग अ० १ उ० २ गा० ४

॥ भावार्थ ॥

वाल अर्थात् मूर्ख अपने को पण्डित मान रहे है। परन्तु उन्हें नियत अनियत यानी शास्वत अशास्वत की खबर नहीं है वे अजान बोध रहित हैं।

॥ बोल नवमां ॥

साधू थोड़ा असाधू घणां। सा० सू० दशवैका-कालिक अ० ७ गा० ४८ वीं ।

॥ दोहा ॥

साधू थोड़ा लोक में, घणा असाधू जान ।
ते असाधु थका बहु इम कहे, अमे साधु गुणखान ॥५४॥
दशवैकालिक सातमें, अड़तालीसवों गाथा ताहि ।
असाधु ने साधु कहणो नहीं, साधु ने साधु कहाहि ॥५५॥

॥ सूत्र पाठ ॥

बहवे इमे असाहु, लोये वुच्चन्ति साहुणो ।

न लवे असाहु साहुत्ति, साहु साहुत्ति आलवे ॥४८॥

दशवैकालिक अ० ७ गा० ४८ ।

॥ भावार्थ ॥

बहुत से ऐसे असाधु लोक में हैं जो कहते हैं हम साधु हैं। परन्तु विज्ञजनों को असाधुओं को साधु नहीं कहना चाहिये।

॥ बोल दशमां ॥

साधु रे सर्व थकी प्राणातिपात रा त्याग छै तिण रे अपच्चक्खाण री अपरिग्रह री किरिया नहीं। सा० सू० पन्नवणा पद २२ वें।

॥ दोहा ॥

सर्व प्रकारे साधु रे, प्राणातिपात रा त्याग।
अपच्चक्खाण ने परिग्रह तणी, तसु किरिया नहीं लाग ॥५६॥
बावीशम पद भाखियो, पन्नवणा रे मांहि।
प्राणातिपात निवृत्ति ने, अव्रत परिग्रह नांहि ॥५७॥

॥ सूत्र पाठ ॥

पाणातिपात विरयस्सणं भन्ते जीवस्स परिग्गहिया किरिया कज्जति? गोयमा णो इणट्ठे समट्ठे, पाणातिपात विरयस्सणं भन्ते जीवस्स अपच्चक्खाण वत्तिया किरिया कज्जति? गोयमा णो इणट्ठे समट्ठे।

पन्नवणा पद २२ वाँ।

॥ भावार्थ ॥

प्राणातिपात से हे भगवान् जो जीव निवृत्ते हैं उन्हें परिग्रह की क्रिया लगती है। उत्तर—हे गौतम यह अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् नहीं लगती है। प्राणातिपात से हे भगवान् जो जीव निवृत्ते हैं उन्हें अप्रत्याख्यान की क्रिया लगती है। उत्तर—हे गौतम यह अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् नहीं लगती है।

॥ बोल ग्यारवां ॥

साधु रो आहार असावद्य कह्यो, व्रत में कह्यो, मोक्ष साधन रो हेतु कह्यो, पाप कर्म रहित कह्यो। सा० सू० दशवै० अ० ५ गाथा ६२ वीं।

॥ दोहा ॥

असावद्य साधु तणो, जयणायुत जेह आहार।
पाप रहित छे व्रत में, भाख्यो श्री जगतार ॥५८॥
दशवैकालिक पंचमे, प्रथम उद्देश मझार।
गाथा बाणवीं में कह्यो, मोक्ष साधन सुविचार ॥५९॥

॥ सूत्र पाठ ॥

अहो जिणेहिं असावज्जा, वित्ती साहूण देसिया।
मोक्ख साहण हेउस्स, साहु देहस्स धारणा ॥ ९२ ॥

दशवैकालिक अ० ५ गा० ९२

॥ भावार्थ ॥

जिनेश्वरों ने साधुओं का आहार करना असावद्य कहा, वृत्ति पुष्ट का

कारण कहा तथा मोक्ष साधन का उपाय और साधु के शरीर का धारण करने वाला है ।

॥ बोल बारवां ॥

भगवान श्री महावीर स्वामी ठंडो आहार घणा दिनां रो नीपनूं लियो कह्यो । सा० सू० अ० आचाराङ्ग अध्ययन ८ उद्देशा ४ गाथा १३ वीं ।

॥ दोहा ॥

घणा दिना रो नीपनूं, शीतल वासी पिण्ड ।
शान्ति भाव धरि लेवता, महावीर गुणमंड ॥६०॥
प्रथम अङ्ग में देखल्यो, अष्टम (नवम) अध्ययन उदार ।
चौथा उद्देशा विषे, तेरवीं गाथा सार ॥ ६१ ॥

॥ सूत्र पाठ ॥

अवि सूइय वा सुक्कं वा, सीय पिंडं पुराण कुम्मासं ।
अदु बक्कसं पुलागंवा, लद्धे पिंडे अलंद्धए दविए ॥ १३ ॥

॥ भावार्थ ॥

भगवान् श्री महावीर स्वामी. छद्मस्थपने में भीजा हुआ सूखा ठंडा पुराणा बहुत दिनों का राँधा हुवा उड़द का तथा पुराने धान्य का बना हुआ निरस धान्य का बना हुआ आहार मिलने से शान्ति भाव से भोगवते यदि नहीं मिलता तो भी शान्ति भाव से रहते ।

॥ बोल तेरवां ॥

केवल ज्ञानी री प्ररूपणा बिना आप आप री

प्ररूपणा करे तिण ने किञ्चित् मात्र जाणपणो नहीं। सा० सू० सुयगडांग अ० १ उ० २ गाथा १४ वीं।

॥ दोहा ॥

केवली प्ररूप्या धर्म बिन, अपनी मति अनुसार।
करै प्ररूपण जेहनें, जाण पणो न लिगार ॥६२॥
इक २ माहण श्रमण वलि, कहै म्हे छां सर्व जाण।
पिण प्राणी सहु लोक में, तेहना जेह अजाण ॥६३॥
ते किञ्चित नहीं जाणता, धुर सुयगडांग मांहि।
प्रथम अध्ययने जाणिये, द्वितीय उद्देशे ताहि ॥६४॥

॥ सूत्र पाठ ॥

माहणा समणा एगे, सव्वे नाणं सयं वए।
सव्व लोगे वि जे पाणा, न ते जाणं किचणं ॥ १४ ॥

॥ भावार्थ ॥

जगत में एक २ श्रमण ब्राह्मण ऐसे हैं सो कहते हैं हम सर्व जानकार हैं परन्तु लोक में सर्व प्राणी हैं उन्हें वे किञ्चित् मात्र नहीं जानते हैं। अर्थात् निज मतानुसार एक २ श्रमण ब्राह्मण कहते हैं हम सर्व जान हैं परन्तु उन्हें किञ्चित् मात्र जाणपना नहीं है।

॥ बोल चौदमां ॥

श्रावक ने केवलज्ञानी प्ररूप्या धर्म बिना दूजो धर्म मानणो नहीं। सा० सू० उववाई प्र० २० वां

॥ दोहा ॥

श्रावक सत्य करि जानता, केवली भाषित धर्म।
दूजो धर्म न मानणो, एह जिन शासन मर्म ॥६५॥
निर्ग्रन्थ वचनज अर्थ है, निर्ग्रन्थ प्रवचन परमार्थ।
अन्य जन ने पिण इम कहे, प्रवचन विना अनर्थ॥६६॥
लाध्या ग्रह्या अर्थ पूछ कर, धाख्या विनय सहित।
अस्थि अस्थि मज्जा तसु, प्रेम राग रङ्ग रत्त ॥६७॥
सूत्र उववाई में कह्यो, प्रश्न वीसवें ठीक।
शंक रहित जिन वचन में, त्यांने मुक्ति नजीक ॥६८॥

॥ सूत्र पाठ ॥

निग्गन्थे पावयणे निस्संकिया, णिकक्खिया, निव्वितिगिच्छा, लद्धट्ठा, गहियट्ठा, पुच्छियट्ठा, अभिगट्ठा, विणिच्छियट्ठा, अट्ठि मिंज पेमाणु राग रत्ता, अयमाउसो णिग्गन्थे पावय णे अट्ठे अयं परमट्ठे, सेसे अणट्ठे।

सू० उववाई प्र० २० वाँ

॥ भावार्थ ॥

वे श्रावक निर्ग्रन्थ प्रवचन में निःशंक है अर्थात् शङ्का रहित है आ-काँक्षा रहित है अर्थात् पाखण्डियों का ढोंक देख के उनकी वाञ्छा नही करते। विचिकिच्छा रहित है यानी स्वयं जो जिनाज्ञा माँहि की करणी करते हैं उसके फल में सन्देह नहीं रखते। वे सूत्रों का अर्थ पाये है, ग्रहण किये हैं, अर्थ पूछे है, प्रवचनो के अर्थों के सन्मुख हुए हैं, और विनय सहित ग्रहण किये हैं, जिनकी अस्थि और अस्थि की मज्जा जिन

वचनों से रंगी हुई हैं, अर्थात् निग्रन्थ प्रवचनों में लवलीन हो रहे हैं, और दूसरों को भी ऐसा ही कहते हैं कि "आयुष्मानों" निर्ग्रन्थ वचन है सो ही अर्थ है, सोही परमार्थ है। इनके अतिरिक्त शेष सब अनर्थ हैं।

॥ बोल पन्द्रवां ॥

समकिती ने निसङ्क निकंख विदगंछा रहित रहणो कह्यो सा० सू० उत्तराध्ययन अ० २८ वां गा० ३१ वों।

॥ दोहा ॥

शंका नहीं जिन वचन में, कंखा अनमत नांहि।
करणी फल संदेह नहीं, ते नि विदगंछ कहाहि ॥६९॥
अमूढ दिट्ठी परमत तणी, देख प्रशंसा आदि।
अन्य मत दृष्टि करे नहीं, चित में धरे समाधि ॥७०॥
उववूह गुणी ना गुण करै, स्थिरि कारण स्थिर होय।
वत्सल भाव सहु थकी, धर्म प्रभाव न जोय ॥७१॥
उतराध्ययन अठवीस में, समकित ना आचार।
आराधे तेह समकिती, इक तीसवीं गाथा धार ॥७२॥

॥ सूत्र पाठ ॥

निसंकिय निकंखिय निव्वितिगिच्छा अमूढ दिट्ठीय उववूह थिरीकरणे वच्छल पभावणे अट्ठ।

उत्तराध्ययन अ० २८ गा० ३१।

॥ भावार्थ ॥

१ जिन वचनों में शङ्का नहीं करे अर्थात् भगवान ने एक शरीर में अनन्ते जीव आदि अनेक बातें कही है सो सत्य है।

२ निकंखिय अर्थात् जो अन्य मत वाले कहते हैं वह भी ठीक होगा ऐसी वाँछा न करे।

३ निव्वितिगिच्छा यानो जो तप नियमादि करणी करता हूं सो फल-दायक होगी या नहीं ऐसी विचारणा नहीं करे।

४ अमूढ दिट्ठिय अर्थात् अन्य मत वालो की अनेक प्रकार प्ररूपणा को देखके उनकी तरफ खयाल न करे।

५ उववूह यानी गुणवन्त पुरुषों के गुणगान करे।

६ थिरि करणे अर्थात् सम्यक्त्व मे स्थिर रहै।

७ वत्सल यानो षट् कायों के जीवो पै वात्सल्य भाव रक्खें।

८ प्रभावना अर्थात् जैन धर्म की प्रभावना करे। यह सम्यक्त्व के आठ आचार कहे हैं।

॥ बोल सोलमां ॥

केवलज्ञानो रा वचनां री खबर नहीं जिकां रे घणो बाल मरण अकाम मरण होसी। सा० सूत्र उत्तराध्ययन अ० ३६ गा० २६० वीं।

॥ दोहा ॥

जे जिन वचन जाणे नहीं, बाल मरण तसु जाण।
घणा अकाम मरणे मरे, उत्तराध्ययने छत्तिसमें पिछाण।७३।

॥ सूत्र पाठ ॥

बाल मरणाणि बहुसो, अकाम मरणाणि चेवय बहूसो।
मरिहिं ति ते वराया, जिन वयण जे न याणंति ॥२६०॥

॥ भावार्थ ॥

बहुत बाल मरण और बहुत से अकाम मरण मरे जो जिन बचनों को नहीं जानता हैं।

॥ बोल सतरहवां ॥

प्रवचन सोही अर्थ, प्रवचन सोही परम अर्थ, सा० सू० उववाई प्र० २० वीं।

॥ दोहा ॥

प्रवचन सोही अर्थ है, प्रवचन सो परमार्थ।
उववाई प्रश्न बीसवें, बाकी सर्व अनर्थ ॥ ७४ ॥

॥ सूत्र पाठ ॥

अयमाउसो णिग्गंथे पावयणे अट्ठे. अयं परमट्ठे, सेसे अणट्ठे।
उववाई प्र० २० वें।

॥ भावार्थ ॥

हे आयुष्मानों निर्ग्रन्थ प्रवचन ही अर्थ है यही परमार्थ है। इनके सिवाय सर्व अनर्थ है।

॥ बोल अठारहवां ॥

केवलियां रो आचार सोही छद्मस्थ रो आचार, केवलियां रो अनाचार सोही छद्मस्थ रो अनाचार। साख सूत्र आचारंगा अ० २ उ० ६ ठो।

॥ दोहा ॥

केवलियां रो आचार सो, छद्मस्थ रो आचार ।
केवलियां रो अनाचार ते, छद्मस्थ रो अनाचार ॥७५॥
कुशल पुरुष जे केवली, नहीं बन्धाय मूकाय ।
जे आरंभ्यो तिम आरंभे, ते बुद्धिवन्त कहाय ॥७६॥
प्रथम आचाराङ्ग कह्यो, दूजे अध्ययन उदार ।
छट्ठा उद्देशा विषे, निपुण न्याय अवधार ॥ ७७ ॥

॥ सूत्रपाठ ॥

कुसले पुण णो वद्धे णो मुक्के से ज च आरम्भे जे च अणारम्भे अणा रद्धइ च ण आरम्भे छण छण परिनाय लोग सन्नं च सव्वसो ।

आचाराङ्ग अ० २ उ० ६ ठा

॥ भावार्थ ॥

केवली भगवान वन्धे हुवे नहीं, छूटे हुवे नहीं, जैसे वे वर्त्त होय वैसे ही करना और जैसा उनका आचरण नहीं है वैसा नहीं आचरे। अर्थात् संयम क्रिया जैसी केवलियों की है वैसी ही अकेवलियों की है। हिंसा तथा लोक संज्ञा को जान कर उनका परिहार करना।

॥ बोल उन्नीसमां ॥

वत्तव्वया २ कही १ स्व समय वत्तव्वया, २ पर समय वत्तव्वया। स्व समय वत्तव्वया की तो साधु आज्ञा दे तथा मानण योग छै, पर समय वत्तव्वया में सात अवगुण कह्या— १ अनर्थ, २ अहित, ३

असंयम, ४ अक्रिया, ५ उन्मार्ग, ६ उपयोग रहित, ७ मिथ्यात्व सहित। सा० सू० अनुयोग द्वार सात नयां को समास पूरो हुवो जठै।

॥ दोहा ॥

दोय वक्तृता जाणवी, स्वपर समय विचार।
उभय मिल्यां तीजी हुवे, आखी अनुयोग द्वार ॥७८॥
वक्तृता स्व समय जे, श्री जिन आगम सार।
पाखण्ड रचिता पर समय, तेह नी बात असार ॥७९॥
मुनि आज्ञा स्व समय नी, पर समय अवगुण सात।
अहित अनर्थ असद्भाव वलि, अक्रिया उन्मार्ग जात ॥८०॥
ते उपदेश वा योग्य नहीं, दरशन जे मिथ्यात।
यह सातों अवगुण कह्या, नहीं गुण छै तिलमात ॥८१॥
कांइक जिन सिद्धान्त नी, कांइक पर सिद्धान्त।
बिहुं मिल तीजो पिण हुवे, वक्तव्यता आख्यात ॥८२॥
स्व तेह स्व मां प्रक्षेपवो, पर तेह पर मां जोय।
तिण सु दोय वक्तव्यता, न्याय हिय अवलोय ॥८३॥
जिन प्रणीत सिद्धान्त ते, संक्षेपें आख्यात।
वलि विस्तार प्ररूपणा, कहै दृष्टान्त विख्यात ॥८४॥
विशेष करि दर्शावतां, परिषध में उपदेश।
मुनि स्व समय दृढ़ावता, जिनोक्त वचन हमेश ॥८५॥

आगम वच ते स्व समय, तेहिज मानण योग ।
वक्तृता पर शास्त्र नी, जाणो तास अयोग ॥८६॥
नैगम संग्रह व्यवहार जे, इच्छे वक्तृता तीन ।
स्व पर मिश्र इम त्रण हुवे, ऋजु सूत्र दोय लीन ॥८७॥
शब्दादिक त्रण नयतिका, इच्छे वक्तृता एक ।
स्व समय तेहिज सत्य है, पर ते सहु अविवेक ॥८८॥

॥ सूत्र पाठ ॥

से किं त वत्तव्वया? वत्तव्वया तिविहा पन्नता, तजहा—१ ससमय वत्तव्वया, २ पर समय वत्तव्वया, ३ ससमय पर समय वत्तव्वया, से किं तं ससमय वत्तव्वया? ससमय वत्तव्वया—जत्थणं ससमय आघ विज्जति पणण विज्जति परूविज्जति दसइ नि दंसिज्जइ उवदसिज्जइ से त ससमय वत्तव्वया। से किं तं पर समय वत्तव्वया? जत्थणं पर समय आघविज्जति जाव उवदंसिज्जति से त पर समय वत्तव्वया। से किं त ससमय पर समय वत्तव्वया? जत्थणं ससमय पर समय आघविज्जंति जाव उवदसिज्जति से त ससमय परसमय वत्तव्वया इयाणिंको न ओ क वत्तव्वय इच्छति? तत्थ णेगम सगह ववहारो तिविहं वत्तव्वय इच्छति तंजहा—ससमय वत्तव्वय पर समय वत्तव्वयं, ससमय पर समय वत्तव्वयं। उज्जु सुओ दुविहं वत्तव्वय इच्छई तजहा—ससमय वत्तव्वयं पर समय वत्तव्वय तत्थणं जासा ससमय वत्तव्वया सा ससमय पट्ठिाजा, सा परसमय वत्तव्वया सा पर समय पारिट्ठाजा, तम्हा दुविहा वत्तव्वया णत्थि तिविहा वत्तव्वया। तिण्णि सद्दा नया,

राग ससमय वत्तव्वयं इच्छन्ति गात्थि पर समय वत्तव्वया, कम्हा ? जम्हा परसमय १ अगाट्ठे, २ अहेउ, ३ असब्भावे, ४ अकिरिए, ५ उम्मग्गे, ६ अगुवएसे, ७ मिच्छा दसगा, मितिकट्टु तम्हा सव्व ससमय वत्तव्वया गात्थि पर समय वत्तव्वया, से तं वत्तव्वया ।

अनुयोग द्वार सूत्र ।

॥ भावार्थ ॥

प्रश्न—वक्तव्यता कितने प्रकार की है । उत्तर—वक्तव्यता तीन प्रकार की सो कहते हैं:—१ स्व समय, २ पर समय, ३ और स्वपर समय वक्तव्यता । स्वसमय वक्तव्यता किसे कहते हैं ? "स्वसमय अर्थात् स्वमत जिन प्रणीत सूत्रों को संक्षेप से कहे, विस्तार पूर्वक कहे, प्ररूपणा करे, दृष्टान्तादि कर दर्शावे, प्रवधा में उपदिशे, विशेष कर दर्शावे, सो स्वसमय वक्तव्यता ।" अहो भगवान् पर समय वक्तव्यता किसे कहते हैं ? "जो अन्य मत के शास्त्र उक्त प्रकार सामान्य प्रकार कहे, प्ररूपे, दृष्टान्त से कहे, विस्तार से कहे, विशेष कर दर्शावे और उपदिशे, वह पर समय वक्तव्यता है ।" स्वपर समय वक्तव्यता किसे कहते हैं ? "जो स्वमत के शास्त्रों और परमत के शास्त्रों को शामिल करके कहे यावत् उपदिशे, सो स्वपर समय वक्तव्यता है ।" अब नयों का समास कहते हैं—नैगम संग्रह और व्यवहार यह तीन नय वस्तु वक्तव्यता को माने, और ऋजु सूत्र नय दो प्रकार की वक्तव्यता को माने, स्वसमय और पर समय वक्तव्यता । परन्तु दोनों को मिला के मिश्र वक्तव्यता को नहीं माने क्योंकि जो स्व समय वक्तव्यता है उसे स्वमत में स्थापन करे, और जो पर समय वक्तव्यता है उसे पर मत में स्थापन करे, इसलिये दोनो ही प्रकार की वक्तव्यता है । शब्द और समभिरूढ़ और एवं भूत नय केवल एक स्वसमय वक्तव्यता को ही माने, परन्तु पर समय वक्तव्यता को नहीं इच्छे, क्योंकि जो पर समय वक्तव्यता है उसमे अनर्थ है, अहेतू है, असद्भाव है,

क्रिया रहित है, उन्मार्ग है, कुउपदेश है, मिथ्या दर्शन है। यह सात दोष पर शास्त्र में है। अतः एक स्व समय वक्तव्यता ही है पर समय वक्तव्यता नहीं।

॥ बोल बीसमां ॥

केवली प्ररूपियो धर्म एकान्त प्रधान कह्यो सा० सू० प्र० सूयगडांग अ० ६ गा० ७।

॥ दोहा ॥

केवल ज्ञानी भाषियो, तेहिज धर्म एकान्त।
धुर सुयगडांगे छट्ठे, सप्तमी गाथा तंत ॥८९॥
प्रधान धर्म श्री जिन कह्यो, तसु नेता वर्द्धमान।
शोभे सहु देवां विचे, इन्द्र समा गुण खान ॥९०॥
सब नेतां में श्रेष्ठ है, काश्यप गोत्र उत्पन्न।
दिव्य धर्म जिनवर कह्यो, तेहिज धर्म सुमन्न ॥९१॥

॥ सूत्र पाठ ॥

अणुत्तरं धम्म मिणा जिणाणं, णेया मुणी कासव आसुपन्ने।
इन्देव देवाण महाणुभावे, सहस्स णेता दिवियां विसिट्टे ॥७॥

प्र० सुयगडांग अध्ययन ६ ट्ठा।

॥ भावार्थ ॥

प्रधान धर्म है जिनेश्वरों का कहा हुआ, उसके नेता मुनीश काश्यप गौत्रोत्पन्न श्री महावीर स्वामी हैं, वे हजारों नेताओं में सुशोभित हैं।

॥ बोल इक्कीसमां ॥

केवली प्ररूप्यो धर्म यथार्थ सरल शुद्ध माया कपटाई रहित कह्यो। सा० सू० सुयगडांग अ० ६ गाथा १।

॥ दोहा ॥

धर्म यथा तथ्य आखियो, जेह माहण मतिवन्त।
कपट रहित तेह सरल छै, जिनोक्त धर्म सुन तन्त ॥८२॥
प्रथम सुयगडांगे कह्यो, नवम अध्ययन रे मांहि।
पहिली गाथा ने विषे, जिन कह्यो धर्म कहाहि ॥८३॥

॥ सूत्र पाठ ॥

कयरे धम्मे अक्खाये, माहणेण मति मता।
अज्जुं धम्म जहा तच्चं, जिणाणां तं सुणेह मे ॥१॥

प्र० सूत्र कृतांगे नवम अध्यायने १ गाथा

॥ भावार्थ ॥

माहण अर्थात् मत हनों २ ऐसा उपदेश है जिनका वे मुनि कैसा धर्म कहै—ऋजु अर्थात् सरल माया कपटाई रहित जैसा जिनेश्वरों से सुना है वैसा ही धर्म कहै।

॥ बोल बावीसमां ॥

जिण करणी में किञ्चित मात्र हिंसा नहीं ते करणी ज्ञान रो सार कही। सा० सू० प्र० सुयगडांग अध्ययन १ उ० ४ गाथा १० वीं।

॥ दोहा ॥

किञ्चित्‌मात्र हिंसा नहीं, ते करणी करे आर्य ।
धुर सुयगडांगे कह्यो, ज्ञान सार तेह कार्य ॥९४॥
अहिंसा समता धरै, ज्ञान तणो यह सार ।
एहिज जाणपणो सिरे, भाष्यो श्री जगतार ॥९५॥
प्रथमाध्ययने चतुर्थे, उद्देशे दशमी गाह ।
अहिंसा में वर्त्तता, ते विज्ञानी कहाह ॥९६॥

॥ सूत्र पाठ ॥

एवं नाणिणो सारं, जेन हिंसइ किंचियां ।
अहिंसा समयं चेव, एतावत वियाणिया ॥१०॥

प्र० सूत्र कृताङ्ग १ अध्ययने ४ उद्देशे १० गाथा ।

॥ भावार्थ ॥

ज्ञान पाने का, निश्चय कर के यही सार है कि किञ्चितमात्र भी हिंसा ,नहीं करे अहिंसा और समता धरे यही ज्ञान विज्ञान है ।

॥ बोल तेवीसमां ॥

केवल ज्ञानी भाष्यो धर्म सन्देह रहित कह्यो ।
सा० सू० प्र० सुयगडांग अध्ययन १० वें गा० ३ री

॥ दोहा ॥

संदेह रहित सु आखियो, केवली भाषित धर्म ।
आतम वत् पर प्राणी गिण, न करे हिंसा कर्म ॥९७॥

शुद्ध आहार लेवे सदा, संचय न करे लिगार ।
सुयगडांग दशमें कह्यो, तीजी गाथा सार ॥९८॥

॥ सूत्र पाठ ॥

सुयक्खाय धम्मे वितिगिच्छ तिरणे ।
लाढे चरे आय तुले पयासु ॥
आयं न कुज्जा इह जीवियट्ठी ।
चयं न कुज्जा सु तवस्सि भिक्खू ॥३॥

॥ भावार्थ ॥

समाधिवन्त पुरुष केवली भाषित धर्म को सन्देह रहित मान कर सर्व जीवों को आत्म तुल्य मानता हुआ निर्दोष आहार की गवेषणा करके विचरे । असंयम जीवितव्य के लिये पापाश्रव करे नहीं, ऐसे सु-तपस्वी साधु धनधान्यादि आहार पाणी का संचय न करे ।

॥ बोल चोवीसमां ॥

आप रो छान्दो रूंधै तेहिज धर्म । सा० सूत्र उत्तराध्ययन अ० ४ गा० ८ वीं ।

॥ दोहा ॥

छांदो रूंधे आपणो, तेहिज धर्म उदार ।
बहु वर्ष पूर्वां लगे, रोके स्वेच्छाचार ॥९९॥
पर छन्दे जिम अश्व लहै. योग्यपणो अवधार ।
तिम अप्रमत्त पणे मुनि, लोपे नहीं गुरूकार ॥१००॥

शीघ्र पणें कर्म चय करी, पामे मोक्ष प्रधान।
चौथा उत्तराध्ययन में, अष्टम गाथा जान ॥१०१॥

॥ सूत्र पाठ ॥

छन्द निरोहेण उवेइ मोक्खं, आसे जहा सिखिये वम्म धारी।
पुव्वाइं वासाइ चर अप्पमत्तो, तम्हा मुणी खिप्प मुवेइ मोक्खं ॥८॥

उत्तराध्ययन अ० ४।

॥ भावार्थ ॥

अपना छन्दा अर्थात् अपनी इच्छा का निरोध करने से मुक्ति होती है। जैसे जातिवन्त अश्व (घोड़ा) सवार की इच्छानुसार रहने से योग्यता प्राप्त करके दुःखों से छुटकारा पाता है। वैसे ही मुनि पूर्व वा वर्षों पर्यन्त अपनी इच्छा (छन्दा) को रोक के गुर्वाज्ञा प्रमाण चलने से अप्रमत्तपने विचरता हुआ मोक्ष प्राप्त करता है।

॥ बोल पच्चीसवां ॥

केवली प्ररूप्यो धर्म अहिंसा संयमो तवो कह्यो सा० सू० दशवैकालिक अध्ययन १ गा० १ ली।

॥ दोहा ॥

दशवैकालिक में कह्यो, धुर अध्ययन मझार।
धुर गाथा केवली प्रणित, अहिंसा धर्म सार ॥१०२॥
अहिंसा संयम तपो, यह धर्म मंगलीक।
तासु नमे सर्व देवता, जासु धर्म मन ठीक ॥१०३॥

॥ सूत्र पाठ ॥

धम्मो मंगल मुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो ।

देवावि तं नमं संति, जस्स धम्म सयामणो ॥१॥

दशवैकालिक अ० १

॥ भावार्थ ॥

अहिंसा संयम तप रूप धर्म उत्कृष्ट मङ्गल है, जिनका मन सदा धर्म में है उन्हें देवता भी नमस्कार करते हैं।

॥ बोल छवीसवां ॥

अपछन्दा री प्रशंसा करै करावै करता ने भलो जाणै तो चौमासी प्रायश्चित कह्यो। सा० सूत्र निशीथ उद्देशे ११ वें।

॥ दोहा ॥

विकरण प्रशंसा करे, अपछन्दा री सोय।

प्रायश्चित्त मुनि ने कह्यो, निशीथ ग्यारहवें जोय ॥१०४॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू अहाछन्दं पसंसइ पसंसं तं वा साइज्जइ ॥१८७॥

निशीथ उद्देशा ११ वाँ।

॥ भावार्थ ॥

जो साधु अपछन्दा अर्थात् अपनी इच्छानुसार चलने वाला अविनीत की प्रशंसा करे करावे अनुमोदे तो चौमासी प्रायश्चित आवे।

॥ बोल सतावीसवां ॥

बाल मरण री प्रशंसा करे करावे अनुमोदे तो प्रायश्चित्त कह्यो । सा० सू० निशीथ उद्देशे ११ वें ।

॥ दोहा ॥

मुनिवर बाल मरण तणी, करै प्रशंसा कोय ।
करतां प्रते अनुमोदियां, दंड निशीथ में जोय ॥१०५॥

॥ सूत्र पाठ ॥

बाल मरणाणि वा पससइ पसस तं वा साइज्जइ ।

निशीथ उद्देशा ११ वाँ

॥ भावार्थ ॥

बाल मरण अर्थात् बिना अनशन किये मिथ्यात सहित मरे उसकी प्रशंसा करे करावे और उसका अनुमोदन करे तो प्रायश्चित्त ।

॥ बोल अठावीसवां ॥

जो साधु गृहस्थ ने अणतीर्थी ने १ असण, २ पाण, ३ खादिम, ४ स्वादिम, ५ वस्त्र, ६ पात्र, ७ कम्बल, ८ पाय पुच्छण, ये आठ बोल देवे देवावे देतां ने भलो जाणे तो चौमासी प्रायश्चित्त कह्यो । सा० सू० निशीथ उद्देशे १५ वें ।

॥ दोहा ॥

अन्य तीर्थि वा गृहस्थ ने, च्यार प्रकारे आहार ।
वस्त्र पात्र कम्बल वली, पाय पुच्छणो धार ॥१०६॥

ये आठ बोल देवें तसु, तथा देवावे ताय ।
देतां प्रते भलो जाणियां, दंड चौमासी आय ॥१०७॥
निशीथ उद्देशे पन्दरहवें, भाष्यो श्री जगतार ।
पक्षपात सहु परिहरी, जोवो नयण उघार ॥१०८॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू अराण उत्थिएण वा, गारत्थिएण वा, असणं वा, पाणं वा, खाइमं वा, साइमं वा, देयइ देयं तं वा, साइज्जइ ॥ ७८ ॥
जे भिक्खू अराण उत्थियेण वा, गारत्थिएण वा, वत्थं वा, पडिग्गहं वा, कम्बलं वा, पाय पुच्छणं वा, देयइ देयं तं वा साइज्जइ ॥ ७९ ॥

निशीथ उद्देशा १५ वाँ

॥ भावार्थ ॥

जो साधु अन्य तीर्थी को गृहस्थ को आहार पानी खादिम स्वादिम देवे देवावे देते हुए को भला जाने तो प्रायश्चित्त। जो साधु अन्य तीर्थी को गृहस्थ को वस्त्र पात्र कम्बल पाद (पग) पुच्छणा देवे देवावे देते हुए को भला जाने तो प्रायश्चित्त।

॥ बोल उनतीसवां ॥

जो साधु बूसी राई ने अबूसो राई कहै अबूसी राई ने बूसो राई कहै तो चौमासी प्रायश्चित्त आवे। सा० सू० निशीथ उ० १६ वां।

॥ दोहा ॥

ज्ञान दर्शन चारित्र तणो, धारक बूसी जेह ।
ते साधु गुण आगरा, तसु जे बूसी वदेह ॥१०९॥

विराधक ज्ञानादिक तणो, विषय लम्पटी जान ।
ते अवूसी राई ने वूसी कहै, प्रायश्चित्त तसु मान ॥११०॥
निशीथ उद्देशे सोलहवें, तेरम चवदम बोल ।
निन्दा करि गुणवन्त नी, गुण तेहना मत ओल ॥१११॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू वूसी रायइ अवूसी रायइयं वदइ वदं तं वा साइज्जइ ।
जे भिक्खू अवूसराइयं वूसराइयं वदइ वदं तं वा साइज्जइ ।

निशीथ उद्देशा १६ वाँ

॥ भावार्थ ॥

जो साधु वूसी रायई अर्थात् ज्ञान दर्शन चारित्र गुणके धारक अपने, से वड़े मुनिराज को अवूसी रायइ कहै और अवूसी रायइ जो विषय लम्पटी को वूसी रायइ कहे तो चौमासी प्रायश्चित्त ।

॥ बोल तीसवां ॥

सरीखा साधु होकर सरीखा साधुवां ने स्थानक देवे नहीं, देवावे नहीं, देतां प्रते भलो जाणै नहीं, तो प्रायश्चित्त कह्यो . सा० सू० निशीथ उदे शे १७ वें

॥ बोल इकतीसवां ॥

सरीखी साध्वी होकर सरीखी साध्वी ने स्थानक देवे नहीं, देवावे नहीं, देतां प्रते भलो जाणे नहीं, तो प्रायश्चित्त कह्यो। सा० सू० निशीथ उद्देशे १७ वें ।

॥ दोहा ॥

सरीखां साधु ने मुनी, थानक में ठहराय ।
निशीथ उद्देशे सतरहवें, प्रायश्चित्त कहवाय ॥११२॥
इमहिज सरखी साधवी: साध्वियां प्रते जान ।
प्रायश्चित्त आवे तसु, जो नहीं दे निज स्थान ॥११३॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू निग्गंथे निग्गंथस्स सरिसगस्स सं ते उवासे, अन्ते उवासे, न देइ न देयं तं वा साइज्जइ । जे भिक्खुणि णिग्गंथी णिग्गंथीएं सरिसयाएं; सं ते उवासे न देइ तं वा साइज्जइ ।

सा० सू० निशीथ उद्देशा १७ वाँ

॥ भावार्थ ॥

जो साधु निर्ग्रन्थ सदृश निर्ग्रन्थ को अपनी निश्रा में उनके रहने जैसी जगह है वे उनको नहीं देवे, नहीं देवावे, और नहीं देने वाले की अनुमोदना करे, तो प्रश्चित्त आवे । जो साध्वी अपने जैसी साध्वियों को अपनी निश्रा में रहा उपाश्रय नहीं देवे, नहीं देवावे, नहीं देते को भला जाने, तो प्रायश्चित्त आवे ।

॥ बोल बत्तीसवां ॥

अन्य तीर्थी की ग्रहस्थ की वेयावच्च करे, करावे, करतां प्रते भलो जाणे तो प्रायश्चित्त आवे । सा० सू० निशीथ उ० ११ वां ।

॥ दोहा ॥

अन्य तीर्थी वा गृहस्थ की, वेयावच कियां है दंड ।
भलो जाण्या पिण दंड है, निशीथ ग्यारहवें मंड ॥११४॥
तेलादिक मर्दन करे, मसले दावे पाय ।
धोवे रंगे प्रमार्जे, वलि लोद्रवादि लगाय ॥११५॥
तसु-तनु में देखी करी, गड़गुम्बड़ादिक कोय ।
पूंजे धोवे मालिश करे, वलि छेदे अवलोय ॥११६॥
रुधिर राध काढ़े तसु, तेल लेपादि लगाय ।
धूपादिक देई करि, क्रिमि आदि निकलाय ॥११७॥
केश संवारे काट कर, दन्तादिक धोवाय ।
घसे दांत मज्जन करे, कान नाक नूं मैल कढ़ाय ॥११८॥
नेत्र रोग युत देख के, प्रचाली साफ करेह ।
सुरमादिक घाले तसु, भौंह वाल संवारे तेह ॥११९॥
पसीनादिक साफ करि, साता दे उपजाय ।
तृतीय उद्देशे जिम कह्या, पचपन बोल गिणाय ॥१२०॥
यावत् विचरंता मुनी, अन्य तीर्थि प्रते देख ।
वा ग्रहस्थी प्रत देख कर, शिर ढांके सुविशेख ॥१२१॥
इत्यादिक वेयावच कियां, वलि करायां ताह ।
भलो जाण्यां पिण दंड कह्यो, सूत्र निशीथ रे मांह ॥१२२॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू अण्ण उत्थियस्स वा, गारत्थियस्स वा, पाये सवाहेज्ज

वा, पलि मद्देज्ज वा, संवाहं तं वा, पलि मद्दं तं वा, साइज्जइ। एवं जाव तइयो उद्देसो गमो योयव्वो, अण्ण उत्थियस्स वा, गारत्थियस्स वा, अभिलावो जाव जे भिक्खू गामाणुगाम दुइज्ज माणे, अण्ण उत्थियस्स वा, गारत्थियस्स वा, सीस दुवारियं करेइ, करे तं वा साइज्जइ।

सा० सू० निशीथ उद्देशा ११ वाँ

॥ भावार्थ ॥

जो साधु अन्य तीर्थी का वा गृहस्थ का पग मसले मर्द्दन करे अथवा करते हुए को भला जाने तो प्रायश्चित्त। जिस प्रकार तीसरे उद्देशे में ५५ बोल कहे हैं उसी प्रकार यहाँ सर्व कहना यथा—१ अन्य तीर्थी को वा गृहस्थ को प्रमार्जे २ मर्दन करे, ३ तेलादि मसले, ४ लोद्रादि लगावे, ५ धोवे, ६ रंगे, ७ ऐसे ही शरीर को प्रमार्जे, ८ मर्दन करे, ९ तेलादि मसले, १० लोद्रवादि लगावे, ११ धोवे, १२ रंगे, १३ शरीर के गड़गुम्बड़ादि होय उन्हें प्रमार्जे, १४ मर्दन करे, १५ तेलादिक लगावे, १६ लोद्रवादि लगावे, १७ धोवे, १८ रंगे, १९ गुम्बड़ादिको छेदे, २० रक्त निकाले, २१ पीप निकाले, २२ धोवे, २३ लेप करे, २४ मर्दन करे, २५ धूप देवे, २६ गुदा की कृमि निकाले, २७ नख सुधारे, २८ गुह्य स्थान के वाल छेदे, २९ भौंहों के जंघा के काँख के दाढ़ी के मूंछ के मस्तक के कान के नाक के आँख के इन नवों स्थानों के केश छेदे, ३८ दाँत घसे, ३९ दाँत धोवे, ४० दाँत रंगे, ४१ ओष्ठ घसे, ४२ ओष्ठों का मैल निकाले, ४३ ओष्ठ धोवे, ४४ खटाइ देवे, ४५ रङ्ग चढ़ावे, ४६ लम्बे ओष्ठों को काटे, ४७ दीर्घ मूंछे काटे, ४८ आँख साफ करे, ४९ आँख का मैल निकाले, ५० आँख धोवे, ५१ आँख शुद्ध करे, ५२ अञ्जन सुरमादि डाले, ५३ भौंहों के केश सुधारे, ५४ आँख, कान, नाशिका, दाँत, नखों का मैल निकाले, ५५ स्वेद (पसीना) पोंछे, यावत् साधु मुनिराज ग्रामानुग्राम विचरते हुए अन्य

तीर्थी वा गृहस्थ को देखकर उनका मस्तक छत्र वस्त्रादि से ढाँके इत्यादि वैयावृत्य करे, करावे, करते हुए की अनुमोदना करे, तो प्रायश्चित्त।

॥ बोल तेतीसवां तथा चौतीसवां ॥

साधु आप रहता होय जिण स्थानक में न्यातीला वा अण न्यातीला, श्रावक वा अश्रावक ने आखी रात वा आधी रात, राखे तो प्रायश्चित्त आवे। सा० सू० निशीथ उद्देशे ८ वें बोल १२ वें।

साधु रहता होय जिण स्थानक में न्यातीला वा अण न्यातीला, श्रावक वा अश्रावक, आखी रात वा आधी रात रहै उणां ने नहीं निषेधे तो प्रायश्चित्त आवे। सा० सू० निशीथ उद्देशे ८, बोल १३ वें।

॥ दोहा ॥

साधु वसे तिण स्थान में, निज न्याती प्रते जान।
अथवा अण न्याती प्रते, राख्यां दंड पिछान ॥१२३॥
श्रावक हो अथवा वलि, अश्रावक जो होय।
सर्व वा अर्ध रात्रि में, राख्यां प्रायश्चित्त जोय ॥१२४॥
इमहिज रहता हुयां प्रते, नहीं निषेधै तास।
निशीथ उद्देशे आठवें, प्रायश्चित्त कह्यो जास ॥१२५॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू णायगं वा अणायगं वा उवासयं वा अणुवासयं वा,

अन्तो उवस्सयस्स अद्ध वरायं, कसिण वरायं, संवसावेइ, संवसा वंता साइज्जइ ॥१२॥ जे भिक्खू तं न पडियाएक्खेइ न पडियाइक्खं तं वा, साइज्जइ ॥१३॥

सू० निशीथ उद्देशे ८ वें।

॥ भावार्थ ॥

जो साधु ज्ञाती ने तथा अज्ञाती ने, श्रावक ने तथा अश्रावक ने, आप जिस स्थान में रहते हों उसी स्थान में सर्व रात्रि अथवा अर्द्ध रात्रि उनके साथ रहे यावत् अनुमोदे तो प्रायश्चित्त। रहते हुए को न निषेधे अर्थात् मना न करे तो प्रायश्चित्त आवे।

॥ सोरठा ॥

एक स्थान इक कल्प रे, तिण में ग्रहस्थी ने मुनी।
राखयां प्रायश्चित्त जल्परे, अर्द्ध तथा शर्व रात्रि तक।१२६।
इक आंगण उपरान्त रे, सामायक पौषध ग्रही करे।
ते ठाम २ विरतन्त रे, सूत्र देख निर्णय करो ॥१२७॥

॥ बोल पैंतीसवां ॥

सावद्य दान की प्रशंसा करे तिण ने प्राणी जीवां को बध बंछणहारो कह्यो। सा० सू० सूयगडांग अ० ११ वें गा० २० वीं।

॥ दोहा ॥

जो सांसारिक दान री, करे प्रशंसा कोय।
बध बंछे षट् काय नूं, सूयगडांगे जोय ॥१२८॥

अध्ययन इग्यारहवां ने विषै, वीसमी गाथा मांहि।
निषेधियां वर्त्तमान में, वृत्ति छेद कहाहि ॥१२९॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जेय दाण पसंसंति, वह मिच्छन्ति पाणिणो।

जेयण पडि सेहंति, वित्तिच्छेय करंति ते ॥१३०॥

॥ भावार्थ ॥

जो दान की प्रशंसा करे सो प्राणी जीवों का वध वंछता है, और जो वर्त्तमान मे निषेध करे तो लेने वाले की वृत्ति का छेद करे।

॥ सोरठा ॥

इहां को प्रश्न करेह रे, सावद्य शब्द नहीं पाठ में।
समुच्चै दान कहेह रे, तसु उत्तर आगे सुणो ॥१३०॥
छहुं काय री घात रे, मुनि ने देतां नहिं हुवै।
ते निरवद्य साक्षात रे, तिणरी प्रशंसा बहु जगह ॥१३१॥
दान शील तप भाव रे, च्यार मार्ग यह मुक्ति रा।
ते निरवद्य ठहराव रे, करि जिन आज्ञा सहित जो ॥१३२॥
शरीर अधिकरण नांहि रे, पीहर है षट् काय ना।
यावज्जीव लग ताहि रे, मुनि रे हिंसा त्याग है ॥१३३॥
तसु दीधां पुण्य जान रे, अशुभ कर्म पिण क्षय हुवे।
दियां सुपात्र दान रे, श्रावक रे व्रत बारमूं ॥१३४॥
दुर्लभ कह्या जिनराय रे, शुद्ध दान दाता तिका।
दीधां शुभ गति जाय रे, दशवैकालिक विषे कह्यो ॥१३५॥

सुमुख प्रमुख दश ताय रे, मुनि ने दान देई करी ।
एकावतारी थाय रे, केइक तिण भव मोक्ष में ॥१३६॥
पञ्चम अङ्ग पिछाण रे, अष्टम शत उद्देश षट् ।
तथा रूप मुनि नें जाण रे, श्रावक पडिलाभे तसु ॥१३७॥
एकान्त निर्जरा होय रे, किञ्चित्मात्र पिण पाप नहीं ।
पुण्य बन्ध अवलोय रे, ठाम ठाम सूत्रे कह्यो ॥१३८॥
स्थानाङ्ग नवमे जोय रे, नव विधि पुण्य बन्धे कह्यो ।
निर्वद्य नवों अवलोय रे, मुनि ने कल्पे ते कह्या ॥१३९॥
नमस्कार कियां जाहि रे, तेहने निर्दोष अन्न दियां ।
पुण्य तणो बन्ध थाहि रे, नव ही सरीखा जाणिये ॥१४०॥
ते माटे इहां जान रे, निरवद्य दान न लेखवो ।
बीसमीं इकबीसमीं पिछान रे, गाथा देख निर्णय करो ॥
अस्ति नास्ति ये दोय रे, पुण्य पाप नी नहीं कहे ।
वर्त्तमान में जोय रे, पूछ्यां थी मुनि नहीं वदे ॥१४२॥
तेम इहां अवधार रे, निषेधियां वर्त्तमान में ।
करन्ति शब्दे धार रे, क्रिया तेह वर्त्तमान री ॥१४३॥
कियां प्रशंसा सोय रे, बध वंछणहारो कह्यो ।
प्रत्यक्ष ही अवलोय रे, सावद्य दान यह जाणवो ॥१४४॥
ठाम २ जिन राय रे, कुपात्र दान तणा कह्या ।
फल कडुआ अधिकाय रे, पक्षपात तज सांभलो ॥१४५॥
मृगा लोढा ने देख रे, गौतम जिनपे आय करि ।

दुःख विपाक में लेख रे, पूछ्यो किं दत्ता इणे ॥१४६॥
सूत्र भगवती मांहि रे, अष्टम शतके देखलो ।
छट्ठे उद्देशे ताहि रे, असंयती अविरतिने ॥ १४७ ॥
पाप एकान्त जे थाय रे, सचित अचित पड़िलाभियां ।
निर्जरा किंचित नांहि रे, प्रत्यक्ष पाठ विषे कह्यो ॥१४८॥
तथा सूयगडाअंगेह रे, नवम अध्ययन तेवीसमीं ।
गाथा मे इम लेह रे, साधु बिन अनेरा प्रते ॥१४९॥
दान देवो अवधार रे, कारण पाप तणो तिको ।
भ्रमण हेतु संसार रे, इत्यादिक बहु सूत्र में ॥१५०॥
वलि आनन्द श्रावक जान रे, अन्य तीर्थी ने देण रा ।
कीधा छे पच्चखान रे, सप्तम अंगे देखल्यो ॥१५१॥
जो फल न कहे कदेह रे, सावद्य दान तणा अशुभ ।
तो भवि किम जाणेह रे, सुपात्र कुपात्रज दान ने ॥१५३॥
निषेधियां वर्त्तमान रे, अन्तराय लागे तसु ।
वलि वृत्तिच्छेदक जान रे, दान लेण वाला तणी ॥१५४॥
प्रशंसियां जे दान रे, प्राण घात वांछक कह्यो ।
तो ते दीधां दान रे, ते हिंसक किम नहीं हुवे ॥१५४॥
मुनि विन अपर शरीर रे, अधिकरण षट् काय नूं ।
तसु तीखो कियां सीर रे, हिंसादिक कारज तणो ॥१५५॥
अव्रत मांहि देह रे, लेवे ते पिण अविरत में ।
दूजो आस्रव सेवेह रे, तिण थी न हुवे पुण्य बंध ॥१५६॥

कोई कहै शुभ परिणाम रे, दान देण वाला तणा ।
तिण सूं पुन्य बन्ध ताम रे, तसु उत्तर हिये विचारिये ॥
साता वंछी एक रे, धुर आस्रव सेवावियो ।
दूजो बोल अलीकरे, दुःख दूजा रो मेटियो ॥१५८॥
तीजो चोरी कराय रे, पर साता परिणाम से ।
इक मैथुन सेवाय रे, साता रा परिणाम से ॥१५९॥
इम परिग्रह रखवाय रे, हित वंछी भल भाव से ।
यह पंचास्रव न्याय रे, बुद्धिवन्त हिये विचारिये ॥१६०॥
धुर पंचम रे मांहि रे, धर्म पुन्य जो होय तो ।
विचला तीन में ताहि रे, धर्म पुन्य पिण जाणवो ॥१६१॥
न हुवे शुभ परिणाम रे, पंचास्रव सेवावतां ।
जिन आज्ञा बिन काम रे, कीधां थी धर्म पुण्य नहीं ॥
तिण सूँ लौकिक दान रे, प्रशंसवो नहीं मुनि भणी ।
प्रशंसियां थी जान रे, इच्छक प्राणी बध तणुं ॥१६३॥

॥ बोल छत्तीसवां ॥

विषय सहित धर्म बुरो, जिम ताल पुट जहर खायां, कुरीति से हाथ में शस्त्र लियां, कुविधि मन्त्र जपियां मरण पामें, तिम इन्द्रियों की विषय सहित धर्म प्ररूपे ते घणा जन्म मरण बधावे । सा० सू० उत्तराध्ययन अ० २० वें गा० ४४

॥ दोहा ॥

जिम विष खायां तालपुट, कुविधि शस्त्र हाथ मझार।
मन्त्र कुरीति जपियां थकां, पामे मरण तिवार ॥१६४॥
तिम विषय सहित जे धर्म छे, प्ररूपियां तसु जान ।
दुःखदाई होवे घणो, जन्म मरण वहु मान ॥१६५॥
उत्तराध्ययन में जिन कह्यो, वीसमाध्ययन रे मांहि ।
चार चालीसवीं गाह में, हिंसा धर्म दुःखदाय ॥१६६॥

॥ सूत्र पाठ ॥

विसतु पीयं जह काल कूड. हणाइ सत्थं जह कुग्गाहियं ।
एसो विधम्मो विसओव वन्नो, हणइ वेयालइवा विवन्नो ॥४४॥

उत्तराध्ययन अ० २० वें ।

॥ भावार्थ ॥

जैसे कालकूट जहर पीने से, कुविधि शस्त्र ग्रहण करने से, और कुरीति से वेतालादि मन्त्र जपने से, मृत्यु प्राप्त हो। वैसे इन्द्रिय विषय सहित धर्म प्ररूपना करने से जन्म मरणादि की वृद्धि हो तथा दुःखदाई हो।

॥ बोल सैंतीसवां ॥

भाषा २ कही १ आराधक, २ विराधक। विराधक भाषा में औगुण ४ कह्या यथा—१ असंयम, २ अविरत, ३ अपडियाई, ४ अपच्चक्खाण पाप कर्म सा० सू० पन्नवणा पद ११ वें।

॥ दोहा ॥

दोय प्रकारे जाणवी, भाषा जे बोलेह ।
आराधक प्रथमा कही, द्वितीय विराधक जेह ॥१६७॥
सउपयोग यथोक्त जे, ते आराधक जान ।
विराधक तेण परं अछे, विन उपयोग अयुक्त पिछान ॥
अवगुण चार तिण में अछे, असंयम अव्रत अवलोय ।
अप्रतिहत अपच्चक्खाण इम, पन्नवणा इग्यारह्वें जोय ॥

॥ सूत्र पाठ ॥

इच्चेयाइ भंते चत्तारि भासाज्जायाइं भासमाणे किं आराहए विराहए ? गोयमा इच्चेयाइं चत्तारि भासाज्जायाइं आउत्त भासमाणे आराहए णो विराहए, तेणं पर असंजय, अविरय, अपडिहत, अपच्चक्खाय पाव कम्मे ।

पन्नवणा पद ११ वाँ ।

॥ भावार्थ ॥

हे भगवान् यह चार भाषा जाति भाषते हुए आराधक है या विराधक ? हे गौतम यह चार प्रकार की भाषा उपयोग सहित जैसे की जैसे बोले तो आराधक है, विराधक नहीं। इसके उपरान्त असंयम, अविरत, अप्रतिहत, पाप कर्मों का अप्रत्याख्यान है।

॥ बोल अड़तीसवां ॥

मिश्र भाषा बोल्यां महा मोहनीय कर्म बंधे ।
सा० सू० दशाश्रुतस्कन्ध अध्ययन ६ वें बोल ६ वें ।

॥ दोहा ॥

मिश्र भाषा बोल्यां थकां, महा मोहनीय बन्ध ।
नवमें बोले आखियो, श्री दशाश्रुत स्कन्ध ॥१७०॥
जाणंतो परिषध विषे, सांच झूठ बिहुं मेल ।
बोले कपट सहित जे, मिश्र वच कुकला खेल ॥१७१॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जाण माणे परिसए, सच्च मोसाइ भासए ।
अक्खीण झंझे पुरिसे, महा मोह पकुव्वइ ॥९॥

दशाश्रुतस्कन्ध अ० ९ ।

॥ भावार्थ ॥

जो जानता है कि यह झूठ है तो भी सभा में बैठ कर मिश्र भाषा बोले, अर्थात् सत्य झूठ का निर्णय न होवे ऐसी भाषा बोले सत्यासत्य भाषा बोले, क्लेश की वृद्धि करे, सो महा मोहनीय कर्म उपार्जन करता है ।

॥ बोल उनचालीसवां ॥

मिश्र भाषा छोड़े छुड़ावे तिणने समाधि कही ।
सा० सू० प्र० सुयगडांग अ० १० वें गा० १५ वीं ।

॥ दोहा ॥

वचन गुप्ति प्राप्त मुनी, परम समाधिवन्त ।
छोड़े छोड़ावे मिश्र वच, शुभ लेश्या धर सन्त ॥१७२॥

घर छावे नहीं महा ऋषी, नहीं छवावे जेह ।
वर्जे संग स्त्री तणो, दशम सुयगडाअंगेह ॥१७३॥

॥ सूत्र पाठ ॥

गुत्तोवई एय समाहि पत्तो, लेसं समाहट्टु परिव्वयेज्जा ।
गिहं न छाये णवि छायेज्जा, समिस्स भावं पयहे पयासु ॥१५॥

॥ भावार्थ ॥

वचन गुप्तिवन्त अर्थात् सावद्य वचन गोपने वाले समाधि और शुभ लेश्या के धारक अपने रहने के लिये घर छावे नहीं, अन्य से छवावे नहीं, समभाव धारण करता हुआ मिश्र भाषा का त्याग करे।

॥ बोल चालीसवां ॥

मिश्र भाषा तथा असत्य भाषा सर्व प्रकारे छोड़नी कही, सत्य और व्यवहार भाषा बोलनी कही। सा० सू० दशवैकालिक अ० ७ गाथा १ लो ।

॥ दोहा ॥

सर्व प्रकारे असत्य मिश्र, नहीं बोले मुनि बैण ।
सत्य व्यवहार ही भाषवे, च्यार भाषा में सैण ॥१७४॥
दशवैकालिक में कह्यो, सप्तमध्ययने स्वच्छ ।
पहली गाथा ने विषे, सीखे सविनय वच्छ ॥१७५॥

॥ सूत्र पाठ ॥

चउण्हं खलु भासाणं, परिसंखाए पण्णवं ।
दोण्हं तु विणयं सिक्खे, दो ण भासिज्ज सव्वसो ॥१॥

दशवैकालिक अ० ७ वाँ ।

॥ भावार्थ ॥

चार प्रकार की भाषा है जिसमें सत्य और व्यवहार तो विनय पूर्वक सीखे, किन्तु असत्य और मिश्र भाषा सर्वथा प्रकारे नहीं बोले ।

॥ बोल इकचालीसवां ॥

मिश्र भाषा रा धणी रो वचन अवक्तव्य कह्यो, अणविमासी बोलनहार कह्यो, अज्ञानवादी कह्यो, पूछ्यां रो जवाब देवा असमर्थ कह्यो, मिश्र धर्म प्ररूपणे वालो आप रो मत थापवा भणी छलवल मांडतो कह्यो। सा० सू० प्र० सूयगडांग अध्ययन १२ वें गाथा ५ वीं ।

॥ दोहा ॥

मिश्र भाव प्राप्त थको, मिश्र नूं बोलणहार ।
बोले विना विचारियो, अज्ञान वादी धार ॥१७६॥
जाव देवा समरथ नहीं, पूछ्यां थी अवलोय ।
मिश्र धर्म प्रते स्थापवा, छल बल मांडे सोय ॥१७७॥
आत्म अक्रियो मान कर, फुन प्रकृति चय मुक्ति ।
इम इक पख इम दोय पख, सांख्य दर्शनी उक्ति ॥१७८॥
प्रथम सुयगडाअंगे कह्यो, द्वादशध्ययने पेख ।
मिश्र वक्ता अवक्त हैं, पंचमी गाथा पेख ॥१७९॥

॥ सूत्र पाठ ॥

सम्मिस्स भावं च गिरा गहीए, से मुम्मुई होइ अणाणुवाई ।

इमं दु पक्खं इममेग पक्खं, आहंसु छलाय तणं च कम्मं ॥५॥

प्र० सूत्र कृतांगे द्वादशमध्ययने ।

॥ भावार्थ ॥

मिश्र भाव को प्राप्त होके, प्रश्न करने वाले को उत्तर देने में असमर्थ होते हैं, और मौन धारण करते हैं, वे अज्ञानवादी कभी क्या कहे, कभी क्या कहे, इस तरह से कभी एक पक्षी, कभी दो पक्षी होते हैं। और छल बल करके अपना मत स्थापन करते हैं।

॥ बोल बयालीसवां ॥

साधु री आज्ञा बारे धर्म श्रद्धे तिण ने काम भोग में खूतो कह्यो, हिंसा रो करणहार कह्यो। सा० सू० प्र० आचारांग अध्ययन ६ उद्देशो ४ थो।

॥ दोहा ॥

साधु री आज्ञा बिना, श्रद्धे धर्म उदार।
ते काम भोग में खूतिया, हिंसा रा करणहार ॥१८०॥
प्रथम आचारांगे कह्यो, षष्ठम ध्ययन मझार।
चौथा उद्देशा विषे, सांभलज्यो विस्तार ॥१८१॥
ब्रह्मचर्य वसता थकां, आण न मन मानेह।
माननीय होऊं लोक में, इम धारी घर छांडेह ॥१८२॥

ते काम भोग गृद्धी छता, मूर्च्छित विषय मंझार।
समाधि मार्ग जिन भाषियो, ते नहीं सेवे लिगार।१८३।
आर्य व शुद्ध साधु तसु, शिक्षा दे किण वार।
तो तेहनी निन्दा करे, वे द्विगुण मूर्ख इम धार॥१८४॥

॥ सूत्र पाठ ॥

वसित्ता बंभचेरंसि आणं तं णो त्ति मराण माणा, अग्घायं तु सोच्चाणि सम्म समणुना जिविस्सामो, एगे णिक्खम्मते असंभवंता विडज्झ-माणे कामेहिं गिद्धा, अज्झो वराणा समाहि माधाए मज्झो सयं ता सत्थारमेव फरू सं वदंति। सील मता उव संता संखाए रीयमाणा असीला अणुवय माणस्स वितिया मंदस्स वालया।

प्र० आचारांगे पष्ठमध्ययने चतुर्थोद्देशे।

॥ भावार्थ ॥

कितनेक साधू होकर आज्ञा का अनादर करते हुए विषय लम्पटी होकर उनमें लिप्त हो जाते हैं। मैं सब का माननीय होऊंगा ऐसा विचार करके दीक्षा अंगीकार करते है, ब्रह्मचर्य धारते हैं, परन्तु गुर्वाज्ञा प्रमाण मोक्ष मार्ग में नहीं चलते। काम इच्छा से सुखों में मूर्च्छित होकर विषयों की ओर ध्यान दे गृद्धि हो तीर्थंकर भाषित जो समाधि मार्ग है उसका सेवन नहीं करते; यदि उन्हें कोई अच्छी शिक्षा देवे तो उनकी निन्दा करते है, गुर्वाज्ञा विना अपने मनमाना हिंसा धर्म प्ररूपते हुए सुखो से जीवें ऐसा विचार के भ्रष्ट हुए, वे वाल, मन्द बुद्धि वाले, शुद्धाचार के पालने वाले साधुओं से द्वेषभाव रखके निन्दा करने मे तत्पर हैं अतः वे दुगुने मूर्ख हैं।

॥ दोहा ॥

वलि तिणहिज उद्देशे कह्यो, धर्म कहे आज्ञा बाहर।
प्राण जीव हिंसक तिका, असंयम अर्थी धार ॥१८५॥
अधर्मार्थी बाल ते, आरम्भार्थी जेह।
हने हनावे प्राणी ने, भलो जाणता तेह ॥१८६॥
दुक्खर धर्म जिनवर कह्यो, ते पालन समर्थ नाहिं।
तब तसु करे अवहेलना, तत्पर हिंसा माहिं ॥१८७॥
ते आज्ञा बाहिर थई, धर्म प्ररूपे एम।
जिन आज्ञा नहीं मानतो, भ्रष्ट किया निज नेम ॥१८८॥

॥ सूत्र पाठ ॥

अहमट्ठी तुमंसि णाम बाले आरंभट्ठी अणुवय माणे हण पाणे घायपाणे हण ओयावि समणु जाण माणे घोरे धम्मे उदीरिए उव हइणं अणाणाए एस विसएणे वितट्टे वियाहितेत्तिवेमि।

प्र० आचारंग सूत्रे षष्ठमध्ययने चतुर्थोद्देशे।

॥ भावार्थ ॥

संयम से भ्रष्ट हुए को सत्पुरुष इस तरह बोध देते हैं कि हे पुरुष तू प्राणियों की हिंसा करता है हिंसा का उपदेश देता है अतः तू हिंसा का चाहने वाला है अजान है अधर्म का अर्थी है। तीर्थङ्करों ने तो अहिंसा धर्म आराधना दुष्कर कहा है किन्तु तू आज्ञा बाहर होके आज्ञा बाहिर धर्म प्ररूपता है धर्म की उपेक्षा करता है इसलिये तू मन्द बुद्धि है।

॥ बोल तियालीसवां ॥

आज्ञा बाहिर धर्म कहसी तिण रा तप अने नियम भ्रष्ट कह्या, तिण ने मूर्ख कह्यो, संसार से पार पामतो नहीं कह्यो। सा० सू० आचारांग अध्ययन २ उद्देशो २।

॥ दोहा ॥

कहसी धर्म आज्ञा विना, तिणरा तप अरु नेम।
भ्रष्ट कह्या धुर अंग में, द्वितीय अध्ययने एम ॥१८६॥
दूजे उद्देशे देखल्यो, परिसह उपसर्ग माय।
आज्ञा बाहिर होयके, शिथिल थई मोह वर्ताय ॥१६०॥
कहे मैं अपरिग्रही अछूं, पिण भोग मिल्यां भोगाय।
तथा भोग मिलवा तणा, करत अनेक उपाय ॥१६१॥
ते भेष लजावे साधु नूं, सेवे काम विकार।
वार २ मोह में फंस्या, जे नहीं पामे पार ॥१६२॥

॥ सूत्र पाठ ॥

अणाणाए पुट्ठावि, णोणियट्टं ति मंदा मोहेण पाउडा, अपरिग्गहा भविस्सामो समुट्ठाए लद्धे कामे अभिगाहेंति, अणाणाए मुणिणो पडिलेहंति, एत्थं मोहे पुणो पुणो सएणा णो पाराए।

आचारांगे द्वितीयध्ययने द्वितीय उद्देशे।

॥ भावार्थ ॥

अज्ञानी मूर्ख जीव परीषह उपसर्ग आने से आज्ञा बाहिर होके

संयम से भ्रष्ट होते हैं, और कहते हैं हम अपरिग्रही है दीक्षा लेके मुनि का वेश लजाते हैं, काम भोग प्राप्त होने से अभिग्रहण करते हैं कामादि प्राप्त करने को उपाय करते रहते हैं इस तरह आज्ञा बाहिर धर्म कहने वाले जो हैं वे वार २ मोह में फंसे हुए संसार का पार नहीं पाते।

॥ बोल चमालीसवां ॥

आज्ञा बारे उद्यम, आज्ञा मांहि आलस्य, ए दो बोल मत होज्यो, यह कुशल पुरुष भगवान् की श्रद्धा छै। सा० सू० आचारांग अ० ५ उ० ६।

॥ दोहा ॥

कुशल पुरुष महावीर नी, यह श्रद्धा है सार ॥१९३॥
आज्ञा में उद्यम सदा, नहिं उद्यम आज्ञा बार।
उद्यम आज्ञा बाहिरे, आज्ञा में आलस्य।
यह दोनूं मत होयज्यो, इम भाख्यो कुशलस्य ॥१९४॥
धुर आचारांगे कह्यो, पंचम अध्ययने पेख।
छट्ठा उद्देशा विषे, जिन दर्शन इम लेख ॥१९५॥

॥ सूत्र पाठ ॥

अणाणाए एगे सोवट्ठाणे, आणाए एगे निरूवट्ठाणे।
एतं ते माहोउ, एयं कुसलस्स दंसणं ॥

आचाराङ्ग पंचम अध्ययने षष्ठमोद्देशे।

॥ भावार्थ ॥

कितनेक आज्ञा बाहिर विपरीत प्रवृत्ति में उद्यमी वर्त्तते हैं और कितने ही जिनाज्ञानुकूल प्रवृत्ति में निरुद्यमी होते हैं अतः यह दोनों

अर्थात् आज्ञा में आलस्य और आज्ञा वाहिर उद्यम कभी न होवे, यही कुशल पुरुष भगवान् महावीर का दर्शन है।

॥ बोल पैंतालीसवां ॥

प्रवचन से विरुद्ध प्ररूपने वाला ने भगवान निन्हव कह्यो। सा० सू० उववाई प्रश्न १६ वें।

॥ दोहा ॥

प्रवचन विरुद्ध प्ररूपणा करे ते निन्हव धार।
सूत्र उववाई मे कह्यो उन्नीसवां प्रश्न मझार ॥१६६॥
सप्त निन्हव प्रवचन तणा भाख्या श्री जगतार।
करता अशुद्ध प्ररूपणा श्रद्धा तास असार ॥१६७॥

॥ सूत्र पाठ ॥

इच्चे ते सत्त पवयण णिण्हका।

उववाई प्रश्न १६ वें।

॥ भावार्थ ॥

यह सातों प्रवचन के निन्हव हैं ॥ इति ॥

॥ बोल छयालीसवां ॥

राग द्वेष दोनूं पाप कह्या दोनां से न्यारा रहे सो संसार में नहीं रुलै। सा० सू० उत्तराध्ययन अ० ३१ वें गाथा ३ री।

॥ दोहा ॥

राग द्वेष दो पाप है, अवर्त्तें पाप मंझार ।
जे भिक्खू न्यारा रहै, ते न रूलै संसार ॥१९८॥
उत्तराध्ययने आखियो, इकतीसम अध्ययने जान ।
तीजी गाथा ने विषे, भाष्यो श्री भगवान ॥१९९॥

॥ सूत्र पाठ ॥

राग दोसे य दो पावे, पाव कम्म पवत्तणे ।
जे भिक्खू रुम्भये निच्चं, से न अच्छइ मण्डले ॥३॥

उत्तराध्ययन अ० ३१ वाँ ।

॥ भावार्थ ॥

राग द्वेष ये दोनों पाप है, पाप कर्म में ही प्रवर्त्तते हैं। अर्थात् किसी पै राग करने में भी पाप है और द्वेष करने में भी पाप है। इसलिये साधु राग द्वेष किसी पर भी न करें। वे संसार रूपी मंडल मे भ्रमण नहीं करते हैं।

॥ बोल सैंतालीसवां ॥

कोई इम कहै साता दियां साता होय, तिण ऊपर भगवान छव बोल प्ररूप्या—१ आर्य मार्ग से वेगलो, २ समाधि मार्ग से न्यारो, ३ जिन धर्म री हेलणा रो करणहार, ४ अमोक्ष रो कारण, ५ थोड़ा सुखां रे कारणे घणा सुखां रो हारणहार, ६ लोह

वाणिया नी परे घणो भूरसी । सा० सू० सूयगडांग अ० ३ उद्देशो ४ गाथा छठी ।

॥ दोहा ॥

साता दियां साता हुवे, इम को कहै अविचार ।
तिण ऊपर षट् बोलइम, भाख्या श्री जगतार ॥२००॥
शाक्यादिक इक एक जे, वा स्वतीर्थी जेह ।
परिषह थी डरता थका, ते जे इम भाखेह ॥२०१॥
साता सें साता हुवे, एम कहै जे कोय ।
ते आर्य मार्ग से वेगला, समाधि से अलगा होय ॥२०२॥
वलि हेलण हार जिन धर्म ना, ते अल्प सुखारे काज।
घणां सुखां ने हारता, अछे अमोक्ष रे काज ॥२०३॥
लोह वाणिया नी परे, घणा भूरसी जेह ।
साता दियां साता हुवे, जे कोई एम वदेह ॥२०४॥

॥ सूत्र पाठ ॥

इह मे गेउ भासति, सातं सातेण विज्जति ।
जे तत्थ आरिअं मग्गं, परंम च समाहिए ॥६॥
माएय अव मन्नंता, अप्पेणं लुपहा बहुं ।
एतस्स अमोक्खाए, अय हारिव्व जूरह ॥७॥

॥ भावार्थ ॥

यहां एक एक ऐसा कहते हैं, कि साता से साता होती है अर्थात् सुख देने से सुख होता है। ऐसा कहने वाले आर्य मार्ग से पृथक् हैं १,

परम समाधि का करने वाला जो जिन प्रणीत मार्ग है उससे दूर हैं २, जिन मार्ग की निन्दा करने वाले हैं ३, अल्प सुखों के लिये वहुत सुखों के हारने वाले हैं ४, अमोक्ष का कारण है ५, और वे लोह वणिक को तरह बहुत पछतावेंगे ६।

॥ सोरठा ॥

कोई कहै इम वाय रे, इहां मुनि निज तनु आश्रयी।
उपसर्ग थी डरता ताय रे, कहै साता दियां साता हुवे॥
तप लोचादि अनेक रे, करतां कष्ट हुवे घणो।
भूख तृषादि विशेष रे, सह न सकै तब इम कहै॥२०७॥
पिण अन्य अन्य ने देख रे, अनुकम्पा आणी करी।
भोजन वस्त्र सुविशेख रे, साता दिया साता हुवे॥२०८॥
इम निज मन अनुसार रे, सूत्र विरुद्ध जो को कहै।
तसु उत्तर अवधार रे, बुद्धिवन्त हिये विचारिये॥२०९॥
क्षुधा निवारण काम रे, आहार उदक मुनि आचरे।
वस्त्र कल्पनीक आम रे, पहिरे ओढे बावरे॥२१०॥
अथवा निज तनु नी सार रे, व्यावच्च करावे शिष्य कने।
देवे वस्त्र अरु आहार रे, अन्य मुनि नी वैयावच्च करे॥२११
एम अनेक प्रकार रे, साधर्मी साधू बनी।
करता सार सभार रे, नव लघु वृद्ध मुनिवर तणी॥२१२॥
ते साता अवधार रे, निरवद्य छे जिन आणा में।
करे करावे सार रे, दे आदेश अरु उपदिशे॥२१३॥

मुनि विन अपर शरीर रे, अधिकरण षट्काय नूं ।
तसु तीखो कियां शरीर रे, हिंसादिक कारज तणो ॥२१४॥
प्रथम उद्देशा मांहि रे, सप्तम शतके भगवती ।
सामायक में ताहि रे, श्रावक आतम अधिकरण ॥२१५॥
तो विन सामायक जेह रे, ग्रहस्थी तणो शरीर जे ।
ते अधिकरण कहेह रे, शस्त्र पृथ्व्यादि छहों तणो ॥२१६॥
तसु तीखो करे कोय रे, अव्रत सेवावि करी ।
तासु धर्म किम होय रे, इम सावद्य साता दियां ॥२१७॥
सेवे अव्रत पाप रे, प्रथम करण ग्रहस्थी तिको ।
देखो स्थिर चित्त थाप रे, दूजे करण सेवावियां ॥२१८॥
धर्म पुन्य किम थाय रे, फुन अनुमोद्यां तृतीय करण ।
हिये विचारो न्याय रे, जिन आज्ञा विन धर्म नहीं ॥२१९॥
षोडशमूं अनाचार रे, साता पूछ्यां ग्रहस्थ नी ।
दशवैकालिक अवधार रे, तीजे अध्ययने कह्यो ॥२२०॥
मुनि ग्रहस्थ नी जान रे, तिणहिज अध्ययनने विषे ।
वैयावच्च कियां पिछान रे, अनाचार अठबीसमूं ॥२२१॥
भूती कर्म करेह रे, ग्रहस्थ नी रक्षा निमित ।
प्रायश्चित आवेह रे, निशीथ उद्देशे तेरहवें ॥२२२॥
मार्ग बतायां दंड रे, सूत्र निशीथ मांहि कह्यो ।
बतावे औषधादि सुमंड रे, ग्रहस्थ ने तो प्रायश्चित ॥२२३॥
जीव संसार मझार रे, असाता बहु पावी रह्या ।

स्व स्वं कर्म अनुसार रे, इन्द्रिय विषय विकार थी ॥२२४॥
तसु सेवावे भोग उपभोग रे, खाणा पीणा आदि दे।
त्यांरो मिलायां जोग रे, दूजे करणे पाप है ॥२२५॥
निज खाणो पीणो जेह रे, श्रावक अव्रत में गिणे।
तो पर ने खवाव्यां तेह रे, किम धर्म श्रद्धे समकिती ॥
असंख्य एकेन्द्रिय जीव रे, मार असाता तसु करे।
पंचेन्द्रिय ने साता अतीव रे, कियां धर्म किण विध हुवे ॥
मोह अनुकम्पा आण रे, साता बंछे निज पर तणी।
ते सावद्य ही पिछाण रे, जिन आज्ञा नहीं तेह में ॥
उपदेशे त्याग कराय रे, घटावे अव्रत ग्रहस्थी नी।
तप चारित्र बढ़ाय रे, मुक्ति मार्ग साहलूं करे ॥२२९॥
चिहुंगति भ्रमण मिटाय रे, दुःख जन्म मरण मूंकाय दे।
आतम सुख प्रकटाय रे, निरवद्य साता इम हुवे ।२३०।
ते माटे इहां जोय रे, सावद्य साता जाणवी।
स्व परनी अवलोय रे, बंछ्या थी जिन धर्म नहीं ॥२३१॥
सांसारिक उपकार रे, सांसारिक नूं मार्ग है।
जिन धर्म नहीं लिगार रे, जिन आज्ञा बिन कार्य में ॥
तिण सूं कह्यो जिनराय रे, जे को इक इक इम बदे।
सुख दियां सुख थाय रे, ते आर्य मार्ग से वेगला ॥२३३॥
यावत् झूरसी तेह रे, लोह बाणिया नी परें।
सूत्रें जे भाषेह रे, तेह सत्य करि जाणवो ॥२३४॥

॥ बोल अड़तालीसवां ॥

साधू होकर अनुकम्पा रे वास्ते त्रस जीवां ने बांधे बंधावे बांधतां ने अनुमोदे, तथा अनुकम्पा करि बंध्या जीवां ने छोड़े छोड़ावे छोड़तां प्रते भलो जाणे तो चौमासी प्रायश्चित । सा० सू० निशीथ उ० १२-वें, बोल १ तथा २ रे ।

॥ दोहा ॥

मुनि अनुकम्पा आण कर, तस जीवां ने जोय ।
तृणादिक पाशे करी, बांधे बंधावे कोय ॥२३५॥
अथवा बंधिया देख कर, छोड़े छोड़ावे तास ।
बांध्यां छोड्यां भलो जाणियां, प्रायश्चित चौमास ॥२३६॥
निशीथ उद्देशे बारमे, पहले दूजे बोल ।
यह करुणा आज्ञा बाहर है, आंख हिया री खोल ॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू कोलुण पडियाए, अण्णारियं तस पाण जायं ।
तण फासएणवा मुंज पासएणवा, चम्म पासएणवा रज्जु ॥
पासएणवा सुत्त पासएणवा, बंधइ बंध त वा साइज्जइ ॥१॥
जे भिक्खू बंधेल्लयं वा, मुयइ मुयं तं वा साइज्जइ ॥२॥

निशीथ उद्देशे बारहवें ।

॥ भावार्थ ॥

जो साधु अनुकम्पा के लिये अन्य त्रस प्राणियों की जाति अर्थात् त्रस जीवों को घास की डोरी से, चमड़े की डोरी से, रज्जव की डोरी से, इत्यादिक डोरियों से, बाँधे बँधावे बाँधते को अनुमोदे तो चौमासी प्रायश्चित्त ॥ १ ॥ ऐसे ही बँधे हुवे त्रस जीवों को देख अनुकम्पा करके छोड़े छोड़ावे और अनुमोदे तो चौमासिक प्रायश्चित्त ॥ २ ॥

॥ सोरठा ॥

शब्द अर्थ अछ जेह रे, ते केइक इहां इम कहै ।
कोलुण दीन भावेह रे, बांध्या छोड्यां दंड है ॥२३८॥
ततोत्तर विज्ञ कह्यो एथ रे, दीन भाव इहां स्यूं हुवे ।
त्रस प्रति बांध्या तेथ रे, गरीब भाव होवे किण तणो ॥
मुनिवर दीनज होय रे, त्रस बांधे किण कारणे ।
कदा दीन त्रस जोय रे, तो साधू अनुकम्प करि ॥२४०॥
तथा बंधिया प्रति देख रे, दीन पणो मुनि स्यूं करै ।
जो दीन अनुकम्पा लेख रे, सावद्य तिण सूं प्रायश्चित कह्यो
न्याय दृष्टि अवलोय रे, लघु चूर्णि जिन दास कृत ।
तिहां कोलुण शब्दे जोय रे, कोलुणं अनुकम्प अर्थ ।२४२।

॥ जिनदास आचार्यकृत लघुचूर्णिका पाठ ॥

भिक्खू पुव्व भणिओ कोलुणंति-कारुण्यं अनुकम्पा प्रतिज्ञाय। इत्यर्थः ।

॥ सोरठा ॥

जो कहे कौतुहल काज रे, कोलुण शब्द तणो अरथ ।
तो कोऊल कौतुहल वाज रे, तेह पाठ न्यारो अछे ।२४३।
सप्तदशम उद्देश रे, निशीथ सूत्र में देखिये ।
वांधे वा छोड़ेश रे कोऊल वड़ियाए तिहां शब्द है ॥
तिहां कौतुहल निमित्त रे, मुनि त्रस प्राणी देख कर ।
वांधे छोड़े इत्तरे, तो प्रायश्चित है मुनि भणी ॥२४५॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू कोऊल वडियाए अराणयां तस पाणजाति तसा पास-रागनो जाव सुत्त पासरणना वंधति वंधं तं वा साइज्जइ ॥१॥ जे भिक्खू कोऊल वडियाए वंधेल्लयं वा मुयति मुयं तं वा साइज्जइ ॥२॥

निशीथ उ० १७ वें ।

॥ भावार्थ ॥

जो साधु, कौतुहल निमित्त अन्य त्रस प्राणियों को घास की डोरी से यावत् सूत की डोरी से बाँधे बँधावे बाँधते को अनुमोदे तो प्राय-श्चित ॥१॥ जो साधु कौतुहल के निमित्त अन्य त्रस प्राणियो को छोड़े छोड़ावे छोड़ते को अच्छा जाने तो प्रायश्चित ॥ २ ॥

॥ सोरठा ॥

कौतुहल काज मुनिराज रे, वांध्यां छोड़्यां त्रस प्रति ।
दंड कह्यो जिनराज रे, सतरहवें उद्देश निशीथ में ॥
बारमा उद्देश मझार रे, कोलुण ते अनुकम्पा करि ।

बांध्यां खोल्यां दंड धार रे, त्रस जीवां प्रते, आखियो ॥
इम बिहुं स्थाने जोय रे, पाठ शब्द छै जूजुआ ।
कोलुण अनुकम्प होय रे, कोऊल ते कौतुहल कह्यो ॥
त्रस जीवां रे मांहि रे, मनुष्य तिर्यञ्च सहु आविया ।
तसु अनुकम्पा ल्याहि रे, बांधे खोले मुनि तदा ॥२४९॥
प्रायश्चित्त कह्यो तिहिवार रे, सूत्र वचन ते सत्य है ।
ग्रहस्थ नी सार संभार रे, सावद्य जाण मुनि नहीं करे।
ग्रहस्थ तणों जे काम रे, ते करवूं कल्पे नहीं ।
कह्या अकल्पनीक ठाम रे, पाम्या ग्रहस्थअनुकम्प करि ॥
तैलादि मर्द्दन करेह रे, मुनि तनु शान्ति पमायवे ।
यह दोष उपजेह रे, द्वितीय श्रुत स्कन्धे धुर अंगे ॥२५२॥
तिहां पिण कोलुण ही शब्द रे, तसु अनुकम्पा अर्थ छै।
एम इहां पिण लब्द रे, कह्यो कोलुण शब्द सारखो ॥
तथा आजीविका निमित्त रे, अर्थ करे कोलुण तणो ।
ते पिण है विपरीत रे, इहां मुनि ने कांई आजीविका॥
किहां ही न सूत्र विषेह रे, कोलुण ते आजीविका ।
जे सूत्रार्थ न जाणेह रे, ते मन कल्पित अर्थ करे ॥२५५॥
वलि कहै इम वाय रे, अनुकम्प सावद्य न हुवे ।
निर्वद्य ही कहिवाय रे, तलोत्तर न्याय विचारिये ॥२५६॥
अनुकम्पा रे काज रे, देवकी नां षट् सुत प्रते।
सुलसां घरे समाज रे, मेल्या हरण गवेषि सुर ॥२५७॥

अनुकम्पा चित्त आण रे, डोहलो पूर्ण कियो देवता ।
ज्ञाता सूत्र वखाण रे, अभय कुमार तणो तदा ॥२५८॥
श्रीकृष्ण ईंट उपार रे, मेली वृद्ध तणे घरे ।
अंतगढ़ सूत्र मझार रे, अनुकम्पा करि तेहनी ॥२५९॥
भोग प्रार्थना कीध रे, रयणा देवी जिन ऋषि प्रते ।
ते अनुकम्पा करी प्रसिद्ध रे, ज्ञाता नवमाध्ययन में ॥
इत्यादिक बहु ठाम रे, अनुकम्पा करीने बहु ।
कीधा सावद्य काम रे, ते सावद्य अनुकम्प इम ॥२६१॥
सांसारिक उपकार रे, तेह थी मुनि न्यारा थया ।
श्री जिन आज्ञा बार रे, कार्य कियां प्रायश्चित हुवे ।२६२।
तेम इहां अवलोय रे, अनुकम्पा अर्थे मुनि ।
त्रस बांधे छूकि कोय रे, तो चौमासी प्रायश्चित ॥२६३॥

॥ बोल उनचासवां ॥

मोक्ष रो मार्ग जाणे नहीं तिण ने श्री भगवान् री आज्ञा रो लाभ नहीं । सा० सू० प्रथम आचारांग अ० ९ उ० ४ ।

॥ दोहा ॥

मोक्ष मार्ग जाणे नहीं, प्रथम आचारांग मांहि ।
लाभ नहीं जिन आण ने, तूर्य अध्ययने ताहि ॥२६४॥

उद्देशा चौथा विषे, भाख्यो श्री जिनराय।
मोक्षाभिलाषी वीर ने, मार्ग विकट कहिवाय ॥२६५॥
तिण सुं तप थी निज तनु, लोही मांस सुकाय।
ब्रह्मचर्य बसवें करी, माननीय कहवाय ॥२६६॥
प्रथम इन्द्रियां वश करी, पिण मोह उदय ते बाल।
विषयासक्त होवा थकी, न सके बंधन टाल ॥२६७॥
वलि प्रपंच करे घणो, एहवो पुरुष अयाण।
मोह तिमिर में वर्त्त तो, किम पामे जिण आण ॥२६८॥

॥ सूत्र पाठ ॥

दुरणु चरो मग्गो, वीराण अणियट्ट गामीणं, विगिं च मंस सोणिय एस पुरिसे दवीए वीरे जायाणिज्जे वियाहिए जे धुणाति समु-स्सयं वसिता वंभचेरमि, णेत्तेहिं पलिछन्नेहिं आयाण सोय गढिए वाले अवोच्छिन्न बंधणे अणभिकंत संजोए। तमंसि अविजाण ओ आणाए लंभो णत्थि त्तिबेमि।

श्री आचारांग सूत्रे प्रथम श्रुत स्कन्धे चतुर्थ अध्ययने।

॥ भावार्थ ॥

मुक्ति पाने वाले वीर पुरुषों का मार्ग बहुत ही कठिन है। इसलिये हे मुनि! तपश्चर्यादि करके माँस रक्त को शुष्क कर। जो पुरुष सदैव ब्रह्मचर्य पूर्वक रह कर, तप से शरीर को दमते हैं वे मोक्ष प्राप्त करने वाले वीर पुरुष माननीय होते हैं। और जो पुरुष शुरूआत में कदाचित् इन्द्रियों को वस करके वर्ते हैं और पीछे मोहके जोश में आके विषयों में आसक्त हो गये है ऐसे बाल (अज्ञानी) पुरुष किसी बन्धन से नही

छूटते और प्रपञ्च रहित नही होते । अतः ऐसे अजान पुरुष को मोह मय अन्धकार में वर्त्तते हुए, भगवान की आज्ञा का लाभ नहीं होता है ।

॥ बोल पचासवां ॥

ब्राह्मण ने जिमायां तमतमा कही । सा० सू० उ० अ० १४ गाथा १२ ।

॥ दोहा ॥

विप्र जिमायां तमतमा, कह्यो भृगु ना पुत्र ।
उत्तराध्ययनै चवदमें, गाथा बारमी सूत्र ॥२६९॥
वेद भण्या नहीं त्राण शरण, नहीं आतम उद्धार ।
भोजन जिमायां तमतमा, पहोंचे नरक मझार ॥२७०॥
सुत जायां नहीं शिव गति, ते माटे अवधार ।
ग्रहस्थाश्रम नहीं रहां हमें, लेस्या संयम भार ॥२७१॥

॥ सूत्र पाठ ॥

वेया अहिया न भवंति ताणं, भुत्ता दिया निंति तमं तमेणं ।
जाया य पुत्ता न हवंति ताणं, को णाम ते अणु मन्नेज एयं ॥१२॥

उत्तराध्ययने अ० १४ ।

॥ भावार्थ ॥

वेद पढ़ने से ही त्राण शरण नहीं होता, भोजन देने से तमस्तमा में जाते हैं और पुत्रादि होने से संसार समुद्र नही तिरते, अतः अहो तातजी तुमारे वचनो को कैसे स्वीकारे ।

॥ सोरठा ॥

इहां कोई युक्ति लगाय रे, कहै भृगु सुत तो ग्रहस्थ छा।
तसु वच किम मनाय रे, वा तमतमा मिथ्यात हुवे ॥२७२॥
तसु उत्तर सुविचार रे, न्याय दृष्टि अवलोकिये।
इग्यारहवीं गाथा मझार रे, भगवन् गणधर इम कह्यो॥
बोले बचन विमास रे, तूर्य पदे इम आखियो।
तो मिथ्या वच किम तास रे, गणधर तास सरावियो॥
सांचो सुत वच मान रे, भृगु पिण संयम लियो।
जिन मत सांचो जान रे, निज मत खोटो श्रद्धियो ॥२७५॥
कहै हुवे मिथ्यात् रे, धर्म श्रद्धी जिमावियां।
ते लेखे पिण थात रे, पाप बन्ध भोजन दियां ॥२७६॥
अवचूरी रे मझार रे, अन्धकारे अन्धकार छै।
रौरवादि नरक विस्तार रे, तमतमा नूं अर्थ इम ॥२७७॥

॥ बोल इकावनवां ॥

भोजिता द्विजा विप्रा नयन्ति तम सोपियत्त मस्तस्मिन् रौद्रे रौरवादिके नरकेणं वाक्यालंकारे।

॥ सोरठा ॥

तथा सुयगडाअङ्ग मझार रे, आर्द्र मुनि पिण इम कह्यो।
द्वितीय श्रुतस्कन्धे धार रे, अध्ययन छट्ठा ने विषे ॥२७८॥

स्नातक दोय हजार रे, विषयाशक्त विप्रां प्रते ।
जावे नरक मझार रे, भोजन जिमायां इम कह्यो ॥२७९॥
मांस लोलुपी जेह रे, एकान्त अर्थी खाण रा ।
घर २ भमता तेह रे. पेट भराई कारणे ॥२८०॥
ब्रह्म क्रिया न पालेह रे, हिंसा धर्म प्रशंसता ।
वलि निषेधना ते करेह रे, प्रधान दया धर्म तेहनी ॥२८१॥
हीनाचारी एक रे, एहवा प्रते जे जीमावतां ।
जावे नरक मंझार रे, सुरावतार जिहां ही रह्यो ॥२८२॥

॥ सूत्र पाठ ॥

सिणाय गाणं तुओ वे सहस्से, जे भोयए णित्तिए कुलाल याणं ।
से गच्छइ लोलुपा संपगाढे, तिव्वा भितावी णरगाहि सेवी ॥४४॥
दयावरं धम्म उगंछ माणे, वहावहं धम्म पसंस माणे ।
एगंपि जे भोय अयइ असीलं णिवोणि संजाइ क ओ सुरेहिं ॥४५॥

सूत्र कृतांगे द्वि० श्रुत० षष्टमध्ययने ।

॥ भावार्थ ॥

आर्द्र कुमार मुनि को ब्राह्मणों ने कहा कि दो हजार विप्रों को जिमाने से पुण्य का स्कन्ध उपार्ज्जन करके देवता होता है। तब आर्द्र कुमार मुनि ने उत्तर दिया कि जो दो हजार स्नातक आमिष्यार्थी ब्रह्मचर्यक्रिया रहित घर २ मे भिक्षा माँगने वाले कुपात्र ब्राह्मणों को जिमाने से महा तीव्र वेदना वाली नरक में जाते हैं। क्योंकि जो प्रधान दया धर्म है उसकी तो वे निन्दा करते हैं और हिंसा धर्म की प्रशंसा करते हैं ऐसे एक को भी भोजन कराने से सुरगति तो जहाँ ही रही परन्तु नरक गति प्राप्त होती है।

॥ बोल बावनवां ॥

साधु रे सर्व थकी अठारह पाप रा त्याग छै पिण देश थकी नहीं । सा० सू० उववाई प्र० २१ वें ।

॥ दोहा ॥

सर्व प्रकारे त्यागिया, पाप अठारह जान ।
उववाई प्रश्न इकीसवें, साधु महा गुणखान ॥२८३॥
ग्रामागर अरु नगर में, यावत् सन्निवेश ।
इक २ मनु एहवा अछे, सांभलजो सुविशेष ॥२८४॥
अणारंभ अपरिग्रही, धार्मिक धर्म इष्ट ।
यावत् धर्म नी वृत्ति कल्प, सुशील सुव्रती शिष्ट ॥२८५॥
आनन्दकारी मुनि तिका, सर्व प्राणातिपात ।
यावत् सर्व परिग्रह थकी, निवृत तेह सुजात ॥२८६॥
क्रोध मान माया अरु, लोभ थकी मुनि तेह ।
जाव मिथ्या दर्शन शल्य थी, प्रति विरत्या छै तेह ॥
सब आरम्भ समारम्भ वलि, करण करावण जाण ।
पचन पचावन तेहना, सर्वथा किया पच्चखान ॥२८८॥
कूटण पीटण तर्जना, ताडन बध अने बंध ।
परि क्लेशें थी निवृत थया, छोड़ दिया सर्व धन्ध ॥२८९॥
सर्व थकी न्हावा तणा, वलि मर्द्दन पीठी जान ।
तैल विलेपन आदि ना, छै त्यांरे पच्चक्खाण ॥२९०॥

शब्द स्पर्श रस रूप गन्ध, माला ने अलंकार ।
सर्व प्रकारे छांडिया, सावद्य योग व्यापार ॥२८१॥
कष्ट परिताप पर प्राणि ने, होवे जेह उपाय ।
यावज्जीव निवर्त्या तेह थी, ते अणगार कहाय ॥२८२॥
इरिया भाषा समिति युत, निर्ग्रन्थ वचनज तंत ।
तसु आगे करके मुनि, विचरे महा गुणवन्त ॥२८३॥

॥ सूत्र पाठ ॥

से जे इमे गामागर नगर जाव सन्निवेसेसु मणुया भवन्ति तंजहा— अणारम्भा, अपरिग्गहा, धम्मिया, धम्मिट्ठा, जाव धम्मेणं चेव वित्ति कप्पे माणा, सुसीला सुव्वया सु पडियाणं दा, सव्वा ओ पाणाइवाया ओ पडि विरया, जाव सव्वा ओ परिग्गहा ओ पडि विरया सव्वा ओ कोहा ओ माणा ओ माया ओ लोहा ओ मिच्छा दंसण सल्ला ओ पडि विरया, सव्वा ओ आरम्भ समारम्भा ओ पडि विरया, सव्वा ओ करण करावण ओ पडि विरया, सव्वा ओ पयण पयावणा ओ पडि विरया, सव्वा ओ कोट्टण पीट्टण तज्जण ताडणं वह बंध परि किलेसा ओ पडि विरया, सव्वा ओ ण्हाणं मद्दण वण्णक विलेवन सद्द फरिस रस रूवं गंध मल्ला लंकारातो पडि विरया, जे पावरणे तहप्पगारे सावज्ज जोगो वहिया कम्मंता पर पाण परियावणा करा कज्जंति तत्तोवि पडि विरया, जावज्जीवाए, से जहा नामए अणगारा भवंति, इरिया समिया भासा समिया जाव इण मेव णिग्गंथ पावयणं पुराओ काओ विहरंति ।

उववाई प्रश्न २१ वाँ ।

॥ भावार्थ ॥

वे जो ग्राम आगर नगर यावत् सन्निवेश में मनुष्य होते हैं तद्यथाः— सर्वथा छवों ही कायों के आरंभ रहित, सर्वथा मृषावाद रहित, सर्वथा अदत्त रहित, सर्वथा मैथुन रहित, सर्वथा धातु मात्र परिग्रह रहित होते हैं, जिन्हों को धर्म ही इष्ट है यावत् धर्म की ही वृत्ति कल्पते हुए विचरते हैं, वे सुशील शुद्धाचारी सुव्रती अच्छा कार्य कर आनन्द मानने वाले सर्व प्रकार तीन करण तीन योग से प्राणातिपात से निवृत्त हुए यावत् परिग्रह निवृत्त हुए तैसे ही सर्व प्रकार से क्रोध मान माया लोभ यावत् मिथ्या दर्शन शल्य से निवृत्त हुए; सब तरह आरम्भ समारम्भ से निवृत हुए एवं पचन पचावनादि क्रिया से निवृत्त हुए सब तरह से कूटन पीटन तर्जन ताड़न वध बन्धन क्लेश से निवृत्त हुए एवं सब तरह से स्नान, पीठो मर्द्दन, तिलकादि विलेपन से निवृत्ते, शब्द स्पर्श रूप गन्ध माला अलंकार आदि से सर्वतः निवृत्त हुये और भी सावद्य काम योगोपाधि कर्म से अन्य प्राणी को परिताप होय ऐसे कार्य्य से यावज्जीव पर्य्यंत सर्वथा निवृत्त हुये वे अणगार यानी साधू होते हैं, वे ईर्या समितिवन्त भाषा समितिवन्त यावत् जिन प्रणीत निग्रन्थ प्रवचन को आगे कर उनके अनुगामी बने विचरते हैं।

॥ बोल बावनवां ॥

साधु रा भंड उपकरण परिग्रह में कह्या नहीं मूर्च्छा राखे तो परिग्रह लागे इम कह्यो। सा० सू० दशवैकालिक अ० ६ गाथा २१ वीं।

॥ दोहा ॥

बस्त्र पात्र ने कम्बलं, पाय पूछणा आदि।
संयम् लज्जा अर्थ मुनि, धारे तज असमाधि ॥२९४॥

ते परिग्रह मांहि नहीं, भण्यो ज्ञात पुत्र महावीर ।
मूर्च्छा थी परिग्रह कह्यो, महा ऋषि गुण धीर ॥२९५॥
दशवैकालिक देख लो, छट्ठा अध्ययन मझार ।
इकवीसमी गाथा मझे, भाख्यो श्री जगतार ॥२९६॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जं पि वत्थं व पायं वा, कंबलं पाय पुच्छणं ।

तं पि संजम लज्जट्ठा, धारंति परि हरंति य ॥२०॥

न सो परिग्गहो वुत्तो, नाय पुत्तेण ताइणा ।

मुच्छा परिग्गहो वुत्तो इअ वुत्तं महेसिणा ॥२१॥

दशवैकालिक अ० ६ गा० २१

॥ भावार्थ ॥

जो वस्त्र वा पात्र कम्बल पाय पूछना आदि संयम् लज्जार्थ रखे सो परिग्रह में नहीं श्री ज्ञातपुत्र महावीर स्वामी ने कहा है यदि उन पै मूर्च्छित भाव लावे तो परिग्रह में है ऐसा महर्षियों ने कहा है ।

॥ बोल तिरेपनवां ॥

साधु रे नव कोटी पच्चखाण कह्या । सा० सू० दशवैकालिक अ० ४ ।

॥ दोहा ॥

त्रिविध २ नव कोटी से, साधु रे पच्चखाण ।
दशवैकालिक में कह्यो, चतुर्थ अध्ययने जान ॥२९७॥

छड् जीव निकायें प्रते, हणे हणावे नांहि ।
अनुमोदे न हणतां प्रति, मन वच काया ताहि ॥२६८॥

॥ सूत्र पाठ ॥

इच्छेहिं छएहं जीव निकायाणं नेव सयं दंडं समारम्भेज्जा नेवन्नेंहिं दण्डं समारम्भेज्जा, दण्डं समारं भंते वि अन्नेन समणु जाणेज्जा जाव-ज्जीवाए तिविहेणं २ मणेणं वायाए कायेणं न करेमि न कारवेमि करं तं पि अन्नं न समणु ज्जाणामि ।

दशवैकालिक अध्ययन ४ था ।

॥ भावार्थ ॥

इन षड् जीव निकायों का स्वयं आरम्भ करे नहीं अन्य से आरम्भ करावे नहीं और करने वाले को अच्छा जाने नहीं मन वचन काया से यावज्जीव पर्यंत वैसा करे नहीं अन्य से करावे नहीं करते को अच्छा जाने नहीं इस तरह नव कोटी पच्छखान है ।

॥ बोल चौपनवां ॥

आचारज नी आज्ञा बिना आहार करे करता ने भलो जाणे तो प्रायश्चित कह्यो । सा० सू० निशीथ उ० ४ बोल २२ वां ।

॥ दोहा ॥

आचार्य नी आज्ञा बिना, अरु बिन दीधां आहार ।
जे साधु जो भोगवे, प्रायश्चित तसु धार ॥२६९॥

इम कह्यो सूत्र निशीथ में, चौथे उद्देशे मझार ।
गुरु आज्ञा बिन भोगव्यां, भाख्यो दंड उदार ॥२००॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू आयरिय अदित आहारं आहारंतंवा साइज्जइ ।

निशीथ उद्देशा ४ बोल २२ वाँ ।

॥ भावार्थ ॥

जो साधु आचार्य के विना दिये चारों प्रकार का आहार करे करते को भला जाने तो प्रायश्चित ।

॥ बोल पचपनवां ॥

पुन्य पाप से जीव ने पचतो दीठो कह्यो । सा० सू० उतराध्ययन अ० १० गाथा १५ वीं ।

॥ दोहा ॥

पुन्य पाप सें जीव ने, पचतो देख्यो सोय ।
दशमें उत्तराध्ययन में, पनरमी गाथा जोय ॥२०१॥
भव संसारे संसरइ, शुभाशुभ कर्म प्रभाव ।
प्रमाद बहोल पणे करइ, न जाणे तिरण रो दाव ॥२०२॥

॥ सूत्र पाठ ॥

एवं भव संसारे, ससरइ सुहा सुहेहि कम्मेहि ।
जीओ पमाय बहुलो, समयं गोयम मा पमाय ए ॥

उत्तराध्ययने १० वें ।

॥ भावार्थ ॥

ऐसे भव संसार में प्रमादी जीव शुभाशुभ कर्म करके परिभ्रमण करता है। इसलिये हे गौतम! समय मात्र भी प्रमाद मत कर।

॥ बोल छप्पनवां ॥

पुन्य पाप ने खपावणा कह्या। सा० सू० उत्त० अ० २१ वें गाथा २४ वीं।

॥ दोहा ॥

पुन्य पाप बेहूं भणी, खपावणा सुविशाल।
उत्तराध्ययने इकबीसमें, चोबीसमी गाथा न्हाल ॥२०३॥
द्विविध खपायां शीघ्र तें, पुन्य पाप असराल।
अपुनरागम गति लही, भवाब्धि तर्यो समुद्रपाल ॥२०४॥

॥ सूत्र पाठ ॥

दुविहं खवे ऊण पुराणा पावं निरंगणे सव्वाओ विप्पमुक्के।
तरित्ता समुद्दं व महाभवोघं, समुद्द पाले अपुणागमं गए तिवेमि॥

उ० अध्य० २१ वें गा० २४ वीं।

॥ भावार्थ ॥

पुन्य पाप दोनों का क्षय कर शैलेसी अवस्था को प्राप्त हो महा प्रभाविक भव समुद्र है उसे तैर कर पुनः वापिस न आना पड़े ऐसी जो सिद्ध गति है सो समुद्रपाल मुनि प्राप्त हुये।

॥ बोल सतावनवां ॥

उसन्ना पासत्था अर्थात् ढीला शिथिलाचारी ने वन्दना करे प्रशंसा करे करावे करता ने भलो जाणे तो प्रायश्चित कह्यो । सा० सू० निशीथ उद्देश १३ बोल ४२-४३-४४-४५ ।

॥ दोहा ॥

जे मुनि पासत्था प्रते, वन्दना करे कराय ।
करतां ने भलो जाणियां, चौमासी प्रायस्चित आय ॥२०५॥
दोषी मूल उत्तर गुणे, ते उसन्ना कहवाय ।
तेहने पिण वांद्या थकां, इमहिज दंड सुमाय ॥२०६॥
वलि पासत्था उसन्नातणो, करे प्रशंसा कोय ।
प्रायस्चित चौमासी तसु, निशीथ तेरहवें जोय ॥२०७॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू पासत्थं वंदइ वदंतं वा साइज्जइ ॥ ४२ ॥

जे भिक्खू पासत्थं पसंसंति, पसंसं तं वा साइज्जइ ॥ ४३ ॥

जे भिक्खू उसण्णं वंदइ वंदतं वा साइज्जइ ॥ ४४ ॥

जे भिक्खू उसण्णं पसंसेइ पसंसं तं वा साइज्जइ ॥ ४५ ॥

निशीथ उ० १३ ।

॥ भावार्थ ॥

जो भिक्षु पासत्था अर्थात् शिथिलाचारी को वन्दे वन्दावे अनुमोदे तो प्रायश्चित ॥४२॥ जो भिक्षु शिथिलाचारी की प्रशंसा करे करावे अनु-

मोदे तो प्रायश्चित ॥४३॥ जो भिक्षु उसन्ना यानी मूल उत्तर गुणों में दोष लगाने वाले को वन्दे वन्दावे अनुमोदे तो प्रायश्चित ॥४४॥ जो भिक्षु उसन्ना की प्रशंसा करे करावे अनुमोदे तो प्रायश्चित ॥४५॥

॥ बोल अठावनवां ॥

जो साधु ग्रहस्थ की औषधि करे करावे करतां प्रते अनुमोदे तो प्रायश्चित । सा० सू० निशीथ उ० १२ वें बोल १७ वूं ।

॥ दोहा ॥

ग्रहस्थ नी औषध करे, जो साधु मुनिराय ।
निशीथ उद्देशे बारहवें, दंड कह्यो जिनराय ॥२०८॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे भिक्खू गिहि तिगिच्छं करेइ करं तं वा साइज्जइ ॥१७॥

॥ भावार्थ ॥

जो साधु ग्रहस्थ की औषध करे करावे करते को अनुमोदे तो प्रायश्चित ।

॥ बोल उणसठवां ॥

सामायक दो कही १ आगार सामायक २ अणागार सामायक । सा० सू० ठाणांग ठाणे २ उ० ३ रा ।

॥ दोहा ॥

सामायक दो विध कही, आगार अने अणागार।
स्थानांग ठाणे दूसरे, तीजा उद्देशा मझार ॥२०९॥
आगार सामायक गृहस्थ रे, करे आगार सहित्त।
अणागार अणगार रे, ते आगार रहित्त ॥२१०॥

॥ सूत्र पाठ ॥

दुविहे सामाइए पण्णत्ते तंजहा—आगार सामाइए चेव अणा-गार सामाइए चेव।

स्थानांगे द्वितीय स्थाने।

॥ भावार्थ ॥

दो प्रकार की सामायिक कही तद्यथाः—आगार सामायिक अर्थात् ग्रहस्थ श्रावक के मुहूर्त्तादिक की मर्याद सहित सामायिक। दूसरी अणागार सामायिक यानी साधु के जो महाव्रत रूप यावज्जीवन पर्यन्त है सो आगार रहित।

॥ बोल साठवां ॥

चारित्र दोय कह्या—१ आगार चारित्र, २ अणा-गार चारित्र। सा० सू० स्थानांग ठाणे २ उ० १।

॥ दोहा ॥

चारित्र धर्म द्विविध कह्यो, आगार अणगार जाण।
स्थानांग ठाणे दूसरे, पहले उद्देशे पिछाण ॥२११॥

॥ सूत्र पाठ ॥

चरित्त धम्मे दुविहे पण्णते तं जहा:—आगार चरित्त धम्मे चेव, अणागार चरित्त धम्मे चेव ।

सू० स्थानाङ्ग द्वितीयं स्थाने ।

॥ भावार्थ ॥

चारित्र धर्म के दो भेद प्ररूपे तद्यथा:—आगार चारित्र धर्म सो ग्रहस्थ सम्यक्त्व सहित स्थूलपने व्रत आदरे। अणागार चारित्र धर्म सो ग्रहस्थाश्रम का सर्वथा त्याग कर पंच महाव्रत आदरे ।

॥ बोल इकसठवां ॥

धर्म दोय कह्या—श्रुत धर्म १, चारित्र धर्म २ सा० सू० ठाणाङ्ग ठा० २ उ० १ ।

॥ दोहा ॥

दोय धर्म जिन आखिया, श्रुत चारित्र उदार ।
श्रुत ते आगम जिन कथित, चारित्र ते व्रत धार ॥२१२॥
स्थानांग स्थाने दूसरे, प्रथमा उद्देश मझार ।
बोल पच्चीसमां ने विषे, कह्यो धर्म विस्तार ॥२१३॥

॥ सूत्र पाठ ॥

' दुविहे पं० तं० सुअधम्मे चेवं चरित्त धम्मे चेव' ।

ठाणाङ्ग ठा० २ ।

॥ भावार्थ ॥

दुर्गति में पड़ते हुये को धार रक्खे वह धर्म दो प्रकार का कहा—श्रुत धर्म द्वादशाँग रूप १, चारित्र धर्म पंच महाव्रत रूप २ ।

॥ बोल बासठवां ॥

कर्म खपावा री करणी दोय केही—संयम, और तप। सा० सू० उत्तराध्ययन अ० २८ वें गाथा ३६ वीं

॥ दोहा ॥

करणी कर्म खपायवा, दोय कही जिनराय।
उत्तराध्ययन अठवीसमें, छत्तीसवीं गाथा ताय ॥३-१४॥
पूर्व संचित कर्म ते, तप संयम थी खपाय।
छीन कारण सब दुःख तणों, महा ऋषि करणी कराय॥

॥ सूत्र पाठ ॥

खवेत्ता पुव्व कम्माइं, संजमेण तवेणय।
सव्व दुक्ख पहीणट्ठा, पक्कमति महेसिणो त्तिवेमि ॥३६॥

उत्तराध्ययन अ० २८ वाँ।

॥ भावार्थ ॥

सतरे प्रकार संयम से और बारे प्रकार तप से पूर्व संचित कर्मों को क्षय करे और जन्म जरा मृत्यु रूप सर्व दुःखों से रहितार्थ महा ऋषि करणी करे।

॥ बोल तरेसठवां ॥

मार्ग दोय कह्या—भगवान रो प्ररूप्यो मार्ग १, और पाखंडिया रो प्ररूप्यो मार्ग २। सा० सू० उ० अ० ३३ वें गा० ६३ वीं।

॥ दोहा ॥

दोय मार्ग हैं जगति में, इक पाषंडि कहाय।
द्वितीय मार्ग है जिन कथित, तेह परम सुखदाय।२१५।
उत्तराध्ययन तेवीसवें, केशी श्रमण पूछंत।
तब गोयम इह विधि कह्यो, ते सुणिजो धरि खंत॥२१६॥
कुप्रवचन पाषंडी नां, सर्व उन्मार्ग गछंत।
सन्मार्ग जे जिन कह्यो, उत्तम मार्ग ते तंत॥२१७॥

॥ सूत्र पाठ ॥

कु पवयण पासंडी, सव्वे उम्मग्ग पट्ठिया।
सम्मग्गं तु जिणक्खायं, एसमग्गे हि उत्तमे॥ ६३॥

॥ भावार्थ ॥

कुप्रवचन है सो पाषंडियों का कहा हुआ उन्मार्ग है उसमें जाने वाले सर्व कुमार्ग जा रहे हैं और जो जिनेश्वरों का कहा हुआ है सो सन्मार्ग है सोही उत्तम अर्थात् श्रेष्ठ है।

॥ बोल चौसठवां ॥

संवर गुण अने आस्रव गुण जुदा २ कह्या।
सा० सू० प्र० आचाराङ्ग अ० ४ उ० २।

॥ दोहा ॥

संवर गुण न्यारो कह्यो, आस्रव गुण कह्यो न्यार।
प्रथम आचारांग चतुर्थ वें, बुद्धिवंत करो विचार॥२१८॥

जेह आस्रव द्वार छे, ते रोक्यां संवर थाय ।
खोल्यां आस्रव होत है, इम गुण अलग कहाय ॥३१९॥
कर्म वंधनां हेतु ते, प्रवर्त्यां आस्रव होय ।
तसु त्याग कियां संवर हुवे, इम जुदा २ गुण जोय ॥३२०॥
आस्रव नूं अणास्रव हुवे, अणास्रव नूं आस्रव ।
प्रणमे जिण २ भाव में, पृथक २ गुण सर्व्व ॥३२१॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जे आसवा ते परिसव्वा, जे परिसव्वा ते आसवा, जे अणासव्वा ते अपरिसव्वा जे अपरिसव्वा ते अणासव्वा ।

प्र० आचाराङ्ग अ० ४ उ० २ ।

॥ भावार्थ ॥

जो कर्म बाँधने के हेतु हैं वे कर्म क्षपाने के या रोकने के हेतु हो सकते हैं, जो कर्म क्षपाने के या रोकने के हेतु हैं वे कर्म बाँधने के हेतु हो जाते हैं, तथा जितने कर्म बाँधने के हेतु हैं वे रोकने के हेतु हो जाते है और जितने कर्म रोकने के हेतु हैं वे बाँधने के हेतु हो जाते हैं, अर्थात् जिन २ कारणों से कर्म बंधते हैं वे आस्रव द्वार है और उन्हीं का त्याग करने से वेही संवर हो जाते हैं—जैसे मिथ्या श्रद्धना मिथ्यात आस्रव द्वार है, हिन्सा करना प्राणातिपात आस्रव द्वार है, और मिथ्या श्रद्धनाँ का त्याग कर सम श्रद्धना सम्यक्त्व संवर द्वार है इसी तरह हिन्सा का त्याग करें सो अहिन्सा संवर द्वार है, तात्पर्य कर्म आने के जो द्वार हैं सो खुले द्वार हैं उनको बंध करे सो संवर हैं, इस प्रकार आस्रव और संवर का गुण अलग २ हैं ।

॥ बोल पैंसठवां ॥

करणी च्यार कही—इह लोक रे हित १, पर-लोक रे हित २, कीर्त्ति वर्ण शब्द व पूजा श्लाघा रे हित ३, निरजरा रे हित ४, इण च्यार प्रकार में से एकान्त कर्म निर्जरा रे हित तप करणो कह्यो। सा० सू० दशवैकालिक अ० ९ उ० ४।

॥ दोहा ॥

करणी च्यार प्रकार नीं, कही दशवैकालिक मांहि।
नवमां अध्ययन ने विषे, चौथे उद्देशे ताहि ॥३२२॥
इह लोक अर्थ तप नहिं करे, वलि नहीं परलोक ने हेत।
वर्ण श्लाघा शब्दादि निमित, न करे तप संकेत ॥३२३॥
एकान्त निरजरा कारणे, तप करणो कह्यो सोय।
समाधि हुवे चौथे पदे, तसु गुण श्लोके जोय ॥३२४॥
नित्य विविध गुण होत हैं, आस रहित तप आसक्त।
निरजरा अर्थी पाप क्षय करे, तप समाधि सदा संयुक्त।३२५

॥ सूत्र पाठ ॥

चउविहा खलु तव समाहि भवइ तं जहाः—नो इह लोगट्ठयाए तव महि ट्ठिज्जा, नो परलोगट्ठया ए तव महि ट्ठिज्जा, नो किति वण्ण सद्द सिलोगट्ठयाए तव महि ट्ठिज्जा, नन्नथ निज्जरट्ठयाए तव महि ट्ठिज्जा, चउत्थं पयं भवइ भवइ एत्थसिलोगो, विविहं गुण-तवोरए य निच्चं,

भवइ निरासए निज्जरट्ठिए, तव साधुणइ पुराण पावगं जुत्तोसया तव समाहिए ।

दशवैकालिक अ० ६ उ० ४ ।

॥ भावार्थ ॥

च्यार प्रकार तप समाधि कही—इस लोक के सुखों के लिये तप नहीं करे १, परलोक के सुखों के लिये तप नहीं करे २, कीर्ति वर्ण शब्द श्लाघा के लिये तप नहीं करे ३, एकान्त निरजरा का अर्थी होके तप करे ४, चतुर्थ पद जो निरजरार्थी होके तप करे जिसका गुण श्लोक में कहा सो कहते हैं—तप समाधि मे सदा युक्त, सांसारिक आशा रहित निरजरा का अर्थी, पूर्व कृत पापों का नाश करता है ।

॥ बोल छासठवां ॥

प्रज्ञा दोय कही—ज्ञान प्रज्ञा १, पचखान प्रज्ञा २, ज्ञान प्रज्ञा करी जाणे और पचखान प्रज्ञा करी पचखान करै । सा० सू० आचाराङ्ग प्र० श्रु० अ० १

॥ दोहा ॥

दोय प्रकारे वर्णवी, प्रज्ञा ते बुद्धि जान ।
जाणे ज्ञान प्रज्ञा करी, प्रत्याख्यान पचखान ॥३२६॥
धुर आचारांगे कह्यो, धुर अध्ययन मझार ।
द्विविध प्रज्ञा इधकार नूं, बुद्धिवंत करे विचार ॥३२७॥
समजी क्रिया भेद प्रते, द्विविध प्रज्ञा थी जेह ।
समझ कर्म कारण भणी, दूर रहे मुनि गुण जेह ॥३२८॥

॥ सूत्र पाठ ॥

जस्स ते लोगं सि कम्म समारम्भा परिरणाया भवंति, से हु मुणी त्तिबेमि ।

प्र० आचाराङ्ग अ० १ उ० १ ।

॥ भावार्थ ॥

समस्त वस्तुओं के जानने वाले भगवान केवलज्ञान से साक्षात देखके उपरोक्त जो क्रियाओं के भेद बताये तथा दो प्रकार की प्रज्ञा बताई उन्हें अच्छी तरह समझ के कर्मों के कारणों से दूर रहै सो मुनि कहलाते हैं ।

॥ बोल सड़सठवां ॥

धर्म दोय कह्या—आगार धर्म १, अणागार धर्म २, सा० सू० उववाई समवशरण इधकार में ।

॥ दोहा ॥

धर्म दोय प्रकार नूं, कह्यो उववाई मांहि ।
आगार ने अणागार रो, ते व्रत में धर्म कहाहि ॥३२९॥
सर्व प्रकारे मुण्ड हो, आगार से अणागार ।
प्रवर्ज्या अंगीकार करि, अणागार धर्म धार ॥३३०॥
हिन्सा सर्व प्रकार से, मृषा सर्व प्रकार ।
चोरी मैथुन परिग्रह, सर्व प्रकार निवार ॥३३१॥
सर्व प्रकारे त्यागियो, रात्री भोजन जेह ।
अहो आयुष्यमान ते, अणागार सामाइ कहेह ॥३३२॥

ये धर्म सोख्या ऊठिया, निर्ग्रन्थ निर्ग्रन्थ नी जान ।
ते आराधक जिन आण नां, इम भाख्यो भगवान ॥२३३॥
आगार धर्म द्वादश विध, आख्यो श्री जिनराय ।
पंच अणुव्रत तीन गुण, च्यार सिखा व्रत मांय ॥२३४॥
हिन्सा झूठ अदत्त फुन, मैथुन परिग्रह जान ।
स्थूल थकी त्यागन किया, ते पंच अणुव्रत मान ॥२३५॥
दिशि उपभोग परिभोग नौं, कीधी जे मर्याद ।
विरम्यां अनर्थ दंड से, यह तीनूं गुण व्रत लाध ॥२३६॥
सामाइ देशावगासियं, पोषह अतिथि सं विभाग ।
च्यार सिखा व्रत एह हैं, सर्व द्वादश व्रत साग ॥२३७॥
अपश्चिम मर्णान्त जे, सलेहणा झूसण करंत ।
आगार सामाई धर्म ये, अहो आयुषामन्त ॥२३८॥
इण हिज धर्म से ऊठिया, सोख्यो यह व्रत धर्म ।
विचरे श्रावक श्राविका, ते आज्ञा आराधक पर्म ॥२३९॥
जे जे अविरत्ति निवृत्तिया, ते ते श्रावक धर्म ।
धर्म नहिं आगार सें, यह जिन शासन मर्म ॥२४०॥

॥ सूत्र पाठ ॥

धम्म दुविहं आइक्खति तं जहा—आगार धम्म च १, अणागार धम्मं च २, तात्र इह खलु सव्व तो सव्वत्ताए मुंडे भवित्ता आगाराओ अणागारियं पव्वइ सइ, सव्वओ पाणाइ वायाओ वेरमणं, सव्वाओ मुसावायाओ वेरमणं, सव्वाओ अदिन्ना दाणाओ वेरमणं, सव्वाओ

मेहुणाश्रं वेरमणं, सव्वाओ परिग्गाहाओ वेरमणं, सव्वाओ राई भोयणा ओ वेरमणं, अयमाउसो अणगार सामाइए धम्म पणत्ते, एयस्स धम्मस्स सिक्खाए उवट्ठिए णिग्गंथ णिगंथिवा विहरमाणे आणाए आराहए भवंति । आगार धम्म दुवालस्स विहं आइक्खइ तं जहा—पञ्चअणुव्व-याइ तिणि गुणव्वयाइं चत्तारि सिक्खा वयाइं, पञ्चअणुव्वयाइं तं जहा— थूलाओ पाणाइ वायाओ वेरमणं, थूलाओ मुसावायाओ वेरमणं, थूलाओ अदिन्ना दाणाओ वेरमण, सदारा संतोसे, इच्छापरिमाण थूलाओ परि-ग्गहाओ वेरमण, तिणि गुणव्वयाइं तं जहा—दिसिव्वयं, उवभोग परिभोग परिमाणं, अणत्थ दड वेरमणं. चत्तारि सिक्खा वयाइं तं जहा— सामाइयं, देसावग्गासियं; पोसहोववासे, अतिहि सं विभागो, अपच्छिम मरणांतिया सलेहणा झूसणाराहणाए । अयमाउसो अगार सामाइए धम्मे पणत्ते, एयस्स धम्मस्स सिक्खाए उवट्ठिए समणोवासए समणो-वासियावा विहरमाणे आयाए आराहए भवंति ।

॥ भावार्थ ॥

धर्म दो प्रकार का कहा सो कहते हैं—आगारिक धर्म तो गृहवास में रहता हुआ धर्म पाले १, अणगारिक धर्म गृहवास त्याग कर साधु धर्म पाले सो निश्चय कर के सर्वथा प्रकार मुण्ड होके आगार से अना-गार हो सर्वथा प्रकार प्राणातिपात से निवृत्ते, सर्वथा प्रकार मृषावाद से निवृत्ते, सर्वथा प्रकार चोरी से निवृत्ते, सर्वथा प्रकार स्त्री संग से निवृत्ते, सर्वथा प्रकार परिग्रह से निवृत्ते, सर्वथा प्रकार रात्रि भोजन से निवृत्ते, हे आयुष्यमान यह अणगार सामाइ धर्म प्ररूप्या है, यही धर्म सीखा है, इसी धर्म में उठे हैं साधु तथा साध्वी उपरोक्त पंच महाव्रत रूप धर्म पालते हुए विचरते हैं। आगार धर्म बारे प्रकार का कहा है

सो कहते हैं—पंच अणुव्रत तीन गुण व्रत च्यार सिखा व्रत इस प्रकार द्वादश व्रत रूप धर्म कहा सो कहते हैं—स्थूल से प्राणातिपात से निवृत्ते १, स्थूल से मृषावाद से निवृत्ते २, स्थूल से चौरी कर्म से निवृत्ते ३, स्वः स्त्री से ही संतोष अर्थात् पर स्त्री के त्याग ४, स्थूल से परिग्रह से तिवृत्ते ५, (उपरोक्त पंच अणुव्रत कहे) तीन गुण व्रत इस प्रकार—दिशि मर्याद् अर्थात् दशो दिशा में मर्याद उपरान्त जाने का त्याग ६, उपभोग परिभोग की मर्याद ७, अनर्थ दंड परिहार ८, (च्यार सिखा याने चोटी समान व्रत इस प्रकार) सामायक एक मुहूर्त्त प्रमाण सावद्य जोगो के त्याग ६, देशावकासो काल की मर्याद करके इच्छा प्रमाण सावद्य जोगों को त्यागें १०, पोषह उपवास ११, अतिथिसं विभाग अर्थात् शुद्ध साध, साध्वियो को निर्दूषण चउदे प्रकार का दान दे १२, इस प्रकार द्वादश व्रत धर्म पालता हुआ मर्णान्ते संलेषना संथारा दिक करे, व्रतों में कोई दोष लगा हो उसका प्रायश्चित लेके आराधक होना ऐसा व्रतमयी धर्म श्रावक श्राविकों ने सीखा है, इसी धर्म में उठे हैं, इसी धर्म में विचरते हुए जिन आज्ञा का आराधक होते हैं।

॥ सोरठा ॥

पंच महाव्रत रूप रे, मुनि नूं धर्म इहां कह्यो।
द्वादश व्रत सरूप रे, श्रावक धर्म जिन आखियो ॥२४१॥
केइ कहे बारमूं व्रत रे, अतिथि ते आयां प्रते।
देवे सचित्त अचित्त रे, ते पिण श्रावक धर्म है ॥२४२॥
एम सूत्र विपरीत रे, अर्थ करे निज मन थकी।
तसु उत्तर सुवदीत रे, बुद्धिवंत हिये विचारिये ॥२४३॥
अव्रत घर्‍यां व्रत होय रे, तो अव्रत से देवतां।

व्रत्ति धर्म किम जोय रे, अव्रत सेवायां थकां ॥३४४॥
ठाम २ सिद्धान्त रे, बारमूं व्रत श्रावक तणूं ।
श्रमण निर्ग्रन्थ ने तंत रे, दान दे चउदे प्रकार नूं ॥३४५॥
प्रासूक दोष रहित रे, मुनी प्रते प्रतिलाभतो ।
विचरे छै इण रीत रे, ते बारमूं व्रत सूलें कह्यो ॥३४६॥
वलि देवगुरु धर्म काज रे, हिन्सा करै षटकाय नीं ।
ते धर्म न कह्यो जिनराज रे, आगार धर्म विषे इहां ॥३४७॥

॥ बोल अड़सठवां ॥

ध्यान च्यार कह्या—आर्त्ति ध्यान, रौद्र ध्यान, धर्म ध्यान, शुक्ल ध्यान । सा० सू० उववाई समवशरण इधकारमें ।

॥ दोहा ॥

च्यार ध्यान जिनवर कह्या, आर्त्त ने रौद्र ध्यान ।
धर्म ध्यान है तीसरो, चौथो शुक्ल ध्यान ॥३४८॥
समवशरण इधकार में, तप वर्णन रे मांहि ।
आर्त्त रौद्र नहिं ध्यावणो, सूत्र उववाई ताहि ॥३४९॥

॥ सूत्र पाठ ॥

से किं तं झाणे? झाणे चउव्विहे पन्नते तं जहा—अट्टे झाणे रूद्दे झाणे, धम्मे झाणे, सुके झाणे ।

उववाई ।

॥ भावार्थ ॥

ध्यान कितने? ध्यान च्यार प्रकार के प्ररूपे—आर्त्तध्यान १, रौद्र ध्यान २, धर्म ध्यान ३, शुक्ल ध्यान ४।

॥ बोल उणसत्तरवां ॥

साधु असंयती ने ऊभो रहे बैठ सो ऊभो रहे। आव जाव काम कर, इम न कहे सा० स० दशवैकालिक अ० ७ गा० ४७ वीं।

॥ दोहा ॥

असंयती ने नहिं कहे, ऊभो रहे वा बैस।
सयन आव अरु जाव नूं, कार्य कर इम न कहेस ॥३५०॥
सावद्यकारी वचन इम, न कहे प्रज्ञावंत।
धीर वीर जे संयती, इम भाख्यो भगवंत ॥३५१॥
दशवैकालिक आखियो, सप्तम् अध्ययन मझार।
गाथा सैंतालीसमीं, बुद्धिवंत करो विचार ॥३५२॥

॥ सूत्र पाठ ॥

तहेवा संजयं धीरो, आसएहि करे हिवा।
सय चिट्ठ वयाहित्ति, नेवं भासेज्ज पराणवं ॥४७॥

दशवैकालिक अ० ७ व।

॥ भावार्थ ॥

वैसे ही साधु असंयती को बैठो ऊठो आवो जावो अमुक कार्य्य करो, ऐसी सावद्य भाषा प्रज्ञावंत न कहै।

॥ दोहा ॥

ए गुणोत्तर बोल इम, आख्या आगम मांय ।
लोंकाजी संग्रह किया, तिण सूँ लोंका हुण्डी कहाय ।२५३।
प्रगटे पंचम् अर्क सें, भिक्षु महा गुण धार ।
श्री जिन आज्ञा शिर धरी, प्रगट कियो उजियार ॥२५४॥
यथा तथ्य ओलखावियो, यह प्रभु तेरापंथ ।
पाले महाव्रत पंच समिति, तीन गुप्त निर्ग्रन्थ ॥२५५॥
हिन्सा धर्म उथापियो, दयामयी धर्म दिपाय ।
कहणी करणी एकसी, आगम न्याय बताय ॥२५६॥
श्री जिन धर्म अनादि रो, हुआ अनन्त अरिहन्त ।
जे जिम भाख्यो तिम कह्यो, निशंक सूँ भिक्षु सन्त ॥२५७॥
तसु पट भारीमालजी, तीजे पाट ऋषिराय ।
जयगणी चौथे पाट वर, पंडित प्रसिद्ध कहाय ॥२५८॥
मघवा सम मघवा गणी, पंचम् पट अवलोय ।
पाट छठे माणक भला, सप्तम् डाल गणीश्वर जोय ॥
वर्त्तमान शासन धणी, अष्टम पाटे जान ।
सुखद दाता सुरतरु समां, कालूगणी गुणखान ॥२६०॥
दिन २ वृद्धि ज्ञान नी, चारित्र गुण इधकाय ।
दिन २ सुख सम्पति बढे, सुगुरु तणें सुपसाय ॥२६१॥

दिन २ ऋद्धि सम्पजे, वीर्य लद्धि प्रगटाय ।
दिन २ सद्बुद्धि वटै, सिद्धि नेड़ी थाय ॥३६२॥
समकित व्रत सुध पालियां, सीझे वाञ्छित काज ।
दुःख दोहग दूरा टले, पासें अविचल राज ॥३६३॥
भिक्षु फुन जयाचार्य कृत, ग्रन्थ मांहि इधकाय ।
वाकुं न्याय वताविया, प्रगट पणें सुखदाय ॥३६४॥
तसु अनुसारे में इहां, दोहा सोरठा मांहि ।
न्याय कह्यो किञ्चित पणें, देख २ करि ताहि ॥३६५॥
सूत्र पाठ जे जिम कह्या, ते तिम लिखा इण स्थान ।
ओछा इधक आया हुवै, तो मिच्छामि दुक्कडं जान ॥३६६॥
अक्षर लघु दीर्घादि नूँ, नहिं मुज ज्ञान विशेष ।
लघु बुद्धि माफक रची, सोरठ दोहा कहेस ॥३६७॥
तिण सूं पण्डित जन जिके, वांचि न करस्यो हास्य ।
गुण ग्राही गुणवन्त नूं, सदा अछूं मैं दास ॥३६८॥
श्रमणोपासक श्रमण नूं, श्री जिन मत में सीर ।
समकित धर्म साधर्मी फुन, श्रावक नूं लघु वीर ॥३६९॥
श्री श्री कालू गणपति, प्रतपो जेम दिनन्द ।
तसु अनुग्रह दिन २ इधक, गुलाबचन्द आनन्द ।३७०।
शत उन्नीस तियांसिये, विक्रम सम्वत् येह ।
जोड रची हुण्डी तणीं, जयपुर नगर विषेह ॥३७१॥

॥ कलश ॥

(चाल गीतक छन्द)

गुण रयन बयन जिनेश केरा, अति भलेरा जानिये। जे कह्या, जे जिम सत्य तथ्य, सुअथ्य पथ्य बखानिये॥ धरि आसता प्रतीति रीति, विनीत केरी आनिये। सुगुरू वाचा सर्व सांचा, अधिक आछा मानिये॥१॥ तज कपट लपट मिथ्यात नीं, निज आथिनीं सुध ल्याविये। अव्रत घटावी व्रत बढावी, आतम भावें आवियें। सुख सम्पदा निज घर घणी, गुणवंत नां गुण गाविये॥ कहै गुलाबचन्द आनन्द अति ही, सुगुरू सेयां पाविये॥२॥

पूज्यजी महाराज श्रीश्री १००८ श्री भीक्षणजी कृत

अथ जिन आज्ञा को चौढालियो

दोहा

केइ पाषण्डी जैन रा, साधु नाम धराय। ते पाप कहे जिन आज्ञा मझे, कुड़ा कुहेत लगाय ॥१॥ आहार पाणी साधु भोगवे, ते श्रीजिन आज्ञा सहित। तिणमें प्रमाद ने अव्रत कहे. त्यांरी श्रद्धा घणी विपरीत ॥ २ ॥ वले वस्त्र पात्र कामलो, इत्यादिक उपधि अनेक। ते जिन आज्ञा स्यूं भोगवै, तिणमें पाप कहे ते विना विवेक॥३॥ त्यां श्री जिन धर्म नहीं ओलख्यो, जिन आज्ञा पिण ओलखी नांह। तिणस्यूं अनेक बोलां तणो, पाप कहे जिन आज्ञा रे मांह ॥ ४ ॥ कहे नदी उतरे तिण साधु ने, आज्ञा दे जिन आप। आ प्रत्यक्ष हिन्सा देखल्यो आज्ञा छै तो पिण पाप ॥ ५ ॥ इत्यादिक अनेक बोलां मझे, आज्ञा दे जिनराय। जठे हिसा होवे छै जीवरी, तठे पाप लागे छै आय ॥ ६ ॥ इम कही ने जिन आज्ञा मझे, थापे पाप एकन्त। हिवे ओलखाऊं जिन आगन्यां ते सुणज्यो मतिवंत ॥ ७ ॥

॥ ढाल पहली ॥

(भवियण सेवोरे साधे सयाणा एदेशी)

जे जे कारज जिन आज्ञा सहित छै, ते उपयोग सहित करे कोय। ते कारज करतां घात होवे जिवांरी, तिणरो साधु ने पाप न होयरे॥ भवियण जिन आगन्यां सुखकारी ॥ १ ॥ जीवां तणी घात हुई साधु थीं, त्यांरो साधु ने पाप न लागे। जिन आगन्यां पिण लोपी न कहिजे, वले साधु रो व्रत न भांगे रे ॥ २ ॥ आ दूचरज वाली बात उघाड़ी कांचांरे हिये कीम समावे। ज्यां जिन आज्ञा ओलखी नहीं पूरी, ते जिन आज्ञा में पाप बतावे रे ॥ ३ ॥ नदी उतरे जब शुद्ध साधु ने, आज्ञा दे श्रीजिन आप। जो क नदी उतरतां पाप होवे तो, आज्ञा दे त्यांने पिण पापरे ॥४॥ छद्मस्थ साधु नदी उतरे जब, त्यांने केवली आज्ञा दे सोय। पोते पिण केवली नदी उतरे छै, पाप हुसी तो दोयां ने होय रे ॥ ५ ॥ जे नदी उतरे छै केवलज्ञानी, त्यांने पाप न लागे लिगार। तो छद्मस्थ ने पाप किण विध लागे, आं दोयां रो एक आचार रे ॥ ६ ॥ छद्मस्थ ने केवली नदी उतरे जब, दोयां स्यूं होवे जीवांरी घात। जो जीव मुआ त्यांरो पाप लागे तो, दोयां ने लागे

प्राणातिपात रे ॥ ७ ॥ केवल ज्ञानी नदी उतरे त्यांने पाप न लागे कोय। तो छद्मस्थ साधु नदी उतरे जब, त्यांने पिण पाप न होय रे ॥ ८ ॥ कोई कहै केवली ने तो पाप न लागे, नदी उतरतां जोग रहै शुद्ध। पिण छद्मस्थ ने पाप लागे नदी रो, आ प्रत्यक्ष वात विरुद्ध रे ॥ ९ ॥ जिण विध केवली नदी उतरे जिम, छद्मस्थ जो उतरे नाहीं। तो खामी छै तिण रे ईर्या सुमति में, पिण खामी नहीं कर्तव्य मांहि रे ॥ १० ॥ ते खामी पड़े ते अजाण पणो छै, ईरिया वहि पड़िक्कमणो थाय। वले अधिको खामी जाणे ईर्या समिति में, तो प्रायश्चित ले उतारे पाप रे ॥ ११ ॥ साधु छद्मस्थ नदी उतरे ते कर्तव्य, सावज म जाणो कोय। जो सावज होवे तो संजम भांगे, विराधक री पांत होय रे ॥ १२ ॥ आगे नदी उतरतां अनन्त साधा ने उपनो छै केवल ज्ञान। त्यां नदी मांहि आउखो पूरो करी ने, पहोंता पञ्चमी गति प्रधान रे ॥ १३ ॥ केइ कहै साधु नदी उतरे त्यांरे, इतरी हिन्सा रो छै आगार। तिणरो पाप लागे पिण व्रत न भांगे, इम कहै ते मूढ़ गिवार रे ॥ १४ ॥ जो साधु रे हिन्सा रो आगार होवे तो, नदी उतरतां मोक्ष न जावै। हिन्सा रो आगार ने पाप लागे जब, चवदमों गुणठाणों न

आवै रे ॥ १५ ॥ कोई कहै नदी उतरे जब साधु ने, लागे असंख्या हिन्सा परिहार। तिणरो प्रायश्चित लियां बिन शुद्ध नहीं छे। इम कहै तिणरे हिय के अन्धार रे ॥ १६ ॥ जो नदी उतर्‍यां रो प्रायश्चित बिन लीधां, ते साधु शुद्ध नहीं थावे। तो नदी मांहि साधु मरे ते अशुद्ध छे, ते मोच मांहि क्युं कर जावे रे ॥ १७ ॥ साधु नदी उतर्‍यां मांहे दोष हुवे तो, जिन आगन्यां दे नाहीं। जिन आगन्यां दे तिहां पाप नहीं छे, थे सोच देखो मन मांहि रे ॥ १८ ॥ नदी उतरे त्यांरो ध्यान किसो छै, किसी लेश्या किसा परिणाम। जोग किसा अध्यवसाय किसा छै, भला भुंडा पिछाणौ ताम रे ॥ १९ ॥ ए पांचुं भला छै तो जिन आज्ञा छै, माठा में जिन आज्ञा न कोय। पांचुं माठा स्यूं तो पाप लागे छै, पांचुं भलास्यूं पाप न होय रे ॥ २० ॥ छद्मस्थ ने केवली नदी उतरे जब, लारे छद्मस्थ केवली आगे। छद्मस्थ उतरे छै केवली री आज्ञा स्यूं, त्यांने पाप किसे लेखे लागे रे ॥ २१ ॥ जिन शासण च्यार तीर्थ मांहि, जिन आगन्यां छै मोटी। कोई जिन आगन्यां मांहि पाप बतावे, तिणरी श्रद्धा छै खोटी रे ॥ २२ ॥ दवरो दाधो जाय पड़े जल मांहि, पिण जल मांहि लागी लाय। तो किसी

ठोड़ बो करे ठंढाइ, किसी ठोड़ साता होवे ताय रे ॥ २३ ॥ ज्युं जिण आज्ञा मांहि पाप होवे तो, किणरी आज्ञा मांहे धर्मो । किणरी आज्ञा पाल्यां शुद्धगति जावे । किणरी आज्ञा स्युं कटे कर्मों रे ॥ २४ ॥ छांटां आवे छै तिण मांहि साधु, मातरो परठे दिसां जावै । तिणरे छै पिण जिनजी री आज्ञा, तिणमें कुण पाप बतावे रे ॥ २५ ॥ साधु राते लघु बड़ी नीत दोनूं ही, परठण जावे अछांहि । वले सिज्याय करे राते थांनक बारे, जावे आवे अछायां मांहिरे ॥ २६ ॥ इत्यादिक साधु राते काम पड़े जब, अछायां आवे ने जावे । तिणने पिण छै जिनजी री आज्ञा, तिणमें कुण पाप बतावे रे ॥ २७ ॥ राते अछायां अपकाय पड़े छै, तिणरी घात साधु थी थाय । ओ पिण न्याय नदी जिम जाणो । तिण ने पाप किसी बिध थाय रे ॥ २८ ॥ नदी मांहि वहती साधवी ने, साधु राखे हाथ संभावें । तिण मांहि पिण छै जिनजी री आज्ञा, तिणमें कुण पाप बतावै रे ॥ २९ ॥ इर्या समिति चालतां साधु स्यूं, कदा जीवं तणी होवे घात । ते जीव मुआं रो पाप साधु ने, लागे नहीं अंशमात रे ॥ ३० ॥ जो इर्या समिति बिना साधु चाले, कदा जीव मरे नवि कोय । तो पिण साधु ने हिन्सा छउं काय री लागे । कर्म तणो बंध होय रे

॥ ३१ ॥ जीव मुआ तिहां पाप न लागो, न मुआ तिहां लागो पाप । जिण आज्ञा संभालो जिण आज्ञा जोवो जिण आज्ञा में पाप म थापो रे ॥ ३२ ॥ जब कोई कहै गृहस्थी हाल्यां चाल्यां बिन, साधु ने किम बहिरावे। हालण चालण री तो नहीं जिन आज्ञा, चाल्यां बिन तो बहरावणों नांवे रे ॥ ३३ ॥ बेठो होवे तो उठ बहरावे, उभो होवे तो बैठ बहरावे । बैठन उठण री तो नहीं जिन आज्ञा, तो बारमों व्रत किम निपजावे रे ॥ ३४ ॥ जो जिन आज्ञा बारे पाप होवे तो, हालण चालण री पाप थावै । साधां ने वहरायां रो धर्म ते चौवड़े, कोई ईसड़ी चरचा ल्यावे रे ॥३५॥ कोई कहै चालण री तो जिन आज्ञा नाहीं, तोही चाल वहरायां रो धर्म । जिण आगन्या बिन चाल्यो तिण ने, लागो नहीं पाप कर्म रे ॥ ३६ ॥ इण विध कुहेत लगावे अज्ञानी, धर्म कहै जिन आज्ञा बारो । हिवे जिन अगन्यां मांहि धर्म अजुण रा, थे जाव हिया मांहे धारो रे ॥ ३७ ॥ मन वचन काया रा जोग तीनूं हीं, सावद्य निर्वद्य जाण। निर्वद्य जोगां री श्रीजिन आज्ञा, तिणरी करजो पिछाण रे ॥ ३८ ॥ जोग नाम व्यापार तणों छै, ते भला नै भूण्डा व्यापार । भला जोगां री जिन आज्ञा छै, माठा जोग जिन आगन्यां बार रे ॥ ३९ ॥ मन

वचन काया भला ब्रतावो, ग्रहस्थ ने कहै जिनरायो। ते काया भणी किण बिध प्रवर्तावे, तिण रो विवरो सुणो चित्त लायो रे ॥ ४० ॥ निर्वद्य कर्तव्य री छै श्री जिन आज्ञा, तिण कर्तव्य ने काया जोग जाण। तिण कर्तव्य री छै श्री जिन आज्ञा, तिण कर्तव्य ने करो आगीवाण रे ॥ ४१ ॥ साधां ने आहार हाथां स्यूं वहरावे, उठ बैठ वहरावे कोय। ते वहरावण रो कर्तव्य निर्वद्य छै, तिणमें श्री जिन आगन्यां होय रे ॥ ४२ ॥ निर्वद्य कर्तव्य ग्रहस्थी करे छै, त्यांने आगन्यां दे जिन-राय। ते कर्तव्य तो काया स्यूं करसी, पिण न कहै थे चलावो कायरे ॥ ४३ ॥ निर्वद्य कर्तव्य री आगन्यां दीधां, पाप न लागे कोय। हालण चालण री आगन्यां दीधां, ग्रहस्थ स्यूं संभोग होय रे ॥ ४४ ॥ वेसो सुवो उभो रहो नै जावो, ग्रहस्थ ने साधु न कहै आम। दशवैकालिक रे सातमें अध्ययन, सैंतालीसमीं गाथा में तांम रे ॥ ४५ ॥ उभा रो कर्तव्य बैठा रो कर्तव्य, करणों कहै जिनराय। पिण बैठण उठन रो नहीं कहै ग्रहस्थ ने, थे विचार देखो मन मांय रे ॥ ४६ ॥ निर्वद्य कर्तव्य री आगन्यां दीधां, निर्वद्य चालवो ते मांहे आयो। कर्तव्य छोड़ने चालण री आज्ञा देवे तो ग्रहस्थ रो संभोगी थाय रे ॥ ४७ ॥ ग्रहस्थ रे द्वार

पड़्यो कपड़ादिक, जब साधु सूं जाणी नावे मांहि। जब कोई गृहस्थ भेलो करे कपड़ादिक, साधु ने मारग देवे ताहिं रे ॥४८॥ साधां नै मारग देवें जावण आवण रो, ते कर्तव्य निर्वद्य चोखो। जो कपड़ादिक रे काम, भैलो करे तो सावद्य काम छै देखो रे ॥ ४९ ॥ तिण स्यूं साधु कहै गृहस्थ ने, म्हांने जायगां द्यो जावां मांहि। पिण कपड़ादिक भेलो करो सांवटै नै, दूसड़ी न काढे वाड़ रे ॥ ५० ॥ गृहस्थ री उपधि करे आगो पाछो, बैसायवा सोयवादिक रे काम। ते पिण कर्तव्य निर्वद्य जाणो, नहीं उपधि उपर परिणाम रे ॥ ५१ ॥ केइ श्री जिन आगन्यां बारे अज्ञानी, धर्म कहै छै ताम। ते भोला लोकां ने भ्रम में पाड़े, लेइ अनेक बोलां रो नाम रे ॥ ५२ ॥ श्रावक री मांहो मांहि करे वियावच, वले साता पूछे नै पूछावे। तिण में श्री जिन आणां मूल न दिसै, तिण मांहे धर्म बतावे रे ॥ ५३ ॥ श्रावक री मांहो मांहे व्यावच कीधी, तिण दियो शरीर रो साज। छव काया रो शस्त्र तीखो कीधो, तिण स्यूं आज्ञा न दे जिनराज रे ॥ ५४ ॥ गृहस्थी री व्यावच कीधी तिण रे, अठाइसमूं अणाचार। साता पूछ्यां री अणाचार सोलसूं, तिणमें धर्म नहीं छै लिगार रे ॥५५॥ शरीरादिक ने श्रावक पूंजे, मातरादिक ने परठै पूंजे।

इत्यादिक कारज री नहीं जिन आज्ञा, धर्म कहे त्यांने सुध तो न सूजे रे ॥ ५६ ॥ शरीर पूंजे मातरादिक परठे, ते तो शरीरादिक री छै काज। जो धर्म तणों ए कार्य हुवे तो, आगन्यां देता जिनराज रे ॥ ५७ ॥ जो पूंजणो परठणो न करे जावक, तो काया थिर राखणी एक ठाम। पिण हस्तादिक ने बिन चलायां रहणी नावे ताम रे ॥ ५८ ॥ लघु बड़ी नीत तणी अवाधा, खमणी ठमणी न आवे ताम। पूंजे परठे तोइ सावद्य कर्तव्य छे, जिन आज्ञा रो नवि काम रे ॥ ५९ ॥ कह्या थोड़ी बुद्धि त्यांने समज न पड़े तो, राखणी जिण प्रतीत। आगन्यां मांहे पाप आज्ञा बारे धर्म, दूसड़ी न करणी अनीत रे ॥ ६० ॥ जिन आगन्यां मांहे पाप कहे छे, ज्यांरो मत घणो छै माठो। जिन आगन्यां बारे धर्म कहे छे, त्यांरे आइ अकल आड़ी पाटी रे ॥६१॥ जिन आगन्यां मांहे पाप कहतां, मूरख मूल न लाजे। वली धर्म कहे जिन आगन्यां बारे, ते पण्डित पाखंडियां में बाजे रे ॥६२॥ जिन आगन्यां मांहे पाप कहे छे, ते बुड़े छे कार कार ताणों। वली धर्म कहे जिन आगन्यां बारे, ते तो पूरा छे मूढ अजाणो रे ॥६३॥ समत अठारा ने वर्ष इकताले, जेठ शुद्ध तीज ने शुक्रवार रे। जिन आगन्यां उलखावण काजे, जोड़ कीधी छे पर उपगार रे ॥६४॥

॥ दोहा ॥

जिण शासण में आज्ञा बड़ी, ओलखै ते बुद्धिवान। ज्यां जिण आज्ञा नवि ओलखी, ते जीव छै विकल समान ॥ १ ॥ दोय करणी संसार में, सावद्य निर्वद्य जाण। निर्वद्य में जिण आगन्यां, तिण सूं पामैं पद निर्वाण ॥२॥ सावद्य करणी संसार नी, तिण में जिन आगन्यां नहीं होय। कर्म बंधै छै तेह थी, धर्म म जाणों कोय ॥३॥ किहां २ छै जिण आगन्यां, किहां २ आगन्यां नांह। बुद्धिवंत करो विचारणां, निरणों करो घट मांह ॥ ४ ॥

॥ ढाल दूजी ॥

(हूं बलिहारी हो श्री पूज्यजी रे नाम री एदेशी)

कोई करे पच्चखाण नौकारसी, तिण री आगन्यां दो जिन आप हो ॥ स्वामीजी ॥ कोई दान दे लाखां संसार में, पूछ्यां आप रहो चुपचाप हो। स्वामीजी हूं बलिहारी हो, हूं बलिहारी हो श्री जिनजी री आगन्यां ॥ १ ॥ जिण आज्ञा सहित नौकारसी, कीधां कटै सात आठ कर्म हो ॥ स्वा० ॥ कोई दान दे लाखां संसार में, ते तो आप रो भाख्यो नहीं धर्म हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ २ ॥ अन्तर मुहूर्त त्यागे एक भूंगड़ो, तिण री आगन्यां दो

जिनराज हो ॥ स्वा० ॥ कोई जीव छुड़ावे लाखां दाम दे। तठे आप रहो मौन साझ हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ ३ ॥ अन्तर मुहूर्त त्यागे एक भूंगड़ो, ते तो आप रो सिखायो छे धर्म हो ॥ स्वा० ॥ तिण स्यूं कर्म कटे तिण जीव रा, उतकृष्टो पामें सुख परम हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ ४ ॥ कोई जीव छुड़ावे लाखां दाम दे, ते तो आप रो सिखायो नहीं धर्म हो ॥ स्वा० ॥ ओ तो उपकार संसार नों, तिण स्यूं कटता न जाण्यां आप कर्म हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ ५ ॥ कोई साधां ने वहिरावे एक तिणकलो, तिण री आज्ञा दो आप साख्यात हो ॥ स्वा० ॥ कोई श्रावक जिमावे कोडांग में, तिण री आज्ञा न दो अंशमात हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ ६ ॥ साधां ने वहिरावे एक तिणकलो, तिण रे बारलूं व्रत कह्यो आप हो ॥ स्वा० ॥ तिण स्यूं आज्ञा दीधी आप तेहने, वले कटता जाण्यां तिण रा पाप हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥७॥ कोई श्रावक जीमावे कोड़ां न्युंत ने, ते तो सावद्य कामो जाण्यो आप हो ॥ स्वा०॥ उण छव काय शस्त्र पोषियो, तिणने लागो छे एकान्त पाप हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ ८ ॥ कोई करे व्यावच श्रावकां तणी, तठे पिण आप रे छे मौन हो ॥ स्वा० ॥ उण तीखो कीधो छे शस्त्र छव काय नों, ते कर्तव्य जाण्यो आप जबुन हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ ९ ॥ कोई उघाड़े मुख

अणे छै सिधन्त ने, कोडांग में गुणे छै नवकार हो ॥ स्वा० ॥ तिण में आप तणी आगन्यां नहीं, तिण में धर्म न सरधुं लिगार हो ॥ स्वा० ॥ ह्रं ॥ १० ॥ उघाड़े मुख गुणे छै नवकार ने, तिण वाउकाय मास्या असख्य हो ॥ स्वा० ॥ तिण में धर्म श्रद्धे ते भोला थका, त्यांरे लागा कुगुरां रा डंक हो ॥ स्वा० ॥ ह्रं ॥ ११ ॥ जैणां स्यूं गुणे एक नवकार ने, तिण स्यूं क्रोड़ भवांरा काटे कर्म हो ॥ ॥ स्वा० ॥ तिण में आप तणो छै आगन्यां, तिण रे निश्चे ही निर्जरा धर्म हो ॥ स्वा० ॥ ह्रं ॥१२॥ कोई साधु नाम धराय ने, प्रशंसे छै सावद्य दान हो ॥ स्वा० ॥ त्यां भेष भांड्यो भगवान रो, त्यांरे घट मांहि घोर अज्ञान हो ॥ स्वा० ॥ ह्रं ॥ १३ ॥ मौन कही छै साधु ने सावद्य दान में, ते तो अन्तराय पड़ती जाण हो ॥ स्वा० ॥ तिण रो फल तो सूत्र में बतावियो । तिण री बुद्धिवन्त करसी पिछाण हो ॥स्वा०॥ ह्रं ॥१४॥ प्रदेशी राजा कहे केशी स्वाम ने, म्हारे तो चढ़तो बैराग हो ॥ स्वा० ॥ म्हारे सात सहंस गांव खालसे, तिण रा करूं च्यार भाग हो ॥स्वा०॥ ह्रं ॥ १५ ॥ एक भाग राण्यां निमते करूं, दूजो भाग करूं खजान हो ॥ स्वा० ॥ तीजो भाग घोड़ा हाथी निमत करूं, चौथो भाग करूं देवा दान हो ॥ स्वा० ॥ ह्रं ॥ १६ ॥ च्यारूं

भाग सावद्य कामों जाणनें, मौन साझी रह्या केशी स्वाम हो ॥ स्वा० ॥ जो उवे किणहिक में धर्म जाणता, तो तिण री करता प्रशंसा ताम हो ॥स्वा०॥ हुं ॥१७॥ सावद्य कर्तव्य च्यारु भाग राज रा, त्यांमें जीवां री हिंसा अत्यन्त हो ॥ स्वा० ॥ तिण स्यूं च्यारूं बराबर जाण ने मौन साझी रह्या मतिवन्त हो ॥ स्वा० ॥ हुं ॥ १८ ॥ दान देवा मंडाइ दानशाल में, प्रदेशी नामे राजान हो ॥ स्वा० ॥ सात सहंस हुन्ता गांव खालसे, तिणरी चौथी पांती रो देवा दान हो ॥ स्वा० ॥ हुं ॥ १९ ॥ च्यार भाग कर आप न्यारो हुवो, तिण जाण्यो संसार नो माग हो ॥ स्वा० ॥ तिण तिथ न कीधी तिण राज री, रह्यो मुक्त स्यूं सन्मुख लाग हो ॥ स्वा० ॥ हुं ॥ २० ॥ ओ तो दान ओरा ने भोलाय ने, तिण पूछी न दिसै बात हो ॥ स्वा० ॥ चवदे प्रकार रो दान साध ने, ते तो राखग्रो निज पोता रे हाथ हो ॥ स्वा० ॥ हुं ॥ २१ ॥ चौथो भाग दान तालकै करी, नहीं राखग्रो पोता रे हाथ हो ॥ स्वा० ॥ तीनूं भाग ज्यूं डूणने पिण थापियो, छव काय जीवां री जाणी घात हो ॥ स्वा० ॥ हुं ॥ २२ ॥ साढा सतरे सो गांव दान तालकै, दिन २ प्रते मठेरा पांच गांव हो ॥ स्वा० ॥ त्यांरे हांसल रो धान रंधाय ने, दानशाला मंडाइ ठाम

ठाम हो ॥स्वा०॥ हूं ॥२३॥ टालवा गांव जाणीज्यो खालसी, ते तो चौथे आरे रा क्षा गांव हो ॥ स्वा० ॥ हांसल पिण आवतो जाणज्यो घणो, नेपे पण हुन्तो घणी असाम हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ २४ ॥ हांसल आयो हुवे एक एक गांव रो, दश सहंस मण रे उन्मान हो ॥ स्वा० ॥ दिन २ प्रते मठेरा पांच गांव रो, जणो पचास हजार मण धान हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ २५ ॥ लूण लेवे एक बरस तणो, पूंणा दोय क्रोड़ मण धान हो ॥ स्वा० ॥ अधिको ओछो तो आप जाणी रह्या, अटकल स्यूं कह्यो उन्मान हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥२६॥ पाणी पांच क्रोड़ मण रे आसरे, पूणां दोय क्रोड़ मण रांध्यां धान हो ॥स्वा०॥ अग्न एक क्रोड़ मण जाणज्यो लूण छै लाखां मण रे उन्मान हो ॥स्वा०॥हूं॥२७॥ नित्य धान हजारां मण रांधतां, अग्न पाणी हजारां मण जाण हो ॥ स्वा० ॥ मणा बंध लूण पिण लागतो, बाउकाय रो बहोत घमसाण हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥२८॥ फवारादिक अनेक पाणी मझे, वले बनस्पति पाणी मांय हो ॥ स्वा० ॥ धान हजारां मण रांधता, तिहां अनेक मुआ त्रसकाय हो ॥ स्वा० ॥ हूं ॥ २९ ॥ दिन २ प्रते मारे छव काय ने, वले अनन्त जीवा री करे घात हो ॥ स्वा० ॥ त्यारी हिन्सा रो पाप गीणे

नहीं, त्यांरे हिंसा धर्म री मिथ्यात हो ॥ स्वा० ॥ छं ॥ ३० ॥ एहवा दुष्ट हिंसा धर्मी जीव रा, केई जाणे छै अज्ञानी साध हो ॥ स्वा० ॥ तिण रे घट मांहि घोर अन्धार छै, ते तो नियमा निश्चे छै असाध हो ॥स्वा० ॥ छं ॥ ३१ ॥ केई जीव खुवाया में पुन्य कहै, केई मिश्र कहै छै मूढ हो ॥ स्वा० ॥ ए दोनूं बुड़ा छै बापड़ा कर २ मिथ्यात री रूढ़ हो ॥ स्वा० ॥ छं ॥ ३२ ॥ जीव खाधां खुवायां भलो जाणियां, तीनूं हीं करणा छै पाप हो ॥ स्वा० ॥ आ श्रद्धा प्ररूपी छै आप री, ते पिण देवे छै अज्ञानी उत्थाप हो ॥ स्वा० ॥ छं ॥ ३३ ॥ केइ जीव खुवावे छै तेहनां, चोखा कहै अज्ञानी परिणाम हो ॥ स्वा० ॥ कहै धर्म ने मिश्र हुवे नहीं, जीव खुवायां विन ताम हो ॥ स्वा० ॥ छं ॥ ३४ ॥ जीव खावण रा परिणाम छै अति बुरा, खुवावण रा पिण खोटा परिणाम हो ॥ स्वा० ॥ यूंही भोला ने न्हाखै भ्रम में, ले ले परिणामां रो नाम हो ॥ स्वा० ॥ छं ॥ ३५ ॥ केइ कहै जीवां ने मार्यां विना, धर्म न हुवे ताम हो ॥ स्वा० ॥ जीव मार्यां रो पाप लागै नहीं, चोखा चाहिजै निज परिणाम हो ॥ स्वा० ॥ छं ॥ ३६ ॥ केइ कहै जीवां ने मार्यां विना, मिश्र न हुवे ताम हो ॥ स्वा० ॥ ते जीव मारण री सांनी करे, ले ले परि-

थांमां रो नाम हो ॥ स्वा० ॥ ह्रूं ॥ ३७ ॥ केइ धर्म ने मिश्र करवा भणी, छव काय रो करे घमसाण हो ॥ स्वा० ॥ तिण रा परिणाम चोखा कह्यां थकां, पर जीवां रा छुटे प्राण हो ॥ स्वा० ॥ ह्रूं ॥ ३८ ॥ जिण ओलख लीधी आप री आगन्यां, ओलख लीधी आप री मौन हो ॥ स्वा० ॥ तिण आपने पिण ओलख लिया तिण रे टलसी माठी २ जून हो ॥स्वा०॥ ह्रूं ॥ ३९ ॥ तिण आज्ञा नवि ओलखी आप री, ओलखी नवि आप री मौन हो ॥ स्वा० ॥ तिण आपने पिण ओलख्या नवि, तिण रे बन्धसी माठी माठी जून हो ॥ स्वा० ॥ ह्रूं ॥ ४० ॥ केइ जिण आज्ञा बारे धर्म कहै, जिण आज्ञा मांहे कहै पाप हो ॥ स्वा० ॥ ते दोनूं बिध बुड़ा छै बापड़ा, कुड़ो कर कर अज्ञानी बिलाप हो ॥ स्वा० ॥ ह्रूं ॥ ४१ ॥ आप रो धर्म आप री अगन्यां मझै, नहीं आप री आज्ञा बार हो ॥ स्वा० ॥ जिण धर्म जिण आगन्यां बारे कहै, ते तो पूरा छै मूढ़ गिंवार हो ॥स्वा०॥ ह्रूं ॥४२॥ आप अवसर देखने बोलिया, आप अवसर देखी साझी मौन हो ॥ स्वा० ॥ जिहां आप तणी आगन्यां नवि, ते करणी छै जावक जबून हो ॥ स्वा० ॥ ह्रूं ॥ ४३ ॥ भेष धार्‌यां सावद्य दान थापियो, तिण दान स्यूं दया उत्थप जाय हो ॥ स्वा० ॥

वले दया कहे छव काय बचावियां, तिण स्यूं दान उत्पन गयो ताय हो ॥ स्वा० ॥ छू ॥ ४४ ॥ छव काय जीवा ने जीवां मारने, कोई दान देवे संसार रे मांय हो ॥ स्वा० ॥ तिण रे घट में छव काय जीवां तणी, दया रही नहीं ताय हो ॥ स्वा० ॥ छू ॥ ४५ ॥ कोई दान देवे तिण ने वरज ने, जीव बचावे छवकाय हो ॥ स्वा० ॥ ते जीव बचायां दया उत्पदे, तिण स्यूं न्यारा रह्यां सुख थाय हो ॥ स्वा० ॥ छू ॥ ४६ ॥ छव काय जीवां ने मारी दान दे, तिण दान स्यूं मुक्त न जाय हो ॥ स्वा० ॥ वले फिर बचावे छव काय ने, तिण स्यूं कर्म कटे नहीं ताय हो ॥ स्वा० ॥ छू ॥ ४७ ॥ सावद्य दान दियां स्यूं दया उत्पदे, सावद्य दया स्यूं उत्पदे अभय दान हो ॥ स्वा० ॥ सावद्य दान दया छे संसार नां, थांने ओलखे ते बुद्धिवान हो ॥ स्वा० ॥ छू ॥ ४८ ॥ त्रिविधे २ छव काय हणावो नहीं, आ दया कही जिन-राय हो ॥ स्वा० ॥ दान देणो सुपात्र ने कह्यो, तिण स्यूं मुक्त सुखे सुखे जाय हो ॥ स्वा० ॥ छू ॥ ४९ ॥ दान दया दोनूं मारग मोक्ष रा, ते तो आप री आज्ञा सहित हो ॥ स्वा० ॥ याने रूड़ी रीत आराधिया, ते गया जमारो जीत हो ॥ स्वा० ॥ छू ॥५०॥ आप तणी आज्ञा ओलखायवा, जोड़ कीधी नवां शहर मझार हो

॥ स्वा० ॥ समत अठारे ने वर्ष चमालीसे, मह्वा शुद सातम ब्रहस्पतिवार हो ॥ स्वामी जी ह्रं बलिहारी हो ह्रं बलिहारी हो श्री जिनजी री आगन्यां ॥ ५१ ॥

॥ दोहा ॥

श्री जिन धर्म जिन आज्ञा मभे, आज्ञा बारे नहीं जिन धर्म। तिण स्यूं पाप कर्म लागे नहीं, बले काटे आगला कर्म ॥ १ ॥ केई मूढ़ मिथ्याती इम कहे, जिन आज्ञा बारे जिन धर्म। जिन आज्ञा मांहि कहे पाप छे, ते भूला अज्ञानी भ्रम ॥ २ ॥ जिन आज्ञा बारे धर्म कहे, जिन आज्ञा मांहि कहे पाप। ते किण हीं सूत्र में छे नहीं, युंही करे मूढ विलाप ॥ ३ ॥ कहे धर्म तिहां देवां आगन्यां, पाप छे तिहां करां निषेध। मिश्र ठिकाणे मौण छे, एह धर्म नों भेद ॥ ४ ॥ इसड़ी करे छे परूपणा, ते करे मिश्र री थाप। ते बुड़ा खोटो मत बांधने, श्री जिन बचन उत्थाप ॥ ५ ॥ केई मिश्र तो माने नवि, माने हिंसा में एकन्त धर्म। ते पण बुड़े छे बापड़ा, भारी करे छे कर्म ॥ ६ ॥ जिन धर्म तो जिण आज्ञा मभे, आज्ञा बारे धर्म नहीं लिगार। तिण में साख सूत्र री दे कहूं, ते सुणज्यो विस्तार ॥ ७ ॥

॥ ढाल तीजी ॥

(जीव मारे ते धर्म आछो नवि एदेशी)

आज्ञा में धर्म छै जिनराज रो, आज्ञा बारे कहे ते मूढ रे। विवेक विकल शुद्ध बुद्ध विना, ते बुड़े छै कर कर रूढ़ रे॥ श्री जिन धर्म जिन आगन्यां तिहां ॥१॥ ज्ञान दर्शन चारित्र ने तप, ए तो मोक्ष रा मारग च्यार रे। यां च्यारां में जिनजी री आगन्यां, यां बिना नहीं धर्म लिगार रे॥ श्री ॥ २ ॥ यां च्यारां मांहला एक एक री, आज्ञा मांगे जिनेश्वर पास रे। तिण ने देवे जिनेश्वर आगन्यां, जब उ पामे मन में हुलास रे ॥ श्री ॥ ३ ॥ यां च्यारां विना मांगे कोई आगन्यां, तो जिनेश्वर साझे मौन रे। तो जिन आगन्यां विना करणी करे, ते करणी छै जावक जबुन रे॥ श्री ॥ ४ ॥ वीसां भेदां रूके कर्म आवतां, बारे भेद कटे बन्धिया कर्म रे। त्यांने देवे जिनेश्वर आगन्यां, ओहिज जिण भाष्यो धर्म रे॥ श्री ॥ ५ ॥ कर्म रूके तिण करणी में आगन्यां, कर्म कटे तिण करणी में जाण रे। यां दोयां करणी बिना नवि आगन्यां, ते सगली सावद्य पिछाण रे॥ श्री ॥ ६ ॥ देव अरिहन्त ने गुरु साध छै, केवली भाष्यो ते धर्म रे। ओर धर्म में नहीं जिन आगन्यां,

तिण सूं लागे छै पाप कर्म रे ॥ श्री ॥७॥ जिन भाख्या में जिनजी री आगन्यां, ओरां री भाख्या में ओर जाण रे, तिण स्यूं जीव शुद्ध गत जावै नहीं, बले पाप लागे छै आण रे ॥ श्री ॥ ८ ॥ केवली भाख्यो धर्म मंगलीक छै, ओहिज उत्तम जाण रे । शरणो पिण ल्यो इण धर्म रो, तिण में श्री जिन आज्ञा प्रमाण रे ॥ श्री ॥ ९ ॥ ठाम २ सूत्र मांहे देखल्यो, केवली भाख्यो ते धर्म रे । मौन साझे तिहां धर्म को नहीं, मौन साझे तिहां पाप कर्म रे ॥ श्री ॥ १० ॥ मौन साझणियो धर्म माठो घणो भेष धार्यां परूप्यो जाण रे । खांच २ बुड़े छै बापड़ा, ते सूत्र रा मूढ अजाण रे ॥ श्री ॥ ११ ॥ धर्म ने शुक्ल दोनूं ध्यान में, जिण आज्ञा दीधी बारूं बार रे । आर्त रौद्र ध्यान माठा बिहुं, याने ध्यावे तें आज्ञा बार रे ॥ श्री ॥ १२ ॥ तेजु पद्म शुक्ल लेश्या भली, त्यांमें जिन आगन्यां ने निर्जरा धर्म रे । तीन माठी लेश्या में आज्ञा नहीं, तिण स्यूं बन्धे छै पाप कर्म रे ॥ श्री ॥ १३ ॥ च्यार मंगल च्यार उत्तम कह्या, च्यार शरणा कह्या जिनराय रे । ए सगला छै जिन आगन्यां मझे, आज्ञा बिन आच्छी बस्तु न काय रे ॥ श्री ॥ १४ ॥ भला परिणाम में जिन आगन्यां, माठा परिणामां आज्ञा बार रे । भला परिणामां निर्जरा निपजै, माठा परि-

थामां पाप द्वार रे ॥ श्री ॥ १५ ॥ भला अध्यवसाय में जिन आगन्यां, आज्ञा वारे माठा अध्यवसाय रे। भला अध्यवसायां सूं निर्जरा हुवे, माठा अध्यवसायां सूं पाप बन्धाय रे ॥ श्री ॥ १६ ॥ ध्यान लेश्या परिणाम अध्यवसाय छे, त्यारुं भला में आज्ञा जाण रे। त्यारुं माठा में जिन आज्ञा नहीं, यांरा गुणां री करज्यो पिछाण रे ॥ श्री ॥ १७ ॥ सर्व मूल गुण ने उत्तर गुणे, देश मूल उत्तर गुण दोय रे। दोयां गुणां में जिनजी री आगन्यां, आगन्यां वारे गुण नवि कोय रे ॥ श्री ॥ १८ ॥ अर्थ परम अर्थ जिन धर्म छे, उववाई सूयगडांग मांय रे। तिण में तो जिनजी री आगन्यां, शेष अनर्थ में आज्ञा नवि ताय रे ॥ श्री ॥ १९ ॥ सर्व व्रत धर्म साधां तणो, देश व्रत श्रावक रो धर्म रे। यां दोयां धर्म में जिनजी री आगन्यां, आज्ञा वारे तो बन्धसी कर्म रे ॥ श्री ॥ २० ॥ उजलो धर्म छे जिनराज रो, ते तो श्री जिन आज्ञा सहित रे। मुगत जावा अजोग अशुद्ध कह्यो, ते तो जिन आज्ञा स्यूं विपरीत रे ॥ श्री ॥२१॥ आज्ञा लोप छांदे चाले आप रे, ते ज्ञानादिक धन सूं खाली थाय रे। आचारांग अध्ययन दूसरे, जोवो छट्ठा उद्देशा मांय रे ॥ श्री ॥ २२ ॥ आज्ञा सूं रुके ते धर्म मांहरो, एहवो चिन्तवे साधु मन मांय रे। आज्ञा

बिन करवो जिहांहिं रह्यो, रूड़ो बोलवो पिण नवि थाय रे ॥ श्री ॥ २३ ॥ आज्ञा मांहलो ते धर्म मांहरो, और सर्व मारको थाय रे, आचारांग छठा अध्ययन में, पहले उद्देशे जोय पिछाण रे ॥ श्री ॥२४॥ आगन्यां मांहे संजम नै तप, आगन्यां में दोनूं परिणाम रे। आज्ञा रहित धर्म आछो नवि, जिण कह्यो पराल समान रे ॥ श्री ॥ २५ ॥ आस्रव निर्जरा रो ग्रहण जूदो कह्यो, ते जाणसी जिन आज्ञा रो जाण रे, आचारांग चोथा अध्ययन में, पहले उद्देशे जोय पिछाण रे ॥ श्री ॥२६॥ निर्वद्य धर्म चतुर विध संघ छै, ते आज्ञा सहित बंछै अनुसन्तान रे। आचारांग चोथा अध्ययन में, तीजे उद्देशे कह्यो भगवान रे ॥ श्री ॥ २७ ॥ तीर्थंकर धर्म कीधो तिको, मोक्ष रो मारग शुद्ध वेस रे। और मोक्ष रो मारग को नहीं, पांचमें आचारांग तीजे उद्देशे रे ॥ श्री ॥ २८ ॥ जिण आज्ञा बारली करणी तणो, उद्यम करै आज्ञा नी कोय रे। आज्ञा मांहली करणी रो आलस करे, गुरु कहै शिष्य तोने दोय म होय रे ॥ श्री ॥२६॥ कुमारग तणी करणी करे, सुमारग रो आलस होय रे। ए दोनूं हीं करणी दुरगत तणी, आचारांग पांचमें अध्ययन जोय रे ॥श्री॥३०॥ जिण मारग रा अजाण ने, जिण उपदेश नीं लाभ न होय रे। आचारांग रा चोथा अध्ययन में,

तीजा उद्देशे में जोय रे ॥श्री॥३१॥ ज्यां दान सुपात्र ने दियो, तिणमें श्री जिन आज्ञा जाण रे। कुपात्र दान में आगन्यां नहीं, तिण री बुद्धवंत करज्यो पिछाण रे ॥ श्री ॥ ३२ ॥ साध विना अनेरा सर्व ने दान नहीं दे माठो जाण रे। दीधां भ्रमण करे संसार में, तिण स्यूं साध किया पच्चखाण रे ॥ श्री ॥ ३३ ॥ सूयगडांग नवमा अध्ययन में, वीसमी गाथा जोय रे ॥ वले दीधां भागे व्रत साध रो, जिन आगन्यां पिण नवि कोय रे ॥ श्री ॥ ३४ ॥ पात्र कुपात्र दोनूं ने दियां, विकल कहै दोयां में धर्म रे। धर्म हुसी सुपात्र दान में, कुपात्र ने दियां पाप कर्म रे ॥ श्री ॥ ३५ ॥ क्षेत्र कुक्षेत्र श्री जिन वर कह्यो, चोथे ठाणे ठाणाअंग मांय रे। सुक्षेत्र में दियां जिन आगन्यां, कुक्षेत्र में आज्ञा नवि काय रे ॥ श्री ॥ ३६ ॥ आहार पाणी ने वले उपधादिक, साधु देवे गृहस्थ ने कोय रे। तिण ने चौमासी दण्ड निशीथ में, पनरमें उद्देशे जोय रे ॥ श्री ॥ ३७ ॥ गृहस्थ ने दान दे तिण साधु ने, प्रायश्चित आवे किधो अधर्म रे। तो तेहिज दान गृहस्थ देवे, त्यांने किण विध होसी धर्म रे ॥ श्री ॥ ३८ ॥ असंजम छोड़ संजम आदर्यो। कुशील छोड़ हुवो ब्रह्मचार रे। अणाकल्पणीक अकार्य परहरे, कल्प आचार कियो अङ्गीकार रे ॥ श्री ॥३९॥

अज्ञान छोड़ने ज्ञान आदस्यो, माठी क्रिया छोड़ी माठी जान रे। भली क्रिया ने साधु आदरी, जिण आज्ञा स्यूं चतुर सुजाण रे ॥ श्री ॥ ४० ॥ मिथ्यात छोड़ सम्यक्त आदस्यो, अबोध छोड़ आदस्यो बोध रे। उन्मार्ग छोड़ सुन्मार्ग लियो, तिण स्यूं होसी आतमा शुद्ध रे ॥ श्री ॥ ४१ ॥ आठ छोड़े ते जिन उपदेश सूं, पाप कर्म तणो बंध जाण रे। जिण आज्ञा स्यूं आठ आदस्यां तिण सूं पामै पद निर्वाण रे ॥ श्री ॥ ४२ ॥ ठाम २ सूत्र में देखल्यो, जिण धर्म जिण आज्ञा में जाण रे। ते मूढ मिथ्याती जाणे नहीं, युहीं बुड़े छै कर कर ताण रे ॥ ४३ ॥ हूं कहि कहि ने कितरो कहूं, आगन्यां बारे नहीं धर्म मूल रे। आगन्यां बारे धर्म कहै तेहना, श्रद्धा कण बिना जाणो धूल रे ॥ श्री ॥ ४४ ॥

॥ दोहा ॥

भेषधारी बिगरायल जैन रा, ते कूड़ कपट री खान। ते आगन्यां बारे धर्म कहै, त्यारे घट में घोर अज्ञान ॥ १ ॥ त्यांने ठीक नहीं जिन धर्म री, जिण आज्ञा री पिण नवि ठीक। त्यांने परिवार विवेक विकल मिल्या, त्यांमें बाजे पूज मेठीक ॥ २ ॥ ते वड़ा ऊंट ज्युं आगी चले, लार चले जेम कतार।

मोहला बुडे छै बापड़ा, वड़ा बुढ़ा री लार ॥ ३ ॥ हिवे वलि विशेष जिन आगन्यां, ओलखजो बुद्धिवान। तिणरा भाव भेद प्रगट करूं, ते सुणज्यो श्रुत दे कान ॥ ४ ॥

॥ ढाल चौथी ॥

(जंबु कुंवर कहै परभव सुणो पदेशी)

साधु सामायक व्रत उचरे, तिण में सावद्य रा पचखाण ॥ भविक जन हो ॥ तेहिज सावद्य गृहस्थ करे, तिण में श्री जिन धर्म म जाण ॥ भविक जन हो ॥ श्री जिन धर्म जिन आगन्यां तिहां ॥ १ ॥ श्रावक सामायक पोसो करे, तिण में पिण सावद्य रा पचखाण ॥ भ० ॥ तेहिज सावद्य कामो छुटो करे, तिण में पिण जिन धर्म म जाण ॥ भ० ॥ २ ॥ श्री ॥ धर्म कहै साधु जिन आगन्यां मझे, आज्ञा बारे धर्म कहै ते मूढ़ ॥ भ० ॥ तिण श्री जिन धर्म न ओलख्यो, तिण झाली मिथ्यात री रूढ़ ॥ भ० ॥ ३ ॥ श्री ॥ जिन धर्म री जिन आगन्यां देवे, जिण धर्म सीखावे जिनराय ॥ भ० ॥ आज्ञा बारे धर्म किण सीखावियो, तिण री आज्ञा देवे कुण ताय ॥ भ० ॥ ४ ॥ श्री ॥ केइ आगन्यां बारे मिश्र कहै, केइ धर्म पिण आज्ञा बार ॥ भ० ॥ तिणने पूछि जे औ धर्म किण कह्यो, तिण रो नाम तूं चौड़े बताय ॥ भ० ॥ ५ ॥ श्री ॥ इण मिश्र ने धर्म रो कुण धणी, तिण

री आज्ञा कुण दे जोड्यां हाथ ॥ भ० ॥ देवगुरु मौन साक्ष न्यारा हुवे, कुण री उत्पत रो कुण नाथ ॥ भ० ॥ ६ ॥ श्री ॥ कोई वेश्या रा पुत्र ने पूछा करे, थारी मा कुण ने कुण तात ॥ भ० ॥ जब ऊ नांव बतावे किण बापरो, ज्यूं आ मिश्र वालां री छे बात ॥ भ० ॥ ७ ॥ श्री ॥ वेश्या रा अङ्ग जात नो उपनों, तिण रो कुण हुवे उदेरि ने बाप ॥ भ० ॥ ज्यूं आज्ञा बारे धर्म ने मिश्र री, जिण धर्म रो करसो कुण थाप ॥ भ० ॥ ८ ॥ श्री ॥ वेश्या रे अङ्ग जात नो उपनो, उण लखणो हुवे उदेरि ने वाप ॥ भ० ॥ ज्यूं जिन आगन्यां बारे धर्म ने मिश्र री, कोइ करे छे पाखण्डी थाप ॥ भ० ॥ ९ ॥ श्री ॥ कोई कहै म्हारी माता छे बांझड़ी, तिण रो हूं छूं आतम जात ॥ भ० ॥ ज्यूं मुरख कहै जिण आगन्यां बिना, करणी कीधां धर्म साखयात ॥ भ० ॥ १० ॥ श्री ॥ बापे बिण बेटो निश्चे हुवे नहीं, ज्यूं जिन आज्ञा बिना धर्म न होय ॥ भ० ॥ जिन आज्ञा होसी तो जिन धर्म छे, आज्ञा बिना धर्म न होय ॥ भ० ॥ ११ ॥ श्री ॥ मा बिन बेटा रो जन्म हुवे नहीं, जन्मे तो बांझ न होय ॥ भ० ॥ ज्यूं जिन आज्ञा बिना धर्म हुवे नहीं, जिन आज्ञा तिहां पाप न कोय ॥ भ० ॥ १२ ॥ श्री ॥ गधु पंखी ने चोर दोनूं भणो, गमतो लागे अन्धारो

रात ॥ भ० ॥ ज्यूं भारी कर्मां जीव तेह ने, जिन आज्ञा बाहर लो धर्म सुहात ॥ भ० ॥ १३ ॥ श्री ॥
काग निमोली में रति करे, भण्ड सूरा ने भीष्टो आवे दाय ॥ भ० ॥ ज्यूं काग भण्ड सूरा जेहवा मानवी, रिझे आज्ञा बाहर ली करणी मांय ॥ भ० ॥ १४ ॥ श्री ॥
चोर परदारा सेवण कुशीलिया, ते तो सेरी जोवे दिन रात ॥ भ० ॥ ज्यूं आज्ञा बाहर धर्म श्रद्धायवा, ऊंधी कर कर अज्ञानी वात ॥ भ० ॥ १५ ॥ श्री ॥
गुरुवादिक री आज्ञा मांगे नहीं, ते तो अपछन्दा अवनीत ॥ भ० ॥ ज्यूं केइ जिन आगन्यां विन करणी करे, ते पिण करणी छे विपरीत ॥ भ० ॥ १६ ॥ श्री ॥
दुष्ट जीव मंजारी ने चितरा, छल सूं करे पर जीवां री घात ॥ भ० ॥ एहवा दुष्ट मिश्र श्रद्धा रा धणी, छल स्यूं घाले विकलां रे मिथ्यात ॥ भ० ॥ १७ ॥ श्री ॥
विगरायल हुवां न्यात बारे करे, ते विगरायल फिरे न्यात बाहर ॥ भ० ॥ तेहवो धर्म जिन आगन्यां बारलो, तिण में कदे मत जाणो भली वार ॥ भ० ॥ १८ ॥ श्री ॥ न्यात बारे वे न्यात मांहे नहीं, तिणने नवि बैसाणे एक पांत ॥ भ० ॥ ज्यूं जिन आज्ञा विना धर्म अजोग छै, कीधां पूरी जे नहीं मन खांत ॥ भ० ॥ १९ ॥ श्री ॥ जो आज्ञा विन करणी में धर्म छै, तो

जिन आज्ञा रो काम न कोय ॥ भ० ॥ तो मन मानी करणी करसी तेहने, सगली करणी कियां धर्म होय ॥ भ०॥ २० ॥ श्री ॥ जिण आज्ञा बाहरली करणी कियां, पाप नहीं लागै ने धर्म थाय ॥ भ० ॥ तो किण करणी सूं पाप निपजे, तिण करणी रो तूं नांव बताय ॥ भ० ॥ २१ ॥ श्री ॥ ज्ञान दर्शन चारित्र तप, ए च्यारूं ही छै आज्ञा मांय ॥ भ० ॥ यां च्यारां मांहे तो धर्म जिण कह्यो, यां विना ओर नांव बताय ॥ भ० ॥ २२ ॥ श्री ॥ इम पूछ्यां रो जाब न उपजे झूठ बोलै बणाय बणाय ॥ भ० ॥ विकला ने विगोवण पापीया, जिण आज्ञा बारे धर्म श्रद्धाय ॥ भ० ॥ २३ ॥ श्री ॥ आगन्यां बारे धर्म कहै, ते पिण छै आगन्यां बार ॥ भ० ॥ इण सरधा सूं बुड़े छै बापड़ा, ते भव में होसी खवार ॥ भ० ॥ २४ ॥ श्री ॥ जिन आगन्यां बारे धर्म कहै, ते विगरायल जैन रा जाण ॥ भ० ॥ त्यांरी अभिन्तर फूटी छै मांहली, ते अन्धारे उगो कहै भाण ॥ भ० ॥ २५ ॥ श्री ॥ श्री जिन आगन्यां बिन करणी करे, ते तो दुरगत रा आगीवाण ॥ भ० ॥ जिन आज्ञा सहित करणी करे, तिण स्यूं पामे पद निरवाण ॥ भ० ॥ २६ ॥ श्री ॥ आज्ञा बारे धर्म कहै तेहनी, जोड़ कीधी छै खेरवा मझार ॥ भ० ॥ समत अठारे चाली-

समें, आसोज विद पांचम थावर वार ॥ भ० ॥ २७ ॥

श्री ॥ श्री जिन धर्म जिन आगन्यां तिहां ॥

॥ इति जिन आज्ञा को चोढालियो समाप्त ॥

॥ ढाल ॥

गोरी रे आंगण ढोला बाग लगावियोजी राज फूलडां रे मिस आवो हो कंवर बाई रा हो ढोला फूलां केरो गजरो गुंथाय (एदेशी)

वसु पाटोधर साहश जिनवर जिम हुग्रा भरत में हो स्वाम। कालू गणिश्वर सोहै हो मन मोहन स्वामी सुर नर भविजन सहु तणा ॥ गणपति गुणसागर ग्रहो २ नाथ क्षमा घणी। गणिवर तोरो सांवली सोम्य सूरत हद छाजति हो स्वाम। जेम चकोर चन्दा हो तिम भवि तुझ जोवे हर्षित होवे अति घणा ॥ ग० ॥ १ ॥ लय लिंशे हो स्वामी छोगां कुचे अवतरया हो स्वाम। माता भगिनो साथि हो विद्रासर मांही चमालीसे ब्रत धर्या ॥ ग० ॥ छांसठे हो पाट विराज्या लाडनूं नयर में हो स्वाम। महियल जश बहु छायो हो जगताधिप स्वामी। गुण मणि रयण अति भर्या ॥ ग० ॥ २ ॥ वच बरसे हो स्वामी, सघन झड़ी जलधार ज्यूं हो स्वाम। सुण २ भवी मन हर्षे हो चित्त तर्षे पाखण्डी तस्कर श्री जिण मग तणा ॥ ग० ॥ अष्टापद पेखी कंठीरव जिम विहतो हो स्वाम। पेचक जिम रवि देखी हो तिम गणि तुझ निरखी पाखंडी लाजे घणा ॥ ग० ॥ ३ ॥ शब्द बोध

कला गुण चातुरता अति आपरी हो स्वाम। काव्य कोष निर्युक्ति हो, वर युक्ति जमावी जिनवर वचन दीपावता ॥ ग० ॥ लोलुप नर नो मन धन मांहि जिम वस रह्यो हो स्वाम। कुञ्जर जिम वन समरे हो, तिम गणिवर तुझने भविजन अहो निश ध्यावता ॥ ग० ॥४॥ चिन्ता चूरण वर चिन्तामणि सुर तरु समो हो स्वाम। मन वांछित वर आपे हो, कांई काम कुम्भ सम काज समारण गुण नीलो ॥ ग० ॥ चातुरगढ़ मांहि रङ्ग रेला चिहुं तीर्थ ना हो स्वाम। गौ मुनि रस गौ अब्दे हो प्रौष्ट शुक्ल पूर्णिमा दिन गणि पट उत्सव भलो ॥ग०॥५॥

॥ ढाल ॥

(देशी—एक दिवस लङ्कापति क्रीड़ा नी उपनी रती०)

पंचम अर्के मनहरु, प्रगटे भिक्षु दिनकरु। अघहरु, सादृश ज्यूं जिनराजिया ए ॥१॥ दान दयादिक शोधने, भविजन तन मन बोधने। बोधने, साठे अणसण साधिया ए ॥ २ ॥ तास परम्पर सोहता, कालू जन मन मोहता। मोहता, छोगांनन्दन जक्त ने ए ॥ ३ ॥ दीन दयालु तूं खरा, पितु सम प्रगट्या इण धरा। हितकरा, वंछित पूरण भक्त ने ए ॥ ४ ॥ वाक्य सुधा वरसावंता, भवी हृदय हरषावंता। हरषावंता, गन वन क्यारी स्वामनी ए ॥ ५ ॥ कोड़ दीवाली राज ए, करिये गणि

महाराज ए । आज हे, बलिहारी तव नामनी ए ॥ ६ ॥ उगणिसै पच्चासौ वर्षे ए, गणि गुण गाया हर्षे ए। सरस ए, चम्पालाल हुलसायने ए ॥ ७ ॥

॥ ढाल ॥

(देशी—गोयमजी शिष्य सयाना लाल गोयमा)

भिक्षु गणि भर्त मझारी-लाल, स्वामजी। भवी भाग्य उदय अवतारीजी। गण नायक दीन दयालु लाल, स्वामजी। ए तो शरणागत प्रतिपालुजी ॥ गण नायक० ॥ १ ॥ जिन वच धारी सुखदायो लाल, स्वाम जी । बहु भविजन बोध पमायोजी ॥ गण० ॥ २ ॥ वर सीमा बहु विध बांधी लाल, स्वा० । शिव बधु सूं प्रीती सांधीजी ॥ ३ ॥ तसु सिद्ध पाट सुखदायो लाल, स्वा०। कालू गणि जन मन भायोजी ॥ ४ ॥ मृगराज तणी पर गाजै लाल, स्वा० । फेरू पाखण्डी मन लाजैजी ॥ ५ ॥ वज्री जिम सभा मझारो लाल, स्वा० । कर कांति अंव लियो धारोजी ॥ ६ ॥ घन रव सुण सारंग नाचै लाल, स्वा० । तव गिरा तेम भवि राचैजी ॥ ७ ॥ गणि पद पंकज सुखदायो लाल, स्वा० । मुझ मन मधुकर लोभायोजी ॥ ८ ॥ गो हय निधि चन्द सुहायो लाल, स्वा० । तप सित सप्तमी गुण गायोजी ॥ गण नायक दीन दयालु लाल, स्वामजी ॥ ९ ॥

श्री जयाचार्य कृत—

भ्रम विध्वंसन की हुण्डी।

मिथ्यात्वि क्रियाऽधिकारः ।

१ बाल तपस्वी ने सुपात्र दान, दया, शीलादि करी मोक्षमार्ग नों देश थकी आराधक कह्यो।

(साख सूत्र भगवती श० ८ उ० १०)

२, प्रथम गुणठाणा नो धणी सुमुख नामे गाथापति, सुदत्त नामा अणगार ने सुपात्र दान देई परित संसार करी मनुष्य नो आउखो बांध्यो।

(साख सूत्र सुखविपाक अ० १)

३ मेघकुमार को जीव मिथ्याती थको हाथी के भव में सुसला री दया पाली परित संसार कीधो।

(साख सूत्र ज्ञाता अ० १)

४ गोशाला नो श्रावक सकडालपुत्र, भगवान ने तिण प्रदक्षिणा देई वंदना कीधी।

(उपाशक दशांग अ० ७)

५ मिथ्याती ने भली करणी लेखे सुव्रती कह्यो छै।

(साख सूत्र उत्तराध्ययन अ० ७ गा० २०)

६ क्रियावादी सम्यग्दृष्टि (मनुष्य तिर्यंच) एक वैमाणिक टाल और आउखो न बांधे ।

(साख सूत्र भगवती ३० उ० १)

७ मिथ्याती मास २ खमण तप करै तथा सुई नी अग्र पै आवै तेतलाज अन्न नो पारणो करै, पिण सम्यग्दृष्टि ना चारित्र धर्म नी सोलमी कला पिण नावै तेहनो न्याय ।

(उत्तराध्ययन अ० ६ गा० ४४)

८ मिथ्याती मास २ खमण तप करै, पिण माया थी अनन्त संसार रुलै ।

(सूयगडांग श्रुतस्कन्ध १ अ० २ उ० १ गा० ६)

६ जीव अजीव जाणे नहीं तेहना पच्चखाण दुपच्चखाण कह्या तेहनो न्याय ।

(भगवती श० ७ उ० २)

१० भगवत दीक्षा लियां पहली, २ वर्ष झाझा (अधिका) घर में विरक्त पणे रह्या तथा काचो पाणी न भोगव्यो ।

(प्रथम आचाराङ्ग अ० ६ उ० १ गा० ११)

११ जे तत्त्व ना अजाण मिथ्याती, त्यांरो अशुद्ध प्राक्रम छै ते संसार नो कारण छै । पिण निर्जरा नो कारण नथी (पिण शुद्ध प्राक्रम तो निर्जरा

नोहिज कारण छै, संसार नो कारण नथी ।

(सूयगडाङ्ग श्रु० १ अ० ८ गा० २३)

(क) सम्यग्दृष्टि नो शुद्ध प्राक्रम छै, ते सर्व निर्जरा नो कारण पिण संसार नो कारण नथी (पिण अशुद्ध प्राक्रम तो संसार नोहिज कारण, निर्जरा नो कारण नथी ।

(सूयगडाङ्ग श्रु० १ अ० ८ गा० २४)

१२ भगवत दीख्या लेतां इम कह्यो—आज थी सर्वथा प्रकारे मोने (मुझ ने) पाप करवो कल्पै नहीं । इम कही सामायक चारित्र आदर्यो ।

(अचाराङ्ग श्रु० २ अ० १५)

१३ एक वेला रा कर्म बाकी रह्यां अनुतर विमाण में जाई उपजै ।

(भगवती श० १४ उ० ७)

१४ प्रथम गुणस्थान नी शुद्ध करणी छै, ते आज्ञा मांय छै । तेहनो न्याय ।

१५ प्रथम गुणस्थान ने निर्वद्य कर्म नो क्षयोपशम कह्यो ।

(समवायाँग समवाय १४)

१६ अप्रमादी साधु ने अणारम्भी कह्या ।

(भगवती श० १ उ० १)

१७ असोच्चाकेवली अधिकारे इम कह्यो—तपस्यादिक थी समदृष्ट पामै ।

(भगवती श० ६ उ० ३१)

१८ सूरियाभ ना अभियोगिया देवता भगवान ने वांद्यां तिवारे भगवान कह्यो—ए वन्दना रूप तुम्हारो पूराणो आचार छै १ ए तुम्हारो जीत आचार छै २ ए तुम्हारो कार्य छै ३ ए वंदना करवा योग्य छै ४ ए तुम्हारो आचरण छै ५ ए वंदना नी म्हारी आज्ञा छै ६ ।

(रायप्रसेणी देवताधिकार)

१९ खन्धक सन्यासी, गोतम ने पूछ्यो, हे गोतम ! तुम्हारा धर्माचार्य महावीर ने वांदां यावत् सेवा करां। तिवारे गोतम कह्यो, हे देवानुप्रिय ! जिम सुख होवे तिम करो पिण विलम्ब मत करो ।

(भगवती श० २ उ० १)

(क) दीक्षा नी आज्ञा पर भगवत पार्श्वनाथ 'अहं सुहं' पाठ कह्यो ।

(पुष्फ चूलिया)

२० भगवत श्री महावीर, खन्धक ने पड़िमा वहवानी आज्ञा दीधी ।

(भगवती श० २ उ० १)

२१ तामली तामसनो अनित्य चिन्तवना ।

(भगवती श० ३ उ० १)

२२ सोमल ऋषिनी शुद्ध चिन्तवना ।

(पुष्फयोपाँग अ० ३)

२३ छद्मस्थ भगवान श्रीमहावीर नी अनित्य चिन्तवना।

(भगवती श० १५)

२४ अनित्य चिन्तवना ने धर्म ध्यान को भेद कह्यो ।

(उववाई)

२५ च्यार प्रकारे देवायु वांधे—सराग संजम पाली १ श्रावक पणो पाली २ वाल तप करी ३ अकाम निर्जरा करी ४ तथा च्यार प्रकारे मनुष्यायु वांधे—प्रकृति भद्रिक १ प्रकृति विनीत २ दया परिणाम ३ अमत्सर भाव ।

(भगवती श० ८ उ० ६)

२६ गोशाले के शिष्यां कि च्यार प्रकार नो तप कह्यो— उग्र तप १ घोर तप २ रस परित्याग ३ जीभ्या इन्द्री वश कीधी ।

(ठाणाँगठाणै ४ उ० २)

२७ अन्यदर्शणी पिण सत्य वचन ने आदरो ।

(प्रश्न व्याकरण संवरद्वार २)

२८ वाण व्यन्तर ना देवता देवी वनखण्ड ने विषे बैसे, सूवे जाव क्रीड़ा करै । पूर्व भवे भला प्राक्रम

फोडव्या तेहना फल भोगवै ।

(जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति)

२६ मिथ्याती प्रकृति भद्रादि गुण थी वाणव्यन्तर देवता थाय ।

(उववाई प्रश्न ७)

दानाऽधिकारः ।

१ असंयती ने दीधां पुन्य पाप को न्याय ।

२ आणन्द श्रावक इह विधि अभिग्रह लीधो—जे हूं आज थकी अन्य तीर्थी ने अन्य तीर्थी ना देव ने तथा अन्य तीर्थी ना ग्रह्या अरिहन्त ना चैत्य साधु भ्रष्ट थया । ए तीना प्रति वांदू नहीं, नमस्कार करूं नहीं, अशनादिक देऊं नहीं, देवाऊं नहीं, बिना बतलायां एक बार तथा घणी वार बोलाऊं नहीं, तथा अशनादिक च्यार आहार देऊं नहीं । अनेरा पास थी दिराऊं नहीं । पिण एतलो आगार—राजा ने आदेशे आगार १ घणा कुटुम्ब ने समुदाय ना आदेशे आगार २ कोई एक बलवन्त ने परवश पणे आगार ३ देवता ने परवश पणे आगार ४ कुटुम्ब में बडेरो ते गुरु कहिये

तेहने आदेशे आगार ५ अटवी कान्तार ने विषे आगार ६ ए छव छण्डी आगार राख्या तो पोता री कचाई जाणी ने राख्या ।

(उपाशक दशाँग अ० १)

३ तथा रूप जे असंयती ने फासू अफासू सूझतो असूझतो अशनादिक दीधां एकान्त पाप निर्जरा, नथी ।

(भगवती श० ८ उ० ६)

४ जे साधु कष्ट उपना एम विचारे । जे अरिहन्त भगवन्त निरोगी काया ना धणी, पोता ना कर्म खपावा ने उदेरी ने तप करे । तो हूं लोच ब्रह्म-चर्यादिक अनेक रोगादिक नी वेदना, किम न सहूं । एतले मुझ ने वेदना सम भावे न सहतां, एकान्त पाप कर्म हुवे तो वेदना समभावे सहतां, एकान्त निर्जरा हुवे ।

(ठाणाँगठाणे ४ उ० ३)

५ साधु नी हेला निन्दा करतो अशनादि देवै तिहां "पड़िलाभित्ता" पाठ कह्यो ।

(भगवती श० ५ उ० ६)

(क) तथा साधु ने वंदना नमस्कार करतो थको

अशनादिक देवे तिहां पिण 'पड़िलाभित्ता" पाठ कह्यो ।

(भगवती श० ५ उ० ६)

६ पोट्टिला आर्या महासती ने अशनादिक दीधा तिहां "पडिलाभे" पाठ कह्यो । ते माटे "पडि-लाभेइ" नाम देवा नों छै पिण साधु असाधु जाणवा रो नहीं ।

(ज्ञाता अध्ययन १४)

७ साधु ने अशनादिक बहिरावे तिहां "दलएज्जा" पाठ कह्यो छै । ते माटे "दलएज्जा" कहो भावें "पडिलाभेज्जा" कहो दोनों एक अर्थ छै ।

(आचारांग श्रु० २ अ० १ उ० ७)

८ सुदर्शन सेठ शुकदेव सन्यासी ने अशनादिक आप्यो तिहां "पडिलाभमाणे" पाठ कह्यो ।

(ज्ञाता अ० ५)

९ 'पडिलाभ' नाम देवा नोहिज छै ।

(सूयगडाँग श्रु० २ अ० ५ गा० ३३)

१० आर्द्र मुनि ने विप्रां कह्यो—जो बे हजार कहतां दो हजार ब्राह्मण जिमावे ते महा पुन्य स्कन्ध उपार्जी देवता हुइ । एहवो हमारे वेद में कह्यो छै । तिवारे आर्द्र मुनि बोल्या, हे विप्रों ! जे

मांस ना गृद्धी घर २ ने विषै मार्जार नी परै भ्रमण करणहार एहवा वे हजार कुपात्र ब्राह्मणां ने नित्य जिमाड़े ते जिमाड़नहार पुरुष ते ब्राह्मणां सहित बहु वेदना छै जेहने विषे एहवी महा असह्य वेदना युक्त नरक ने विषे जाइ । अने दया रूप प्रधान धर्म नी निन्दाना करणहार हिंसादिक पञ्च आस्रव नी प्रशंसाना करणहार एहवो जो एक पिण दुःशील-वन्त निर्व्रती ब्राह्मण जिमाड़ै ते महा अन्धकारयुक्त नरक में जाइ । तो जे एहवा घणा कुपात्र ब्राह्मणा ने जिमाड़े तेहनो स्यूँ कहिवो । अने तमें कहो छो जे जिमाड़णहार देवता हुइ तो हमें कहां छां जे एहवा दातार ने असुरादिक अधम देवता नी पिण प्राप्ति नहीं, तो जे उत्तम वैमाणिक देवता नी गति नी आशा एकान्त निराशा छै ।

(सूयगडांग श्रु० २ अ० ६ गा० ४३, ४४, ४५)

११ भृगु ने पुत्रां कह्यो, वेद भण्यां त्राण शरण न हुवे तथा ब्राह्मण जिमायां तमतमा जाय । (तमतमा ते अंधारा में अंधारो) एहवो नर्क ।

(उत्तराध्ययन अ० १४ गा० १२)

१२ श्रावक पिण विप्र जिमाड़ै तेहनो न्याय च्यार प्रकारे नर्कायु बांधे तिणेकरी ओलखायो ।

(भगवती शतक ८ उ० ६)

(क) बलि श्रावक पिण विप्र जिमाड़े तिण ऊपर बालमर्णां थी अनंता नर्कां ना भाव। तेहनो न्याय।

(भगवती श० २ उ० १)

१३ जे सावद्य दान प्रशंसै तेहने छ:काय नो वध नो बंछणहार कह्यो। अने वर्त्तमान काले निषेधे त्यांने अन्तराय नो पाड़णहार कह्यो। ते माटे साधु ने वर्त्तमान में मौन राखिवे कही।

(सूयगडांग श्रु० १ अ० ११ गा० २०, २१)

१४ दान देवै लेवै, इसो वर्त्तमान देखी गुण दूषण कहणो नहीं।

(सूयगडाँग श्रु० २ अ० ५ गा० ३३)

१५ नन्दण मणिहारो दानशालादिक नो घणो आरम्भ करी मरीने पोतारी बावड़ी मेंज डेडको थयो।

(ज्ञाता अ० १३)

१६ भगवान दश प्रकार ना दान प्ररूप्या। (सावद्य निर्वद्य ओलखणा)

(ठाणाङ्ग ठाणे १०)

१७ दश प्रकार नो धर्म कह्यो (सावद्य निर्वद्य ओलखणा) अने दश प्रकार ना स्थविर कह्या लौकिक लोकोत्तर विहुं जाणवा।

(ठाणाङ्ग ठाणे १०)

१८ नंव विधि पुण्य कह्यो (सावद्य निर्वद्य ओलखणा)

(ठाणाङ्ग ठाणे ६)

१९ च्यार प्रकार ना मेह तिमहिज च्यार प्रकार ना पुरुष, कुपात्र ने कुक्षेत्र जिसा कह्या ।

(ठाणाङ्ग ठाणे ४ उ० ४)

२० शकडालपुत्र गोशाला प्रते कह्यो—हे गोशाला ! तूं मांहरा धर्माचार्य श्री महावीर ना गुणकीर्तन कस्या । ते माटे देऊं छूं तुमने पीठ, फलग, सिज्यादि । पिण धर्म तप ने अर्थे नहीं ।

(उपाशकदशा अ० ७)

२१ मृगालोढा प्रति देखने गौतम, भगवान ने पूछ्यो—हे भगवन्त ! इण पूर्व भवे कांई कुपात्र दान दीधा ? कांई कुशीलादि सेव्या ? अने कांई मांसादि भोगव्या ? तेहना फल ए नर्क समान दुःख भोगवे छै । तो जोवोनी कुपात्र दान ने चोड़े भारी कुकर्म कह्यो ।

(दुःखविपाक अ० १)

२२ ब्राह्मणां ने पापकारी क्षेत्र कह्या ।

(उत्तराध्ययन अ० १२ गा० १४)

२३ पन्द्रह कर्मदान ने व्यापार कह्या ।

(उपाशकदशा अ० १)

२४ भात पाणी थी पोष्यां धर्माधर्म नो न्याय ।

(उपाशकदशा अ० १)

२५ तुंगिया-नगरी ना श्रावकां नो उघाड़ा बारणा रो न्याय ।

(भगवती श० २ उ० ५ टीका में)

२६ श्रावक ना त्याग ते व्रत अने आगार ते अव्रत ।

(उववाई प्रश्न २० तथा सूयगडाँग श्रु० २ अ० २)

२७ दश प्रकार ना शस्त्र कह्या-तिणमें अव्रतने भाव शस्त्र कह्यो ।

(ठाणाङ्ग ठाणे १०)

२८ जे श्रावक देशथकी निवर्त्यो अने देशथकी पच्चखाण कीधा तिणे करी देवता थाय । पिण अव्रत थी देवता न हुवे ।

(भगवती श० १ उ० ८)

२९ साधु ने सामायक में वहिरायां सामायक न भांगै तेहनो न्याय ।

(भगवती श० ८ उ० ५)

३० श्रावक जिमावै तिण ऊपर महावीर पार्श्वनाथ ना साधु नो न्याय मिलै नहीं ।

(उत्तराध्ययन अ० २३ गा० १७)

३१ असोच्चा केवली, अन्यलिंगी थकां पोते तो दीक्षा

न देवै। पिण अनेरा पासे दीख्या लेवा नो उपदेश करै।

(भगवती श० ६ उ० ३१)

३२ अभिग्रहधारी अने परिहार विशुद्ध चारित्रियो कारण पड्यां अनेरा साधु ने अशनादि देवै।

(बृहत्कल्प उ० ४ बोल २७)

३३ गृहस्थादिक ने देवो साधु संसार भ्रमण नो हेतु जाणी छोड्यो।

(सूयगडाँग श्रु० १ अ० ६ गा० २३)

३४ गृहस्थी ने दान दियां अने देतां ने अनुमोद्यां चौमासी प्रायश्चित कह्यो।

(निशीथ उ० १५ बोल, ७४-७५)

३५ आणन्द ने संथारा में पिण गृहस्थ कह्यो।

(उपासकदशा अ० १)

३६ गृहस्थोनी व्यावच कियां, करायां, वलि अनुमोद्यां २८ मो अणाचार कह्यो।

(दशवैकालिक अ० ३ गा० ६)

३७ इग्यारमी पड़िमा में पिण प्रेम बंधण तूट्यो नथी।

(दशा श्रुतस्कन्ध अ० ६)

३८ पड़िमाधारी रे कल्प ऊपर अम्बड़ सन्यासी ना कल्प नो न्याय।

(उववाई प्रश्न १४)

३९ अनेरा सन्यासी नो कल्प ।

(उववाई प्रश्न १२)

४० वर्ण नाग नतुओ संग्राम में गयो तिहां एहवो अभिग्रह धार्यो—कल्पै मुझने जे पूर्वे हणै तेहने हणावो । जे न हणै तेहने न हणावो ।

(भगवती श० ७ उ० ९)

४१ जे एकेक अन्यतीर्थी थकी गृहस्थ श्रावक देश व्रते करी प्रधान अने सर्व श्रावक थकी साधु सर्व व्रते करी प्रधान ।

(उत्तराध्ययन अ० ५ गा० २०)

४२ श्रावक नी आत्मा अधिकरण कही छै। अधिकरण ते छवकाय नो शस्त्र जाणवो ।

(भगवती श० ७ उ० १)

(क) भरतजी के घोड़े ने ऋषि की उपमा दीधी। तिमहिज श्रावक ने 'समण भुया' कह्यो पिण ते देशथकी उपमा जाणवी ।

(जम्बू द्वीप प्रज्ञप्ति)

४३ च्यार व्यापार कह्या—मन, बचन, काया और उपकरण । ए च्यारूं व्यापार सन्नी पंचेन्द्रियरे कह्या। ए च्यारूं भूंडा व्यापार पिण १६ दण्डक सन्नी पंचेन्द्रियरे कह्या । अने ए च्यारूं भला व्यापार तो संयती मनुष्यांरेइज कह्या ।

(ठाणाङ्ग ठाणे ४ उ० १)

अनुकम्पाऽधिकारः ।

१ असंयती जीवां रो जीवणो वांछणो धणे ठामे वर्ज्यो ते साख रूप बोल ।

२ पोताना कर्म खपावा तथा अनेरा (आर्य क्षेत्र ना मनुष्य) ने तारिवा निमित भगवान धर्म कहे । पिण असंयती जीवा ने बचावा अर्थे नहीं ।

(सूयगडांग श्रु० २ अ० ६ गा० १७-१८)

३ पोताना पाप टालवा भणी नेमनाथ भगवान पाछा फिरया ।

(उत्तराध्ययन अ० २२ गा० १८-१६)

४ मेघकुमार नो जीव हाथी ने भवे सुसलानी अनुकम्पा कीधी, सुसला ने आर नामे करी बोलायो ।

(ज्ञाता अ० १)

(क) तथा मठाई निग्रन्थ ने छः नामे करी बोलायो ।

(भगवती श० २ उ० १)

५ पड़िमाधारी नो कल्प 'वहाय गहाय' पाठ नो अर्थ ।

(दशाश्रुतस्कन्ध अ० ७)

६ रागद्वेष आणी 'मार तथा मत मार' इम कहिवो वर्ज्यो ।

(सूयगडांग श्रु० २ अ० ५ गा० ३०)

७ गृहस्थां ने मांहो मांही लड़ता देखी—एहने हण

तथा एहने मत हण एहवो मन में पिण विचार न करै।

(आचारांग श्रु० २ अ० २ उ० १)

८ गृहस्थी ने, साधु 'अग्नि प्रज्वाल तथा बुझाव' इम न कहै।

(आचारांग श्रु० २ अ० २ उ० १)

९ दश प्रकार नी बांछा कही।

(ठाणांग ठाणै १०)

१० असंयम जीवितव्य बांछणो वर्ज्यो।

(सूयगडाङ्ग श्रु० १ अ० १० गा० २४)

११ असंयम जीवणो मरणो बांछणो वर्ज्यो।

(सूयगडाङ्ग श्रु० १ अ० १३ गा० २३)

१२ साधु असंयम जीवितव्य ने पूठ देई विचरै।

(सूयगडांग श्रु० १ अ० १५ गा० १०)

१३ असंयम जीवणो बांछणो वर्ज्यो।

(सूयगडांग श्रु० १ अ० ३ उ० ४ गा० १५)

१४ असंयम जीवणो बांछै तिणने बाल अज्ञानी कह्यो।

(सूयगडांग श्रु० १ अ० ५ उ० १ गा० ३)

१५ साधु आपणी आत्मा ने असयम जीवितव्य को अर्थी न करै।

(सूयगडांग श्रु० १ अ० १० गा० ३)

१६ असंयम जीवणो बांछणो वर्ज्यो।

(सूयगडाङ्ग श्रु० १ अ० २ उ० २ गा० १६)

१७ संयम जीवितव्य बधारवो कह्यो ।

(उत्तराध्ययन अ० ४ उ० ७)

१८ संयम जीवितव्य दुर्लभ कह्यो ।

(सूयगडांग श्रु० १ अ० २ उ० २ गा० १)

१९ मिथिला नगरी बलती देखी, नमीराजर्षि साह्मो न जोयो । वलि कह्यो म्हारे राग द्वेष करवा माटे वाह्लो दुवाह्लो एक पिण नहीं । ए मिथिलापुरी बलतां थकां मांहरो किञ्चित मात्र पिण बलै नथी । मैं तो (संयम में सुख से जीवूं अने सुख से वसूं छूं ।

(उत्तराध्ययन अ० ६ गा० १२-१३-१४-१५)

२० देवता, मनुष्य, तिर्यञ्च ए तीनां नूं माहों मांही विग्रह देखी अमुक नी जय होवो अने अमुक नी अजय होवो एह्वो वचन साधु ने बोलणो नहीं ।

(दशवैकालिक अ० ७ गा० ५०)

२१ वायरो, वर्षा, सीत, तावड़ो, राज विरोध रहित, सुभिक्ष पणो, उपद्रव रहित पणो, ए सात बोल हुवो इम साधु ने कहिवो नहीं ।

(दशवैकालिक अ० ७ गा० ५१)

२२ समुद्रपाली चोर ने मरतो देखी वैराग्य पामी चारित्र लीधो पिण चोरनी अनुकम्पा करि छोडायो नथी ।

(उत्तराध्ययन अ० २१ गा० ६)

२३ जे साधु पोतानी अनुकम्पा करै पिण अनेरा नी अनुकम्पा न करै ।

(ठाणाँग ठाणे ४ उ० ४)

२४ अन्यतीर्थी तथा गृहस्थ मार्ग भूलाने साधु मार्ग बतावै तो चौमासी प्रायश्चित आवै ।

(निशीथ उ० १३ बोल २५)

२५ हिंसादिक अकार्य करता देखी, धर्मउपदेश देई समझावणो तथा अणबोल्यो रहे तथा उठी एकान्त जाणवो कह्यो ।

(ठाणाँग ठा० ३ उ० ३)

२६ साधु अनेरा जीवां ने भय उपजावै, तो प्रायश्चित कह्यो ।

(निशीथ उ० ११ बोल ६४)

२७ गृहस्थ नी रक्षा निमित्त मन्त्रादिक कियां बलि-अनुमोद्यां चौमासी प्रायश्चित कह्यो ।

(निशीथ उ० १३ बोल १४)

२८ चुलणी पिया, पोषा में माता ने बचायिवा उठ्यो तो व्रत नियम भांग्या कह्या ।

(उपाशक दशा अ० ३)

२९ नावा में पाणी आवतो देखी साधु ने गृहस्थ प्रति बतावणो नहीं ।

(अचाराङ्ग श्रु० २ अ० ३ उ० १)

३० साधु अनुकम्पा आणी त्रस जीव ने बांधे बंधाव तथा बांधते प्रते भलो जाणै तथा बंधिया जीवां ने अनुकम्पा आणी छोड़े, छुड़ावे छोड़ते ने भलो जाणै तो प्रायश्चित कह्यो।

(निशीथ उ० १२ बोल १-२)

३१ साधु कुतूहल निमित्त त्रस जीव ने बांधे बंधावे अने छोड़े छुड़ावे तो प्रायश्चित कह्यो।

(निशीथ उ० १७ बोल १-२)

३२ जे साधु पच्चखाण भांगे अने भांगता ने अनुमोदे तो दण्ड कह्यो।

(निशीथ उ० १२ बोल ३-४

३३ गृहस्थ साधु नी अनुकम्पा आणी तैलादि मर्दन करे तिहां 'कोलुण वडियाए' पाठ कह्यो।

(आचारांग श्रु० २ अ० २ उ० १)

३४ हरिणगवेषी सुलसां नी अनुकम्पा कीधी।

(अन्तगढ़ वर्ग ३ अ० ८)

३५ कृष्णजी डोकरानी अनुकम्पा करी ईंट उपाड़ी।

(अन्तगढ़ वर्ग ३ अ० ८)

३६ हरिकेशी नी अनुकम्पा आणी यक्ष विप्रां ने ऊंधा पाड़्या।

(उत्तराध्ययन अ० १२ गा० ८ से २५ ताँई)

३७ धारणी राणी गर्भनी अनुकम्पा आणी मन गमता अशनादिक खाया।

(ज्ञाता अ० १)

३८ अभयकुमार नी अनुकम्पा आणी देवता मेह बरसायो।

(ज्ञाता अ० १)

३९ जिन ऋषि करुणा आणी रयणा देवी रे साहमो जोयो।

(ज्ञाता अ० ९)

४० प्रथम आस्रव द्वार ने करुणा रहित कह्यो।

(प्रश्न व्याकरण अ० १)

४१ करुणा सहित जिन ऋषि ने रयणा देवी दया रहित परिणामे करि हण्यो।

(ज्ञाता अ० ९)

४२ सूर्याभ देवतारी नाटक रूप भक्ति कही।

(राय प्रसेणी)

४३ यक्षे छात्रां ने ऊंधा पाड्या ते हरिकेशीनी व्यावच कही।

(उत्तराध्ययन अ० १२ गा० ३२)

४४ भगवान शीतल तेजू लब्धि करी गोशाले ने बचायो तिहां 'अणुकम्पणट्ठाए' पाठ कह्यो।

(भगवती श० १५)

लब्धि अधिकारः ।

१ वैक्रिय तथा तेजस लब्धि फोड्यां जघन्य ३ उत्कृष्टी ५ क्रिया कही ।

(पन्नवणा पद ३६)

२ आहारिक लब्धि फोड्यां जघन्य ३ उत्कृष्टी ५ क्रिया कही ।

(पन्नवणा पद ३६)

३ आहारिक लब्धि फोड़े तिणने प्रमाद आश्री अधिकरण कह्यो ।

(भगवती श० १६ उ० १)

४ जंघाचारण अथवा विद्याचारण लब्धि फोड़ी विना आलोयां मरे, तो विराधक कह्यो ।

(भगवती श० २० उ० ६)

५ वैक्रिय लब्धि फोड़े तिणने मायी कह्यो अने आलोयां विना मरे, तो विराधक कह्यो ।

(भगवती श० ३ उ० ४)

६ सात प्रकारे छद्मस्थ तथा सात प्रकारे केवली जाणीजे ।

(ठाणांग ठाणे ७)

७ अम्बड सन्यासी वैक्रिय लब्धि फोड़ी, सौ घरां

मारणो कीधो ते लोकां ने विस्मय उपजायवा भणी ।

(उववाई प्रश्न १४)

८ साधु अनेरा ने विस्मय उपजावे तो चौमासी प्रायश्चित कह्यो ।

(निशीथ उ० ११)

प्रायश्चित्ताऽधिकारः ।

---

१ सीहो अणगार मोटे २ शब्दे रोयो ।

(भगवती श० १५)

२ अइमुत्ते साधु पाणी में पात्री तराई ।

(भगवती श० ५ उ० ४)

३ रहनेमी, राजमती ने विषय रूप वचन बोल्यो ।

(उत्तराध्ययन अ० २२ गा० ३८)

४ धर्मघोषना साधां नागश्री ब्राह्मणी ने बाजार में हेली निन्दी ।

(ज्ञाता अ० १६)

५ सेलक ऋषि ने उसन्नो पासत्थो कह्यो ।

(ज्ञाता अ० ५)

६ गोशाला नो जीव विमलवाहन राजा ने सुमंगल नामे अणगार, तेजू लब्धिइं करी हणस्ये ।

(भगवती श० १५)

७ खंधक नामे अणगार संथारो कीधो तिहां 'आलोइय पडिक्कन्ते' पाठ कह्यो ।

(भगवती श० २ उ० १)

८ तिसक मुनिने छेहड़े तिहां 'आलोइय पडिक्कन्ते' पाठ कह्यो ।

(भगवती श० ३ उ० १)

९ कार्तिक सेठने छेहड़े तिहां 'आलोइय पडिक्कन्ते' पाठ कह्यो ।

(भगवती श० १८ उ० २)

१० कषाय कुशील नियण्ठा नो वर्णन ।

(भगवती श० २५ उ० ६)

११ दृष्टिवाद नो धणी पिण वचन खलावै ।

(दशवैकालिक अ० ८ गा० ५०)

१२ अनुत्तर विमाण ना देवता उदीर्ण मोह नथी, अने क्षीण मोह नथी, उपशांत मोह छै ।

(भगवती श० ५ उ० ४)

१३ हाथी अने कुंथुआ कै अपच्चखाण की क्रिया समान कही ।

(भगवती श० ७ उ० ८)

१४ सर्व भवी जीव मोक्ष जास्ये ।

(भगवती श० १२ उ० २)

१५ पुद्गलास्तिकाय में ८ स्पर्श कह्या ।

(भगवती श० १२ उ० ५)

गोशालाऽधिकारः ।

---

१ भगवन्त गौतम ने कह्यो—हे गौतम ! गोशाले मोने कह्यो तुम्हें मांहरा धर्माचार्य अने हूं आपरो धर्मान्तेवासी शिष्य । तिवारे में अङ्गीकार कीधुं ।

(भगवती श० १५)

२ सर्वानुभूति, सुनक्षत्र मुनि गोशाला ने कह्यो—हे गोशाला ! तोने भगवान मूंड्यो । तोने भगवान् प्रवर्या दीधी । तोने शिष्य कियो । तोने सिखायो अने तोने बहुश्रुति कियो । तूं भगवान सूं बूज मिथ्यात्व पडिवज्जै छै ?

(भगवती श० १५)

३ भगवान पिण कह्यो—हे गोशाला ! मैं तोने प्रवर्या दीधी ।

(भगवती श० १५)

४ गोशाला ने कुशिष्य कह्यो ।

(भगवती श० १५)

गुणकीर्त्तनाऽधिकारः ।

१ गणधरां भगवान ना गुण किया ।

(आचारांग श्रु० १ अ० ६ उ० ४ गाथा ८)

२ भगवान, साधां नां अनेक गुण किया ।

(उववाई प्रश्न २१)

३ कोणक ने माता पिता नो विनीत कह्यो ।

(उववाई)

४ श्रावकां ने धर्म ना करणहार कह्या ।

(उववाई प्रश्न २०)

५ गौतमा ना गुण कह्या ।

(भगवती श० १ उ० १)

लेश्याऽधिकारः ।

१ छद्मस्थ तीर्थङ्कर में कषाय कुशील नियण्ठो कह्यो ।

(भगवती श० २५ उ० ६

२ कषाय कुशील नियण्ठा में छः लेश्या कही ।

(भगवती श० २५ उ० ६)

३ सामायक चारित्र छेदोस्थापनीय चारित्र में छः लेश्या पावै ।

(भगवती श० २५ उ० ७)

४ छः लेश्या ना लक्षण ।

(आवश्यक अ० ४)

५ च्यार ज्ञानवाला साधु में पिण कृष्ण लेश्या कही छै ।

(पन्नवणा पद १७ उ० ३)

६ कृष्ण, नील अने कापोत लेश्या में च्यार ज्ञान नी भजना कही ।

(भगवती श० ८ उ० २)

७ कृष्णादिक तीन लेश्या प्रमादी साधु में हुवै ।

(भगवती श० १ उ० १)

८ तेजू पद्म लेश्या सरागी में हुवै ।

(भगवती श० १ उ० २)

९ संयती में पिण कृष्ण लेश्या हुवै ।

(पन्नवणा पद १७ उ० १)

वैयावृत्ति अधिकारः ।

१ यक्षे छात्रां ने ऊंधा पाड्या ते हरकेशी नी व्यावच कही ।

(उत्तराध्ययन अ० १२ गा० ३२)

२ सूर्याभ देव नी नाटक रूप भक्ति कही ।

(राय प्रसेणी)

३ भगवान ना अङ्गोपाङ्ग ना हाड भक्तिइं करी देवता ग्रहण करै।

(जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति)

४ वीस बोल करी तीर्थङ्कर गौत्र बंधे।

(ज्ञाता अ० ८)

५ साता दियां साता हुवै इम कहै ते आर्य मार्ग थी अलगो। समाधि मार्ग थी न्यारो। जिन धर्म री हेलणा रो करणहार। अल्प सुखां रे अर्थे घणा सुखां रो हारणहार। ए असत्य पक्ष अण छांडवे करी मोक्ष नहीं। लोह वाणिया नी परै घणो झूरसी।

(सूयगडाँग श्रु० १ अ० ३ उ० ४ गा० ६-७)

६ पांच स्थानके करी श्रमण निग्रन्थ ने महा निर्जरा हुवै। तिहां कुल गण संघ साधर्मी साधु ने कह्या।

(ठाणाँग ठाणे ५ उ० १)

७ दश प्रकार नी व्यावच साधुरैइज कही।

(ठाणाँग ठाणै १०)

८ पुनः दश प्रकार नी व्यावच साधुरैइज कही।

(उववाई)

९ साधु ना समुदाय ने गण संघ कह्यो।

(भगवती श० ८ उ० ८)

१० सावद्य व्यावच पर भिक्षुगणिराज कृत वार्तिका कहै छै।

११ साधु नी अर्श छेदै तिण वैद्य ने क्रिया कही।

(भगवती श० १६ उ० ३)

१२ साधु अन्य तीर्थी तथा गृहस्थ पासे अर्श छेदावै तथा कोई अनेरा साधुनी अर्श छेदतां, अनुमोदै तो मासिक प्रायश्चित आवै।

(निशीथ उ० १५ बोल ३१)

१३ साधु रो गूमड़ो गृहस्थ छेदै तो साधु ने मने करी अनुमोदनो नहीं तथा वचन अने काया करी करावै नहीं।

(आचारांग श्रु० २ अ० १३)

विनयाऽधिकारः।

---

१ दोय प्रकार नो विनय मूल धर्म कह्यो साधु ना पञ्च महाव्रत ते साधु नो विनयमूल धर्म अने श्रावक ना १२ व्रत तथा ११ पड़िमा ते श्रावक नो विनयमूल धर्म।

(ज्ञाता अ० ५)

२ पांडुराजा अने पांच पाण्डव माता कुन्तां सहित नारद में त्रिप्रदक्षिणा देई वन्दना नमस्कार कियो। घणो विनय कियो।

(ज्ञाता अ० १६)

३ जिम पांडु नारद नो विनय कियो तिमहिज कृष्ण पिण नारद नो विनय कियो।

(ज्ञाता अ० १६)

४ साधु गृहस्थादिक ने वांदतो थको अशनादिक जाचै नहीं।

(दशवैकालिक अ० ५, उ० २ गा० २६)

५ अम्बड़ ने चेला धर्माचार्य कही नमोत्थुणं गुण्यो।

(उववाई अ० १३)

६ धर्माचार्य साधु ने कह्या।

(राय प्रसेणी)

७ भरत चक्रवर्ती चक्र रत्न ने नमस्कार कियो।

(जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति)

८ तीर्थङ्कर जन्म्या ते द्रव्य तीर्थङ्कर ने इन्द्र नमोत्थुणं गुण नमस्कार करै।

(जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति)

६ इन्द्र एहवूं कह्यो जे तीर्थङ्कर नो जन्म महिमा करूं ते म्हारो जीत आचार छै पिण ये महिमा धर्म हेतु करूं इम नथी कह्यो।

(जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति)

१० तीर्थङ्कर नी माता ने इन्द्र प्रदक्षिणा देई नमस्कार करै ।

(जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति)

११ अरिहन्तादिक पांच पदांनेंज नमस्कार करवो कह्यो ।

(चन्द्र प्रज्ञप्ति गा० २)

१२ सर्वानुभूति अणगार गोशाले ने श्रमण माहण नो हिज विनय करवा कह्यो ।

(भगवती श० १५)

१३ अठारह पाप सूं निवर्ते तेहने माहण कह्यो ।

(सूयगडांग श्रु० १ अ० १६)

१४ माहण नाम साधुरोहिज कह्यो ।

(सूयगडांग श्रु० २ अ० १)

१५ त्रस स्थावर त्रिविधे २ न हणै तेहने माहण कह्यो तथा और भी अनेक लक्षण माहणना बताया ।

(उत्तराध्ययन अ० २५ गा० १६ से २६ ताँई)

१६ समण माहण सर्व अतिथि नो नाम कह्यो ।

(अनुयोग द्वार)

१७ श्रावक ने एतला नामे करी बोलाणो कह्यो—हे श्रावक ! हे उपासक ! हे धार्मिक ! हे धर्म-प्रिय ! एहवा नामा करी बोलावणो कह्यो ।

(अचाराङ्ग श्रु० २ अ० ४ उ० १)

पुण्याऽधिकारः ।

१ परलोक ने अर्थे तप नहीं करवो ।

(दशवैकालिक अ० ६ गा० ४)

२ गाढ़ा पुण्य न करै तो मरणान्ते पश्चाताप करे ।

(उत्तराध्ययन अ० १३ गा० २१)

३ पुण्यपद सांभली भरत चक्रवर्ती दीक्षा लीधी ।

(उत्तराध्ययन अ० १८ गा० ३४)

४ अकृतपुण्य ना धणी धर्म सांभली प्रमाद करै ते संसार मे भ्रमण करै ।

(प्रश्न व्याकरण अ० ५)

५ यश नो हेतु तप संयम कह्यो ।

(उत्तराध्ययन अ० ३ गा० १३)

६ आत्मा ने अयश अर्थात् असंयम करी जीव नरक में उपजै ।

(भगवती श० ४१ उ० १)

७ नरक ना हेतु ने नरक कही ।

(उत्तराध्ययन अ० ६ गा० ८)

८ मृग सरिसा अज्ञानी ने मृग कह्यो ।

(उत्तराध्ययन अ० १ गा० ५)

आस्रवाऽधिकारः ।

१ पञ्च आस्रव द्वार कह्या ।

(ठाणाँग ठा० ५ तथा समवायाङ्ग स० ५)

(क) तथा मिथ्यादृष्टि ने अरूपी कही ।

(भगवती श० १२ उ० ५)

२ पञ्च आस्रव ने कृष्ण लेश्या ना लक्षण कह्या ।

(उत्तराध्ययन अ० ३४ गा० २१-२२)

३ सम्यक् अने मिथ्यात्व ने जीव क्रिया कही ।

(ठाणाँग ठा० २ उ० १)

४ दश प्रकार नो मिथ्यात्व कह्यो ।

(ठाणाँग ठाणै १०)

५ अठारह पाप में वर्तै तेहिज जीव अनें तेहिज जीवात्मा कही ।

(भगवती श० १७ उ० २)

६ जीव अजीव परिणामी रा दश २ भेद कह्या ।

(ठाणाँग ठा० १०)

७ कषाय, जोग, दर्शन ए आत्मा कही ।

(भगवती श० १२ उ० १०),

८ उदय निष्पन्न रा तेतीस बोलां ने जीव कह्या ।

(अनुयोग द्वार)

९ उत्थानादिक ने अरूपी कह्या ।

(भगवती श० १२ उ० ५)

१० क्रोधादिक ने भाव संयोगी कह्या ।

(अनुयोग द्वार)

११ क्रोधादिक ने भाव लाभ कह्यो ।

(अनुयोग द्वार)

१२ अकुशल मनने रूंधवो कह्यो ।

(उववाई)

१३ आठा भाव थी ज्ञानादिक खपै ।

(अनुयोग द्वार)

१४ आस्रव ने, मिथ्या दर्शनादिक ने जीवरा परिणाम कह्या ।

(ठाणाँग ठा० ६)

सम्वराऽधिकारः ।

---

१ पंच सम्वर द्वार प्ररूप्या ।

(ठाणाङ्ग ठा० ५ उ० २ तथा समवायाङ्ग स० ५)

२ जीव रा ज्ञानादिक छव लक्षण कह्या ।

(उत्तराध्ययन अ० २८ गा० ११-१२)

३ चारित्र ने जीव गुण परिणाम कह्या ।

(अनुयोग द्वार)

४ सम्वर ने आत्मा कही ।

(भगवती श० १ उ० ६)

५ अठारह पाप ना विरमण ने अरूपी कह्यो ।

(भगवती श० १२ उ० ५)

६ अठारह पाप ना विरमण ने जीव द्रव्य कह्यो ।

(भगवती श० १८ उ० ४)

—:—

जीव भेदाऽधिकारः ।

१ विशिष्ट अवधि रहित ने असंज्ञीभूत कह्यो ।

(पन्नवणा पद १५ उ० १)

२ नन्हा बालक तथा बालिका ने असंज्ञीभूत कह्या ।

(पन्नवणा पद ११)

३ आठ सूक्ष्म कह्या ।

(दशवैकालिक अ० ८ गा० १५)

४ तेउ वाउ ने त्रस कह्या ।

(जीवाभिगम प्रश्न १)

५ सम्मूर्च्छिम मनुष्य ने पर्याप्ता अपर्याप्ता बिहुं नामे करी बोलाव्यो ।

(अनुयोग द्वार)

६ असुर कुमार ने उपजती वेलां बे वेद कह्या ।

(भगवती श० १३ उ० २)

—:—

आज्ञाऽधिकारः ।

१ वीतराग ना पग थकी जीव मुवां ईर्यावहि क्रिया कही ।

(भगवती श० १८ उ० ८)

२ सम्यक् मानता ने असम्यक् पिण सम्यक् हुइ ।

(आचाराङ्ग श्रु० १ अ० ५ उ० ५)

(क) तीन उदक ना लेप लगावै तिणने सबलो दोष कह्यो ।

(दशाश्रुतस्कन्ध अ० २)

३ पांच मोटी नदी एक मास में बे वार अथवा तीन वार उतरवो कल्पे नहीं ।

(बृहत्कल्प उ० ४)

४ साधु ने नदी उतरवो कह्यो ।

(आचाराङ्ग श्रु० २ अ० ३ उ० २)

५ पाणी में डूबती थकी साध्वी ने साधु बाहिर काढे तो आज्ञा उलंघे नहीं ।

(बृहत्कल्प उ० ६)

६ रात्रि में सिझायदिक ने अर्थे बाहिर जावणो कल्पे ।

(बृहत्कल्प उ० १)

—:—

शीतल आहाराऽधिकारः ।

१ ठण्डो आहार भोगवणो कह्यो ।

(उत्तराध्ययन अ० ८ गा० १२)

२ भगवन्त ठण्डो आहार लीधो कह्यो ।

(आचाराङ्ग श्रु० १ अ० ६ उ० ४)

३ धन्नो अणगार न्हाखितो आहार लियो ।

(अनुत्तर उववाई)

४ अरस निरस तथा शीतलादिक आहार भोगवो । साधु ने द्वेष न करिवो ।

(प्रश्न व्याकरण अ० १०)

—:—

सूत्र पठनाऽधिकारः ।

१ साधुनेइज सूत्र भणवा री आज्ञा दीधी ।

(प्रश्न व्याकरण अ० ७)

२ साधु सूत्र भणे तिण री मर्यादा कही ।

(व्यवहार उ० १०)

३ अन्य तीर्थी ने तथा गृहस्थी ने साधु सूत्र रूप बांचणी देवै तथा देता ने अनुमोदे तो प्रायश्चित कह्यो ।

(निशीथ उ० १६)

४ आचार्य उपाध्याय नो अणदीधी वांचणी ग्रहै, तो प्रायश्चित कह्यो ।

(निशीथ उ० १६)

५ तीन जणा वांचणी देवा अयोग्य कह्या ।

(ठाणाङ्ग ठा० ३ उ० ४)

६ श्रावकां ने अर्थ रा जाण कह्या ।

(उववाई प्रश्न २०)

७ निग्रन्थ ना प्रवचन ने सिद्धान्त कह्या ।

(सूयगडाँग श्रु० २ अ० २)

८ साधुनेइज शुद्ध धर्म ना प्ररूपणाहार कह्या ।

(सूयगडाङ्ग श्रु० १ अ० ११ गा० २४)

९ अभाजन ने सूत्र सिखावै त्याने अरिहन्त नी आज्ञा ना उलङ्घनहार कह्या ।

(सूर्य प्रज्ञप्ति पादु० २०)

१० अर्थ ने पिण 'सूय धम्मे' कह्यो ।

(ठाणाङ्ग ठा० २ उ० १)

११ सूत्र आश्री तीन प्रत्यनीक कह्या ।

(भगवती श० ८ उ० ८)

१२ पंचेन्द्रिय ना उपयोग ने श्रुत कह्यो ।

(पन्नवणा पद २३ उ० २)

१३ भावश्रुत ना १० नाम पर्यायवाची कह्या ।

(अनुयोग द्वार)

निरवद्य क्रियाऽधिकार ।

१ अठारह पाप सूं निवर्त्यां कल्याणकारी कर्म बंधै ।

(भगवती श० ७ उ० १०)

२ वन्दना करता नीच गोत्र खपावै ।

(उत्तराध्ययन अ० २९ बोल १०)

३ धर्मकथा सूं शुभ कर्म बन्धै ।

(उत्तराध्ययन अ० २९ बोल २३)

४ व्यावच्च कियां तीर्थंकर गोत्र बंधै ।

(उत्तराध्ययन अ० २९ बोल ४३)

५ तीन प्रकार शुभ दीर्घायु बंधै ।

(भगवती श० ५ उ० ६)

६ दश प्रकार कल्याणकारी कर्म बंधै ।

(ठाणाङ्ग ठाणै १०)

७ अठारह पाप सेयां कर्कश वेदनीय कर्म बंधै अने १८ पाप सूं निवर्त्यां अकर्कश वेदनीय कर्म बंधै ।

(भगवती श० ७ उ० ६)

८ बीस बोलां करी तीर्थङ्कर गोत्र बन्धै ।

(ज्ञाता अ० ८)

९ प्राण, भूत, जीव, सत्व नै दुःख न दियां साता वेदनी कर्म बन्धै ।

(भगवती श० ७ उ० ६)

१० आठ कर्म निपजावा नी करणी जुदी २ कही ।

(भगवती श० ८ उ० ६)

११ धर्म रुचि अणगार ने तुम्बो परठवा नी आज्ञा दीधी ।

(ज्ञाता अ० १६)

१२ भगवान साधां ने गोशाले सूं चर्चा करने की आज्ञा दीधी तथा सर्वानुभूति ने विनीत कह्यो ।

(भगवती श० १५)

१३ गुरु नी आज्ञा आराधे तिण ने विनीत कह्यो ।

(उत्तराध्ययन अ० १ गा० २)

—:—

निग्रन्थाहाराऽधिकार ।

१ साधु प्राशुक आहार भोगवै तो ७ कर्म ढीला पाड़े ।

(भगवती श० १ उ० ६)

२ ज्ञान दर्शन चारित्र वहवा ने अर्थे साधु आहार करै ।

(ज्ञाता अ० २)

३ साधु मोक्ष ने अर्थे आहार करै ।

(ज्ञाता अ० १८

४ साधु जयणा सूँ आहार करै तो पाप कर्म बंधै नहीं।

(दशवैकालिक अ० ४ गा० ८)

५ साधु ना आहार नी वृत्ति असावद्य कही।

(दशवैकालिक अ० ५ उ० १ गा० ६२)

६ निर्दोष आहार ना लेवणहार तथा देवणहार दोनों शुद्ध गति में जावै।

(दशवैकालिक अ० ५ उ० १ गा० १००)

७ छव स्थानकै करी साधु आहार करे तो आज्ञा उलंघै नहीं।

(ठाणाङ्ग ठा० ६)

निर्ग्रन्थ निद्राऽधिकार।

१ साधु रै यत्नाइ करी सोवतां पाप बन्धै नहीं।

(दशवैकालिक अ० ४ गा० ८)

२ 'सुत्ते' नाम निद्रावन्त नो छै।

(दशवैकालिक अ० ४)

३ कांइक सुतो कांइक जागतो स्वप्न देखै।

(भगवती श० १६ उ० ६)

४ अभिग्रह धारी साधु तीजी पौरसी में निद्रा मूकै।

(उत्तराध्ययन अ० २६ गा० १८)

५ पाणी ने किनारे निद्रादिक कार्य करना कल्पै नहीं ।

(बृहत्कल्प उ० १ बोल १६)

६ अन्तर घर में निद्रा लेणी कल्पै नहीं ।

(बृहत्कल्प उ० ३ बोल २१)

७ साधु ने भाव निद्राइं करी जागतो कह्यो ।

(आचाराङ्ग श्रु० १ अ० ३ उ० १)

—:—

एकाकि साधु-अधिकारः ।

१ ग्रामादिक का घणा निकाल पैसार हुवे तिहां घणा आगमना जाण बहुश्रुति ने पिण एकाकि पणे न कल्पै ।

(व्यवहार उ० ६)

२ ग्रामादिक तथा सरायादिक ने विषै घणा निकाल पैसार हुवे तिहां अगडसुया ते निशीथ ना अजाण त्यांने एकाकि पणे न कल्पै ।

(व्यवहार उ० ६)

३ ग्रामादिक ना जुदा २ निकाल हुवे तिहां साधु साध्वी ने भेलो रहिवो कल्पै ।

(बृहत्कल्प उ० १ बोल ११)

४ एकलो रहै तिण में आठ दोष कह्या ।

(आचारांग श्रु० १ अ० ५ उ० १)

५ सूत्र अने वय करी अव्यक्त तेह ने एकाकि पणो कल्पै नहीं । तथा सूत्र अने वय करी व्यक्त छै तिण ने पिण गुरु नी आज्ञा सूं एकाकि पणो कल्पै पिण आज्ञा बिना कल्पै नहीं ।

(अचाराङ्ग श्रु० १ अ० ५ उ० ४)

६ आठ गुणसहित ने एकल पड़िमा योग्य कह्यो श्रद्धा में सैंठो १ देव डिगायो डिगै नहीं २ सत्य-वादी ३ मेधावी (मर्यादावान) ४ बहुस्सुये (नवमा पूर्वनी तीन वत्थु नो जाण) ५ शक्तिवान ६ कलहकारी नहीं ७ धैर्यवन्त ८ उत्साह वीर्यवन्त ।

(ठाणांग ठाणै० ८)

७ साधु अने श्रावक बिहुं ने धर्मना करणहार कह्या वलि साधु अने श्रावक ने 'सुव्वया' कह्या ।

(उववाई प्रश्न २०-२१)

८ घणा साधा में पिण विकाले तथा रात्रि में एकला ने दिशा न जाणो ।

(बृहत्कल्प उ० १ बोल ४७)

९ जे ज्ञानादिक ने अर्थे गुरुवादिक नी सेवा करै तो गच्छ मध्यवर्ती साधु निपुण सखाइयो बांछै ।

(उत्तराध्ययन अ० ३२)

१० राग द्वेष ने अभावे एकलो ऊभो रहै पिण भिख्यारयां ने उल्लङ्घी न जाय ।

(उत्तराध्ययन अ० १ गा० ३३)

११ रागद्वेष नें अभावे एकलो कह्यो ।

(उत्तराध्ययन अ० १ गा० १०)

१२ जे हूं रागद्वेष ने अभावे ज्ञानादि सहित एकलो विचरस्यूं इम विचारी दीक्षा लेवे ।

(सूयगडांग श्रु० १ अ० ४ उ० १ गा० १)

१३ घर छांडी रागद्वेष ने अभावे एकलो विचरै ।

(उत्तराध्ययन अ० १५ गा० १६)

१४ तीन मनोरथ में चिन्तवे जे किवारे हूं एकलो थई दशविधि यति धर्म धारी विचरस्यूं तेह नो न्याय ।

१५ गुरु कह्यो—हे शिष्य ! तोने एकलपणो म होज्यो ।

(आचारांग श्रु० १ अ० ५ उ० ४)

उच्चार पासवणाऽधिकारः ।

१ बड़ी नीति या लघु नीति परठी ने वस्त्रे करी पूंछे नहीं तथा पूंछता ने अनुमोदे नहीं, तो प्रायश्चित कह्यो ।

(निशीथ उ० ४ बोल ३७)

२ उच्चार पासवण परठी काष्टादिके करी पूंछ्यां प्रायश्चित ।

(निशीथ उ० ४ बोल १३८)

३ उच्चार पासवण परठी ने शुचि न लेवे अथवा तठेई उच्चार ऊपर शुचि लेवे अथवा अति दूर जाई शुचि लेवे तो प्रायश्चित आवे ।

(निशीथ उ० ४ बोल १३९ से १४१)

४ दिवसे तथा रात्रि तथा विकाले पोता ना पात्रे तथा अनेरा साधु ने पात्रे उच्चार पासवण परठवी सूर्य रो ताप न पहुंचे तिहां न्हाखै तो दण्ड आवै ।

(निशीथ उ० ३ बोल ८२)

५ धन्नो सार्थवाह विजय चोर साथे एकान्ते जाई उच्चार पासवण परठ्यो कह्यो ।

(ज्ञाता अ० २)

कवित्ताऽधिकारः ।

१ तीर्थङ्कर ना जेतला साधु हुई ते ४ बुद्धिई करी तेतला पइन्ना करै ।

(नन्दी-पञ्चज्ञान वर्णन)

२ मतिज्ञान ना दोय भेद १ श्रुत निश्रित २ अश्रुत निश्रित। तिहां जे सूत्र विना ही ४ बुद्धिइं करी सूत्र सूं मिलतो अर्थ ग्रहण करै, सूत्र विना ही बुद्धि फैलावे ते अश्रुत निश्रित मतिज्ञान नो भेद कह्यो छै। वली कह्यो पूर्व्वे दीठो नहीं सुण्यो नहीं ते अर्थ तत्काल ग्रहण करै ते उत्पात नी बुद्धि अश्रुत निश्रित मतिज्ञान नो भेद कह्यो।

(साख सूत्र नन्दी)

३ जे भारत रामायणादिक मिथ्या दृष्टि ना कीधा ते मिथ्या दृष्टि रे मिथ्यात्व पणे ग्रह्या अने सम्यग्दृष्टि रे सम्यक्त पणे ग्रह्या।

(साख सूत्र नन्दी)

४ च्यार प्रकार ना काव्य कह्या १ गद्यबन्ध २ पद्य-बन्ध ३ कथाकरी ४ गायवेकरी।

(ठाणांग ठा० ४ उ० ४)

५ गाथाइं करी वाणी करी, वाणी कथी एहवुं कह्यो।

(उत्तराध्ययन अ० १३ गा० १२)

६ बाजा रै लारै ताल मेलो गायां दण्ड कह्यो।

(निशीथ उ० १७ बोल १५०)

अल्पपाप बहु निर्जराऽधिकारः ।

१ जे श्रावक साधु ने सचित अने असूझतो देवै, तो अल्प पाप बहु निर्जरा हुवे तेह नो न्याय ।

(भगवती श० ८ उ० ६)

२ साधु ने अप्राशुक अणेषणीक आहार दीधां अल्पायुष बान्धै ।

(भगवती श० ५ उ० ६)

३ साधु रै अशुद्ध आहार अभक्ष कह्यो ।

(भगवती श० १८ उ० १०)

४ श्रावक ने प्राशुक एषणीक ना देवणहार कह्या ।

(उववाई प्रश्न २०)

५ आनन्द श्रावक कह्यो कल्पै मुझ ने श्रमण निग्रन्थ ने प्राशुक एषणीक अशनादिक देवो ।

(उपासक दशा अ० १)

(क) आधा कर्मी अने असूझतो आहार ए निर्वद्य छै एहवो मन में धारै तथा प्ररूपै ते बिना आलोयां मरै तो विराधक कह्यो ।

(भगवती श० ५ उ० ६)

(ख) जे श्रावक प्राशुक एषणीक अशनादिक साधुने देई समाधि उपजावे, तो पाछो समाधिपावै ।

(भगवती श० ७ उ० १)

६ शुद्ध व्यवहार करी ने आधाकर्मी लियो निर्दोष जाणी ने तो पाप न लागे।

(सूयगडाँग श्रु० २ उ० ५ गा० ८-६)

(क) वीतराग जोयर चाले तेहथी कुक्कुटादिक ना अण्डादिक जीव हणीजे तेह ने पिण पाप न लागे। पुण्य नी क्रिया लागे शुद्ध उपयोग माटे।

(भगवती श० १८ उ० ८)

(ख) साधु ईर्यादि करी चालतां जीव हणीजे तो तेह ने पिण पाप न लागे। हणवारो कामी नहीं ते माटे।

(आचाराङ्ग श्रु० १ अ० ४ उ० ५)

७ अल्प (नहीं) वर्षा में भगवान विहार कीधो।

(भगवती श० १५)

८ अल्प प्राणी बीज छे जिहां ते स्थानकै साधु ने आहार करवो।

(उत्तराध्ययन अ० १ गा० ३५)

६ अल्प प्राण बीजादिक होवे तिण स्थान में शुद्ध करी आहार करवो।

(आचाराङ्ग श्रु० २ अ० १ उ० १)

१० साधु रे अर्थे कियो उपाश्रयो भोगवे तो महा-सावद्य क्रिया लागे। दोय पक्ष रो सेवणहार कह्यो

अने गृहस्थ पोता रे अर्थे कीधो उपाश्रयो साधु भोगावे तो एक शुद्ध पक्ष रो सेवणहार कह्यो अने अल्प सावद्य क्रिया कही ।

(आचाराङ्ग श्रु० २ अ० २ उ० २)

—:—

कपाटाऽधिकारः ।

१ किमाड़ सहित स्थानक मन करी ने पिण वांछणो नहीं ।

(उत्तराध्ययन अ० ३५)

२ थोड़ो उघाड्यो पिण किमाड़ घणो उघाड्यो हुवे तेह ने पिण "मिच्छामि दुक्कडं" देवे ।

(आवश्यक अ० ४)

३ जागां न मिले तो सूना घरने विषे रह्यो साधु किमाड़ जड़े उघाड़े नहीं ।

(सूयगडांग श्रु० १ अ० २ उ० २ गा० १३)

४ कण्टक बोंदिया ते कांटा नी साखा करी बारणो ढक्यो हुवे तो धणी नी आज्ञा मांगी ने पूंजकर द्वार उघाड़णो ।

(आचाराङ्ग श्रु० २ अ० १ उ० ५)

५ एहवो स्थानक साधु ने रहिवो नहीं जे उपाश्रय माहीं लघु नीति तथा बड़ी नीति परठण री

जागा न हुवै अने गृहस्थ वारला किमाड़ जड़ता हुवै तिवारे रात्रि ने विषे अबाधा पीड़ता किमाड़ खोलना पड़े ते खुला देखि माहे तस्कर आवै बतायां न बतायां अवगुण उपजतां कह्या सर्व दोष में प्रथम दोष किमाड़ खोलने को कह्यो तिण कारण साधु ने किमाड़ खोलनो पड़े एहवे स्थान में रहिवो नहीं ।

(आचारांग श्रु० २ अ० २ उ० २)

६ साध्वी ने उघाड़े बारने रहिवो नहीं किमाड़ न हुवै तो पोता नी पछेवड़ी बांधी ने रहिवो, पिण उघाड़े बारने रहिवो नहीं कल्पै शीलादि निमते किमाड़ जड़वो अने साधु ने उघाड़े बारने रहिवो कल्पै ।

(बृहत्कल्प उ० १)

॥ इति सम्पूर्णम् ॥

तपस्वी हुलासमलजी स्वामी को
चौढालियो ।

॥ दोहा ॥

शासन नायक वीर जिन, श्री गोयम गणधार ।
नमस्कार तसु करि कहूं, तपसी गुण अधिकार ॥१॥
श्री भिक्षु पट अष्टमे, कालू गणि सिरताज ।
तास प्रसादे प्रारंभ्यां, सिद्ध होत सब काज ॥२॥
दूषम दुषम कलिकालमें, उत्तम जीव उदार ।
अल्प अवतरे भाग्यवस, सफल करण संसार ॥३॥
रटत स्वाम जो मन थकी, कटत तास अघरास ।
घटत दुःख भवभव तणा, पटत सुख अविनाश ॥४॥
जोड़ कला नहीं दक्ष पिण, लक्ष भक्ति वर जान ।
रक्ष करण उत्साह दिल, करत मुनि गुणगान ॥५॥

॥ ढाल पहली ॥

(गोयम गुण गेहोजी—एदेशी)

प्रात उठी नित समरिये, कांई मुनि हुलास गुण-खान । स्थिर मन निश्चे थी जप्यां, कांई पामे अविचल

स्थान। जबर तप धारीजी, क्षिम्या गुण भारीजी। होजी ए तो पेखत स्मरण होत धनो अणगारीजी, साद्दश इह आरीजी ॥१॥ उगणीसै सैंतालीस में सुद, कार्तिक दशमी धन। सिद्ध योग सिंह लगन में, कांई परसव्यो पुत्र रत्न ॥ स्वाम० ॥ २ ॥ बैंगणी कुल तिलक सम, कांई तात हजारीमल। मात तीजां उर उपना, कांई लाड़नूं पुण्य प्रवल ॥३॥ रतनचन्दजी गोलछा धी मालू संग शुभ लग्न। इकसठ माह सुद पंचमी, दम्पति सम देख मगन ॥ ४ ॥ लघु वय विरक्त पणे रह्या, कांई बाल सम्बन्ध जिम धाय। कर्म बंध भय अति घणो, कांई गृहस्थ पणारे मांय ॥ ५ ॥ बैठ दुकान विक्री करै, कांई कलकत्ता बड़ा बजार। दोष होस करी टालता, कांई जेहथी न हो अघभार ॥ ६ ॥ समयसार जाणी करी, कांई करता आंशिक वैराग। घड़ी बे घड़ी ना बहु दफा, कांई आहार पाणी ना त्याग ॥७॥ लही अवसर जिन धर्म नो, कांई मर्म कहै समझाय। कर्मचारी वंग देशना, तसु बैसाणे दिल मांय ॥८॥ चन्दणमल हुलास मल, कांई फार्म नाम पिछाण। स्वार्थमय संसारथी, रह विरक्त भाव उर आण ॥ ९ ॥ एकदा देशथी आवतां, कांई रेल दुर्घटना देख। दृढ चितधारी शीलनी, कांई आयो वैराग विशेष ॥ १० ॥ यौवन वय विहुं हर्षथी,

कांई शील कर्यो अंगीकार। गुप्त वर्ष पंच दूक शय्या, कांई विजय सेठ ज्यूं धार॥ ११ ॥ नारी निज प्रति बोधवा, खप कीधी वर्ष अनुमान। आप तिरै पर तारता, एह रीति पुरुष महान ॥ १२ ॥ फाग सितर एकादशी सित, निजपुर बनिता साथ। अधिक हर्ष मन आणने, कांई संयम लियो गणि हाथ ॥ १३ ॥ धर्म खोज करवा भणी, कांई जेकोबी हार्मन जाण। आयो जर्मन देशथी, दीक्षा देखी हर्षाण ॥ १४ ॥ बहोत्तर साल वैशाख में, कांई बीदासर सुखदाय। सन्थारो घड़ी एक नो, सती मालू स्वर्ग सिधाय ॥ १५ ॥ चरण रयण भल पालता, कांई पंच सुमति धर खन्त। मन वच काया गोपता, कांई धरी उपशम चित्त शान्त ॥ १६ ॥ प्रथम ढाल दीक्षा लगे, कांई कही हर्ष मन ल्याय। आगे तपनी बारता, कांई सुणियां चित्त हुलसाय ॥ १७ ॥

॥ दोहा ॥

चारित्र सोलह साल लग, पाल्यो अधिक वैराग।
शूरवीर सिंह पर तसु, सेवे जे महाभाग्य ॥१॥
चातुर मास अरु तप तणो, दूजी ढाल विशेह।
संक्षेपे ते बरणवूं, तप कठिन कर्यो गुणगेह ॥२॥

॥ ढाल दूजी ॥

(देशी—जाड़ा के गीतनी)

प्रथम चौमासो इकोतरे, कांई गणपति साथ सुजाण। द्वितीयो चौमासो बहोतरे, कांई डुंगरगढ पहिचाण ॥ जो तपधारी मुनि नित्य वंदिये, जिम पामै शिव सुखसार ॥ १ ॥ बीकानेर तीजो कियो, उदैपुर चहोत्तर साल। पंचम पिच्योत्तर साल में, कांई रीणी भाग्य विशाल ॥ २ ॥ शहर सिरदार छिहोत्तरे, तप सेंतीस दिन शिव अंश। वेदन सही समभाव सूं कांई नाश करण अघ-वंश ॥३॥ साल सतंतर जोधपुर, कांई तप दिन पैतालीस। सौम्य सूरत मनमोहनी, जाणै जीत्या राग ने रीस ॥ ४ ॥ बीकानेर पुनः अठन्तरे, कांई लीहो उणयासी साल। चतुरमास किया चूंप सूं सुवनीत महा गुण माल ॥५॥ अस्सी आमेट बिराजिया, कांई वर्षा ऋतु सुखकार। इकासठ दिन तप आदर्यो, भवी पाम्या तन मन प्यार ॥ ६ ॥ इक्कासी वर्षा ऋतु, कांई बगड़ी पावन कीध। तप दिन इकतीस ठाय कि, कांई जगमांही जश लीध ॥ ७ ॥ साल बयासी मुनि तणो, कांई चातुरगढ़ चौमास। सिंघाड़ो गणिवर कियो, कांई तप जप अधिक विमास ॥८॥ भाग्यवली सुजाण जन, पुनि चातुरमास उदार। धर्मोद्यम हुवो अति

घणो, निर्लेप कमल जिम धार ॥ ६ ॥ साल चौरासी खिरवे, कांई पुरजन अधिक शोभाग्य। रामनवमी दिन दूसरे, शुरू लघुसिंह अधिक बैराग्य ॥१०॥ सात दिवस षट मास लग, कांई पारणा तेतीस जाण। चढत एक थी नव लगे, फिर पाछो एक पिछाण ॥ ११ ॥ साल पीचासी चाणोद में, कांई अंतरंग तपस्या ध्यान। तीजी पाटी हुई दूसरी, कांई पारणो लेप विहान ॥ १२ ॥ चर्म चौमासो छियासिये, कांई बगड़ी पुण्य अधिकाय। चौथी पाटी लघु सिंह तणी, कांई पारणो आम्बील थाय ॥१३॥ फागुन शुक्ला छट्ठने, कांई मुसाले प्रारम्भ। जिन शासन दीपावता, सहु पेखत पामे अचम्भ ॥१४॥ प्रथम चौमासो गणि संगे, कांई नव नथमलजी साथ। सिरेमलजी संग उगणासिये, पंच आप तणा विख्यात ॥१५॥ उपवास छः सौ आसरे, कांई बेला अड़सठ जाण। तेला पेंतीस बीस च्यार दिन पंचोला सतरह पहिचाण ॥१६॥ षट दिन पन्द्रह मन थकी, किया सात चतुर दशवार। आठ किया द्वादश लगे, नव सात तजी तन सार ॥१७॥ दोयबार दश थोकड़ा, मुनि इग्यारह बारह तेर। चवदह पन्द्रह सोलह किया, मुनि प्रत्येक एक एक बेर ॥१८॥ इकतीस सैंतीस तप तप्यो, बलि पेंतालीस उदार। इकसठ किया उचरंग सूं, तेह समय उपर अधिकार ॥१९॥

सोलहसौ अठावीस दिन. तप कीधो सरस विमास। दृढ वैरागी पेख जन, कहै धन धन स्वाम हुलास ॥ २० ॥
इकासो थौ सौ काल मे, कांई एक पछेवड़ो जाण। कीता दिन आतापना, लही करवा अघदल हाण ॥२१॥
दूजी ढाल विषे कह्यो, तप कठिन कियो धर प्रेम। दृढ़ व्रती धरती जिस्या, तसु जबर अखण्डित नेम ॥२२॥

॥ दोहा ॥

वेदन समभावे सही. वले चढ़ता परिणाम।
स्वर्ग सिधाया स्वामजी. आखूं तेह तमाम ॥

॥ ढाल तीजी ॥

(देशी—करवे के गीतनी)

वगड़ी जन पूरव पुण्ये जी, कांई सुरतरु सम ऋषिराय। सेवत सेवत धन भलोजी, जे परभव में सुखदाय॥ जी हो तपधारी मुनि नित वंदियांजी, कांई उभय भवे सुखथाय। १ ॥ वाग्रत वयण अमी समाजी, कांई सूत्र भणे मन कोड। सुणे हलुकर्मी जीवड़ाजी, कांई तेहने जग कुण होड ॥२॥ चौथी पाटी लघु सिंह तणीजी, कांई तप अति कठिन पिछाण। प्रेमधरी पहिला करीजी, कांई जिन कल्पी सम जाण ॥ ३ ॥ पांच मास दिन

पांचमें जी, कांई पारणा तेवीस आय। मिलिया द्रव दश सूजताजी, लहै एक द्रव मुनिराय ॥ ४ ॥ चिणा सेक्योड़ा होला गहूंजो, कांई भीजो चिणा की दाल। घाट मको खिच बाजरो जी, फुन चावल मूंग मिसाल ॥ ५ ॥ फलका जी अरु गेहूं तणाजी, कांई ढोकला थूली निहाल। एह दश द्रव मिल्या तकाजी, लिया दोषण जुग कर टाल ॥ ६ ॥ सावन शुक्ला चौथनेजी, कांई पारणो पांचनो आय। गाले गर्म प्रयोग थी जी, कांई वेदन उत्पती थाय ॥ ७ ॥ बहुल पणै अचेतना जी, कांई दोय दिनांरे मांय। लहै चेतना स्वाम भणेजी सम औषधि नाहिं देवाय ॥ ८ ॥ पूरब पुण्य उदय थकी जी, मुझ छठ दिन दर्शण थाय। अभिलाषा बहु दिन तणीजी, थई पूरण चित्त विकसाय ॥९॥ स्वाम सुपार्श्व कन्हां थकांजी, स्वामी मुझ वंदणा स्वीकार। पूछे गण-पति गण तणाजी, कांई प्रेमधरी समाचार ॥ १० ॥ कहै सिंह तप वृद्ध माननी जी, कांई कारण चाह आन्तरिक। पिण ते नहीं दिसै होवतो जी, कांई मुझ मन एह अधिक ॥ ११ ॥ भावे बहु विध भावनाजी, कांई एकन्त परभव दिष्ट। औषधि ना लहै दृढ मनेजी, कांई जपत जाप निज इष्ट ॥ १२ ॥ कछु साता पिण दस्तरोजी, कांई कारण अधिको थाय। पिण सहासिक

पणो घणोजी, कांई देखत जन मन भाय ॥ १३ ॥ सावन सुद एकादशी जी, कांई पारणो षट दिन जाण। आहार लेत तन वेदनाजी, देखी कीध च्यार पच्चखाण ॥१४॥ बारस दिन उग्यां पहलेजी, कह्यो पांचीरामजी ने सोय। भाया प्रते पूछो तुमेजी, एह उगसी तिथी कुण होय ॥ १५ ॥ दिन उदय सहु जन प्रतेजी, स्वामी दर्श दिये हितकाज। नरनारी सहु हर्ष थी जी, कांई भेव्या-मुनि गुण जिहाज ॥ १६ ॥ सावन शुक्ला द्वादशी जी, वजे प्रातः सात अनुमान। जन्म सिंह लग्न आयां थकांजी, स्वामी पहुंता स्वर्ग विमान ॥ १७ ॥ नागरिक जन स्व परमतीजी, कांई सहु मुख जय जयकार। एहवो तपसो दुर्लभेजी, कांई उपजणो पंचम आर ॥१८॥ मारुढी खराड इकसठ वणीजी, कांई जाणे देव विमान। राज लवाज सहु सज थयाजी, जन पच्चीसौ अनुमान ॥ १९ ॥ च्यार वजे शव जुलसनेजी, कांई देखत बहु-जन वृन्द। दाग चन्दण घृत खोपराजी, कांई सांसारिक एह द्वन्द ॥२०॥ तुम गुण प्रतिविम्ब सहु तणोजी, कांई अंकित दिल उरमान। पण्डित मरण थयो भलो जी, एह तीजी ढाल में जान ॥ २१ ॥

॥ दोहा ॥

सुरगुरु रस ना सहस्र तें, मुनि गुण पार न पाय ।
मुझ शक्ति सारु कहूं, मन अभिलाष पुराय ॥ १ ॥

॥ ढाल चौथी ॥

(देशी—म्हारी सासुजी रे पांच पुत्र कांई दोय देवर दोय जेठ)

विघ्न हरण मंगल करण, कांई स्वाम शरण हितकार । भवदधि तारण पोत सम, कांई वंछित फल दातारजी । तपधारी मुनिवर बारता सुणियां चित्त आनन्द थाय ॥१॥ तपस्या घोर पूरब भवे कियां, एहवी प्रकृति थाय । समय समय अघ निर्जरै, बहु कर्म हार रुंधायजी ॥ २ ॥ अध्यवसाय उज्वल घणा, रह्या ए तप कठिन निरन्त ॥ परिमल गन्ध तणी परैजी, शुद्ध भाव भला महकन्त ॥ ३ ॥ उच्च अध्यात्मिक भाव जे, तुम देखि निजर सहाय । भविजन स्मरण आत ही, उर नमण करण दिल थाय ॥ ४ ॥ वैरागी जम्बु जिस्या, कहणी न होवे अयुक्त । मेरी दृढ यह धारणा, होसी शीघ्र कर्म थी मुक्त ॥ ५ ॥ तप तन अस्त्र धार कि, कांई जिस्या खड़ग कर आन । कर्म कस निकन्दवा, कांई केशव जेम प्रधान ॥ ६ ॥ इन्द्रिय दमन जोगे करी,

भावे जग विरला शूर। व्रत रत्न दिव्य राखवा, रज्या कर्म रंज थी दूर ॥ ७ ॥ वैराग्य मय उद्यान में, कांई विचर्या मुनि शुभ ध्यान। सज्झाय ध्यान सरोवरे, कांई झुल्या महामतिवान ॥ ८ ॥ विनय विवेक विचारना, कांई आप तणो सिरीकार। पाल्यो अधिक वैराग सूं जी, कांई व्रतराज ब्रह्मचार ॥ ९ ॥ आगम अर्थ नी धारणा, वहु वांचण मन आन्तरिक। जाण्या सार सुख मुक्ताना जी, कांई अनित्य जाण्या पुद्गलिक ॥१०॥ वचन रचन ईर्या विधि, कांई वर तीखो उपयोग। विगय वहुल पणे छोड़ताजी, कांई काटण भवभव रोग ॥ ११ ॥ ध्यावे जे तुम अहो निशाजी, कांई तेह परवल पुण्य जोग। चूरण चिन्तामणि समोजी, कांई पूरण आश मनोग्य ॥ १२ ॥ श्रीजिन वीर वखाणियो, कांई धन धन्नो अणगार। गणि गुण तुम अनुमोदना, कांई करी मन अधिक उदार ॥ १३ ॥ आनन्द करण शरण भलो, तुम जीवन पर उपगार। मन्त्राक्षर जिम नाम तुम, कांई भगत जने सुखकार ॥ १४ ॥ वालक मन जिम मात में, कांई लोलुप धन अभिलाष। पतिव्रता पिउ मन वसे, जिम स्वाम नाम उरवास ॥ १५ ॥ चातक स्वाती वून्द नो, इच्छुक दृढ और न मन। स्मरण पल पल ध्यावता, जिम कुंजर कदली वन ॥ १६ ॥ देशी

च्यार कहि भलीजी, कांई चाहत आत एक चाल।
शहर कलकत्ता मांयनेजी, कांई ए कही चौथी ढाल
॥ १७ ॥ पोह सुद दूज छियासिये, धुर तीस अंग्रेजी
आज। सरस हर्ष गुण गाविया, तुम मामांगज नगराज
॥ २१ ॥